/

सातवा सस्करण

प्रसन्नता की बात है कि पूजन-पाठ-प्रदीप के षष्ठ सस्करणो को जनता ने बहुत सराहा। आवश्यक विषय बढाकर इसे अधिक उपयोगी बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया गया है। छपाई व कागज के मूल्य में बढोतरी होने पर तथा पृष्ठ बढाने पर भी मूल्य बारह रुपये ही रखा गया है—

श्रीकृष्ण जैन, प्रकाशक

—०—

पत्र व्यवहार व थोक बिक्री का स्थान—

श्रीकृष्ण जैन,

४५३७, पहाडी धीरज, (मेन रोड) देहली-११०००६

फुटकर बिक्री के स्थान —

१ श्री वीर पुस्तक मन्दिर,
श्री महावीर जी, (हिन्डौन) राजस्थान

२ श्री पवन कुमार जैन, (पुस्तक विक्रेता) कृष्णवाई आश्रम,
श्री महावीर जी (हिन्डौन) राजस्थान

३ जैन मूर्ति स्टोर,
शिखर जी, मधुवन, (गिरीडीह) बिहार

४ श्री दिगम्बर जैन सूचना केन्द्र,
दिगम्बर जैन मन्दिर के पास राजगिर (नालन्दा) बिहार

५ प० ज्ञानचन्द जैन, सोनागिर (दतिया) मध्यप्रदेश

६ ला० दुलीचन्द जैन, (पुस्तक विक्रेता)
श्री दिगम्बर जैन मन्दिर (देहरा तिजारा), (अलवर) राजस्थान

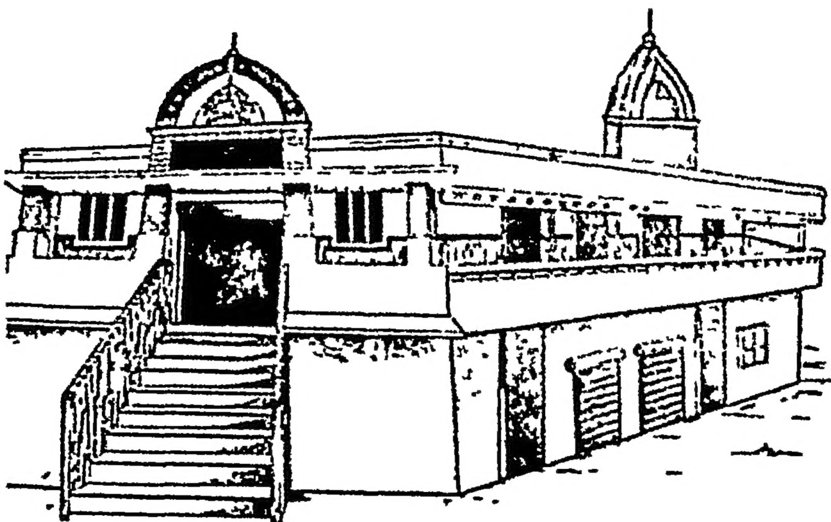
७ श्री करमचन्द जैन C/o मैसर्ज महावीर प्रसाद एण्ड सस
खादरी बाजार, देहली—११०००६ फोन २६३७३५

८ श्री मामनचन्द जैन, क्लाथ मर्चेन्ट, ४६२०, पहाडी धीरज, देहली

९ मैसर्ज केवलराम शीतल प्रसाद जैन, क्लाथ मर्चेन्ट,
४७४६, पहाडी धीरज, देहली-६ फोन ५११४४६

१० —मैनेजर, श्री दिगम्बर जैन लाल मन्दिर,
चांदनी चौक, दिल्ली-६

श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, सब्जी मण्डी देहली



यह प्राचीन दिगम्बर जैन मन्दिर है। यहाँ भट्टारक जी की गद्दी थी इसलिए यह भट्टारक जी के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ भगवान् पार्श्वनाथजी की अत्यन्त मनोज्ञ अतिशय युक्त प्रतिमा विद्यमान है।

पूज्य श्री १०८ आचार्यरत्न देशभूषणजी महाराज के सरक्षण मे इस मन्दिर का सन् १९६६ ई० मे जीर्णोद्धार हो चुका है।

प्रकाशकीय वक्तव्य

हम मद २५-३० साथी वर्षों से श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर मे नियमित रूप मे भगवान का पूजन, पाठ, स्वाध्याय आदि करते आ रहे हैं। पूजन, पाठ, स्तोत्र आदि पर पुस्तकें इससे पूर्व वहुत छपी हुई हैं फिर भी इस पुस्तक के प्रकाशन का कारण यह है कि मित्रो को निमित्त नैमित्तिक पूजन पाठ इत्यादि करने के लिये अलग-अलग पुस्तको को देखना पडता था और यह कमी हम सभी को काफी समय से खटकती थी। अत इस पुस्तक का आकार छोटा रखते हुए भी पूजन और पाठ सम्वन्धी सव आवश्यक वातो का विचार रखा गया है। यद्यपि यह विषय तो अथाह समुद्र है उसे कोई कितनी भी वडी पुस्तक का रूप दे वह उसमे समा नहीं सकता। फिर भी आवश्यक विषयो के सग्रह की पूर्ण चेष्टा को गई है। इसमे टाइप भी मोटा रखा गया है ताकि पाठको को असुविधा न हो।

यह पुस्तक इस स्वाध्याय-शाला का प्रकाशन है। जिन विद्वानो की रचनाओं का इसमे सग्रह किया गया है उनका मैं हृदय से आभारी हूँ। कागज व छपाई और जिल्द इत्यादि महँगी होने पर भी पुस्तक का मूल्य कम रखा गया है ताकि सर्वसाधारण भी इससे लाभ उठा सकें।

प्रस्तुत पुस्तक का सम्पादन कार्य श्रीमान् प० हीरालाल जी 'कौशल' अध्यक्ष, जैन विद्वत्समिति, देहली ने अपने ऊपर लेकर जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया है, मैं उनका वहुत आभारी हूँ। साथ ही मैं अपने सहयोगी डा० महावीरप्रसाद जैन, डी० एच० एस०, आयुर्वेद-रत्न को भी हार्दिक धन्यवाद देता हू जिन्होने प्रूफ सशोधन मे मेरी पूर्ण सहायता की है।

शैली श्री पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर के समस्त साथियो को भी मैं धन्यवाद देता हू जिनके उत्साह के कारण यह सग्रह तैयार होकर प्रकाशित हुआ है। आशा है सव लोग इससे पूर्ण लाभ उठायेंगे।

श्रीकृष्ण जैन

विषय सूची

स्तोत्र पाठ

अन्य तीर्थंकर पूजा (वृन्दावन)

पर्वपूजा

सलोनो पूजा

पाठ व स्तुति संग्रह

हमारे प्रकाशन

१ पूजन-पाठ-प्रदीप—दैनिक, पर्व व नैमित्तिक पूजन, पाठ, पंचस्तोत्र, मोक्षशास्त्र, दीपावली पूजन विधि, भजन, आरती, चालीसे, जाप्य मंत्र, अरहंत पासा केवली, ऋषिमण्डल स्तोत्र, सहस्रनाम स्तोत्र, शान्तिधारा, भक्ष-अभक्ष आदि का सुन्दर संग्रह। सातवां संस्करण, पृष्ठ ५६०, कपड़े की पक्की जिल्द, मूल्य (वही पुराना) मात्र १२) रु०।

सं० पं० हीरालाल जी कौशल

२ भक्तामर स्तोत्र—मूल, हिन्दी अर्थ, चार भाषा भक्तामर, अंग्रेजी अनुवाद, यंत्र, मंत्र तथा साधन विधि, महामण्डल पूजन एवं अखण्ड पाठ विधान सहित। सम्पा० पं० हीरालाल जी कौशल, पांचवां संस्करण, पृष्ठ [illegible]६२। मूल्य चार रुपये।

३ दैनिक जैन धर्मचर्या—(१[illegible]वां संस्करण) दर्शन, पूजन, स्वाध्याय आदि ५७ विषयों का सरल सुबोध विवेचन। लेखक श्री पं० अजितकुमारजी शास्त्री। पृष्ठ १[illegible], मूल्य १) ७५ रु०

४ दीपावली पूजन विधि—समस्त सुख समृद्धि की साधन रूप दीपावली पूजन की सरल विधि। सम्पा० पं० हीरालाल जी कौशल। मूल्य ५० पैसे।

५ छहढाला संग्रह—पं० दौलतराम जी कृत (शब्दार्थ, भेद तथा सार सहित), पं० बुधजनजी व पं० द्यानतरायजी के छहढाले शब्दार्थ सहित। सम्पादक पं० हीरालालजी कौशल, चतुर्थ संस्करण, पृष्ठ ६८। मूल्य १)२५

नोट—सभी पुस्तकों पर डाक खर्च अलग। वितरण के लिए सौ से अधिक पुस्तकों पर कमीशन भी दिया जाता है।

श्रीकृष्ण जैन,

मंत्री, श्री पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर,

(दर्फ़ खाने के पीछे) सब्जी मण्डी, देहली-७

सम्पादकीय

(वास्तव में 'धर्म' वस्तु के स्वभाव को कहते हैं। जो जिसका स्वभाव है, वही उसका धर्म है। आत्मा का स्वभाव है ज्ञान दर्शन।) जिस प्रकार जल का स्वभाव ठण्डा होने पर भी वह अग्नि के सयोग से गर्म हो जाता है और हाथ डालने पर जला देता है। पर वास्तव में वह उसका स्वभाव नही हैं। अग्नि का सयोग दूर होते ही यह पुनः ठण्डा हो जाता हैं। उसी प्रकार आत्म स्वभाव भी कर्मों के सयोग से विकृत हो रहा है। अनन्त ज्ञान, दर्शन तथा सुख शान्ति का स्वामी आत्मा अपने आप को भूल कर मूढ, अज्ञानी, अशान्त और दु खी बना हुआ है। वह अपने असली स्वभाव को पहिचाने तथा उसे प्राप्त करने का प्रयत्न करे तो सारी समस्या सुलझ सकती है।

आचार्यों ने सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र को ससार से छूटने का मार्ग बताया है। सच्ची श्रद्धा पूर्वक आत्मा और पर पदार्थों का पृथक्-पृथक् भान करके आत्मा के लिये उपयोगी द्रव्यो पर दृष्टि रखना तथा आत्मा का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। जिन उपायो से कर्मों को दूर करके आत्मा में निर्मलता बढे उनका आचरण करना चाहिए।

(आत्मा के निज स्वरूप को प्राप्त करने मे जो-जो उपयोगी साधन हैं व्यवहार की दृष्टि से उनको भी धर्म कहा जाता है) उनके दो भेद किये गए हैं—

१ मुनिधर्म, २ श्रावक धर्म।

ससार से विरक्त होकर आरम्भ-परिग्रह का त्याग कर ज्ञान, ध्यान और तपस्या-पूर्ण जीवन व्यतीत करना मुनिधर्म का पालन कहलाता है।

(मर्यादा-पूर्वक सयमी जीवन व्यतीत करना श्रावक धर्म है)। श्रावक अवस्था मे अशुभ कार्यों का सर्वथा त्याग नही हो सकता। श्रावक (गृहस्थ) को अपनी जीवन यात्रा के लिए व्यापार, नौकरी, खान-पान, गृह-निर्माण आदि अनेक कार्य करने पडते हैं। उन सब कार्यों मे हिंसा, असत्य आदि पाप लगना स्वाभाविक होता है। उन दोषो को दूर करने तथा आत्मा की विशुद्धि के लिए शास्त्रो मे गृहस्थो के लिए ६ आवश्यक कार्य बताये गए हैं:—

देवपूजा गुरूपास्ति. स्वाध्याय सयमस्तप ।
दान चेति गृहस्थाना षट् कर्माणि दिने-दिने ॥

१ देव-पूजा २ गुरु-उपासना ३ स्वाध्याय ४ सयम ५ तप ६ दान ये ६ आवश्यक कार्य हैं। प्रत्येक श्रावक को ये ६ कार्य प्रति दिन करने चाहियें। (इनमे देव पूजा को सर्व प्रथम कर्त्तव्य बताया गया है)। यहा अरिहन्त परमेष्ठी को देव कहा गया है।

प्रतिदिन अरिहन्त और सिद्ध भगवान् का भक्ति भाव से दर्शन-पूजन करना और यदि उनकी प्राप्ति न हो तो उनकी वीतराग प्रतिमा के सम्मुख विधि पूर्वक जिनेन्द्र का पूजन करना, देव पूजा है।

१ अरिहन्त :—(जिन्होने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय इन चार घातिया कर्मों को अपनी आत्मा से दूर कर अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, अनन्त शक्ति को प्राप्त कर लिया। जो ससार के समस्त पदार्थों को जानते तथा जीवो को सुख शान्ति का उपदेश देते हैं। उन परम औदारिक शरीर सहित तथा जन्म जरा आदि १८ दोष रहित शुद्ध आत्माओ को अरिहन्त परमेष्ठी कहते हैं) अरिहन्तो के द्वारा जीवो को उपदेश का लाभ होता है, जिससे वे अपना आत्म कल्याण करते हैं। इसलिए णमोकार मन्त्र मे उनको सिद्धो से पहले नमस्कार किया गया है। मन्दिरो मे विराजमान अधिकाश मूर्त्तिया अरिहन्त परमेष्ठी की ही होती हैं।

२ सिद्ध परमेष्ठी :—(जिन्होने आठो कर्मों को अपनी आत्मा से दूर करके आठो गुणो को प्राप्त कर लिया है। जिनके शरीर नही होता, जो ससार के सब पदार्थों को जानते तथा लोक के ऊपरी भाग में सुख से निवास करते हैं और सब कर्म दूर हो जाने से कभी भी लौट कर संसार मे वापिस नही आते, उनको सिद्ध परमेष्ठी कहते हैं।)किसी-किसी मन्दिर मे बीच मे खाली स्थान वाली जो मूर्ति होती है वह सिद्ध भगवान की मूर्ति है।(शरीर त्याग कर देने के कारण सिद्धो की मूर्ति नही बनाई जा सकती)। उसमे मात्र आकार कल्पना हमारे सामने होती है।

जब अरिहन्त और सिद्ध भगवान वीतरागी है तथा दर्शन-पूजन और भक्ति करने मे कुछ भी नही देते तो उनकी पूजन से लाभ ही क्या है? यह प्रश्न प्रत्येक हृदय मे उठ सकता है। उसका समाधान यह है कि(सभी ससारी प्राणी प्रति समय अपनी मन वचन काय की शुभ-प्रवृत्ति के कारण शुभ कर्मों और अशुभ प्रवृत्ति के कारण अशुभ कर्मो का बन्ध किया करते हैं)(जितने समय तक पूजा-पाठ आदि शुभ कार्य किये जाते है, उतने समय तक सासारिक कार्यो के त्याग और मन वचन काय की पवित्रता के कारण शुभ कर्मो का बन्ध होता है। उसके द्वारा सुख प्राप्त होता है। यद्यपि वीतरागी भगवान कुछ देते नही पर उनके गुण-स्तवन तथा पूजन-पाठ से ही यह प्राप्ति होती है। अत. इसमे वे निमित्त कारण अवश्य होते हैं।)

मन तो चचल है और इन्द्रिया उसके आधीन काम करती है। मन को प्रति समय कुछ न कुछ काम चाहिये, वह खाली नही रह सकता। यदि शुभ कार्यो की ओर उसे न लगाया जाय तो वह अशुभ प्रवृत्ति मे लगेगा और उसके कारण दुख प्राप्त होगा। (यद्यपि अशुभ और शुभ दोनो प्रकार के कर्म है तो ससार के ही कारण। यदि अशुभ कर्म लोहे की बेडी है तो शुभ कर्म सोने की बेडी के समान है। अत दोनो मे छुटकारा पाकर शुद्ध प्रवृत्ति को अपनाना चाहिये)। परन्तु अनादि काल से ससार चक्र मे फसे

प्राणियो को यह आसान भी तो नही है। जब तक आत्मा मे इतनी निर्मलता नही आ पाती कि दोनो प्रवृत्तियो से ऊपर उठकर शुद्ध प्रवृत्ति मे पहुच सके, तब तक अशुभ की अपेक्षा शुभ-प्रवृत्ति मे रहना योग्य है। उससे सासारिक दुखो मे कमी रहती है तथा आत्मोन्नति के साधन प्राप्त होने के अवसर भी मिल सकते हैं।

(दर्शन-पूजन के समय भगवान के गुणो के स्मरण से हमारा सासारिक अहकार-भाव कम होकर विनय और श्रद्धा गुण जाग्रत होता है। वास्तव मे सभी आत्माये समान हैं। वे सब गुण जो सासारिक आत्माओ मे कर्मों के कारण ढके हुये हैं, कर्मों को दूर करके उन्ही गुणो को पूर्णतया प्रकट कर लेने के कारण उन पवित्र आत्माओ को (परम+आत्मा) परमात्मा (शुद्ध+आत्मा) शुद्धात्मा तथा सिद्धात्मा, निर्विकार, निष्कलक, वीतराग आदि कहते हैं और जब हम उनके गुणो का स्मरण करते हैं तो समानता के कारण हमे अपने ही गुण याद आते हैं और यह भावना होती है कि —

तुममे हममे भेद यह, और भेद कछु नाहिं।
तुम तन तज परब्रह्म भये, हम दुखिया जग माहिं॥

अर्थ—हे भगवान्! तुम्हारी और हमारी आत्मायें और गुण समान हैं, उनमे कोई भेद है तो मात्र इतना ही है कि तुम कर्मो और उससे सम्बन्धित शरीर से छूटकर परमात्मा बन गये परन्तु हम अब भी कर्मों और शरीर के कारण ससार मे दुख उठा रहे हैं।)

(इस प्रकार जिन-गुण-स्तवन और पूजन आत्म बोध तथा जाग्रति के महान् साधन है। इससे सम्यक्त्व की निर्मलता, मन की पवित्रता तथा धर्म की प्रीति और श्रद्धा बढती है। अत. देव पूजा प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन अवश्य करनी चाहिए।)

सुप्रसिद्ध विद्वान् तथा नाटक समयसार के कर्त्ता कविवर बनारसीदास जी पूजन का फल वर्णन करते हुये लिखते हैं.—

लोपै दुरित हरै दुख सकट, आपे रोग रहित नित देह ।
पुण्य भण्डार भरै यश प्रकटै, मुकति पथ सो करै सनेह ॥
रचै सुहाग देय शोभा जग, परभव पहुचावत सुर गेह ।

कुगति बन्ध दलमलहि 'बनारसि' वीतराग पूजा फल एह ।१।

आगे कहते हैं :—

देवलोक ताको घर आगन, राजरिद्धि सेवै तसु पाय ।
ताके तन सौभाग्य आदि गुन, केलि विलास करै नित आय ॥
सो नर तुरत तिरै भव सागर, निर्मल होय मोक्ष पद पाय ।
द्रव्य भाव विधि सहित 'बनारसि' जो जिनवर पूजे मन लाय ।२।
ज्यो नर रहे रिसाय कोपकर, त्यो चिन्ता भय विमुख बखान ।
ज्यो कायर कपै रिपु देखत, त्यो दरिद्र भाजे भय मान ॥
ज्यो कुनार परिहरै पतिपति, त्यो दुर्गति छाडे पहिचान ।
हितु ज्यो विभौ तजे नहि सगन, सो सब जिन पूजा फल जान ।३।

जो जिनेन्द्र पूजे फूलनसो, सुर नैनन पूजा तसु होय ।
वन्दे भाव सहित जो जिनवर, वन्दनीक त्रिभुवन मे होय ॥
जो जिन सुजस करै जन ताकी महिमा इन्द्र करै सुर लोय ।
जो जिन ध्यान धरन बानारसि, ध्यावें मुनि ताके गुन जाय ।४।

जो सच्चा जिनेन्द्र भक्त है, वह दुखी, दरिद्री कभी रह ही नही सकता । जब जिन-बिम्ब-दर्शन सम्यग्दर्शन का साधन तथा मोक्ष का कारण है और सच्चा जिनेन्द्र-भक्त ससार मे महान् विभूतियो का स्वामी बनकर अन्त मे आत्म कल्याण मे समर्थ होता है तो प्रत्येक को अपना हृदय टटोलना चाहिये कि (यदि भक्ति करते हुये भी ससार मे दुखी रहता है तथा सुख शान्ति नही मिलती तो भक्ति मे कुछ न कुछ कमी अवश्य है) क्योकि :—

नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥

ससार मे वीतराग देव ही रक्षक हैं उनके अतिरिक्त कोई देव न कभी रक्षक हुआ और न होगा।

तथा

जन्म-जन्म कृत पाप, जन्म-कोटिमुपार्जितं।
जन्म-मृत्यु-जरा-रोग /हन्यते जिन-दर्शनात् ॥

(वीतराग भगवान के दर्शन से जन्म जन्मान्तर के पाप तथा जन्म जरा मृत्यु जैसे रोग नष्ट हो जाते हैं।)

इस प्रकार भगवान का तो अपूर्व माहात्म्य है ही उनका दर्शन पूजन करते हुये सुख शान्ति प्राप्त न होने का कारण कुमुदचन्द्राचार्य अपने 'कल्याण मन्दिर' स्तोत्र मे कहते हैं कि —

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
नून न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।
जातोऽस्मि तेन जन-बान्धव दु ख-पात्रं,
यस्मात् क्रिया प्रतिफलन्ति न भाव-शून्या ॥

अर्थ—(हे भगवन्! मैंने आपका नाम भी सुना, पूजा भी की और दर्शन भी किये, फिर भी दु ख मेरा पीछा नही छोडते, उसका कारण मुझे सिर्फ यही ज्ञात होता है कि मैंने भक्ति पूर्वक सच्चे हृदय से आपका ध्यान नही किया। केवल आडम्बर सहित और भाव शून्य क्रियाये करता रहा। यदि भाव पूर्वक भक्ति होती तो ससार से मेरा बेडा पार हो जाता।

अत अपने हृदय मे भगवान जिनेन्द्र के गुणो का शुद्ध भाव से स्मरण करके अष्ट द्रव्य से भक्तिभाव द्वारा किये गये दर्शन-पूजन अनुपम फलदायी हैं इसमे रच-मात्र भी सशय नही करना चाहिए। जितना समय श्री मन्दिर जी मे दर्शन-पूजन तथा शास्त्र-स्वाध्याय और सामायिक आदि मे व्यतीत होता है उतने समय तक सासारिक आरम्भ परिग्रह का पूर्ण त्याग कर देना चाहिए।)(घरेलू काम-काज का उस समय ध्यान भी न आवे और समस्त धार्मिक

क्रियायें अत्यन्त शान्त वातावरण मे निर्मल भावो से हों तो आत्मिक शान्ति भी मिलेगी और इसके फलस्वरूप किसी प्रकार का कोई अभाव और दु ख नही रह सकेगा ।)

'श्री समोशरण पाठ' मे पुजारी के लक्षणो का वर्णन इस प्रकार किया गया है :—

पढ़ै ग्रन्थ, सामायिक विधिदार, पाप समूहन को जु हरे ।
छहो काय के जीव विचारे, तिन पर करुणा भाव धरे ॥
उज्ज्वल चीर पहिर आभूषण, भाव-भक्ति सो नाहि टरे ।
मन वच काय लाय चरनन चित, पूजा श्री जिनराज करे ॥

(इसमे भी पुजारी को सामायिक-स्वाध्याय प्रेमी, पापो से दूर रहने वाला, षट्काय के जीवो पर दयालु बताया है तथा शुद्ध वस्त्र पहिन कर भक्तिभाव पूर्वक भगवान के चरणो की पूजा का निर्देश किया गया है । भाव-शून्य क्रिया तो निष्फल ही समझनी चाहिए ।)

इसी प्रकरण मे उक्त 'समोशरण पाठ' ग्रन्थ मे यह भी बताया है कि पुजारी कैसा नहीं होना चाहिए :—

कानो अन्ध धुन्ध टेट, फुली आंख मे सुजान,
कान कटे, नाक कटी, अग भग जानिये
खोडो कुबज पगु तोतलो सुभग अग,
अगुरी न होय मेद गांठ गूगा खासी जु प्रमानिये
फोडा कोढ़ कक्ष दाद ववेसी अदीठ जान,
वहिरा भगदर मुस्वेत दाग आनिये
व्यसन जो सात लीन, श्वास रोग, नाक वहै,
एते नर-नारिन को पूजा मनै जानिये ।

इस पर सबको गभीरता से विचार करना चाहिए ।

प्रस्तुत संग्रह

प्रस्तुत सग्रह 'पूजन-पाठ-प्रदीप' अपने नामानुरूप विषय से सम्बन्धित है। इसमे पूजन-पाठ सम्बन्धी सभी आवश्यक और उपयोगी सामग्री के सकलन का प्रयास किया गया है। कई विषय बहुत ही सुन्दर और महत्वपूर्ण हैं जिनको पढकर बडी शाति और आनन्द प्राप्त किया जा सकता है। इसके सग्रहकर्त्ता मेरे मित्र श्री लाला श्रीकृष्ण जी जैन अत्यन्त कर्मठ, लगनशील, पुरुषार्थी तथा धार्मिक व्यक्ति हैं और उनकी इस विषय मे गहरी रुचि है। श्री शास्त्र स्वाध्याय शाला का सदा से यह दृष्टिकोण रहा है कि सुन्दर से सुन्दर सामग्री को अच्छे रूप मे प्रकाशित करके अपेक्षाकृत कम मूल्य मे पाठकों तक पहुचाया जाय। शाला से इस प्रकार के कई उपयोगी प्रकाशन हो चुके हैं। यह प्रयत्न अत्यन्त सराहनीय है और इस प्रकार के कार्य मे व्यय किया गया धन सार्थक है।

आशा है यह उपयोगी प्रकाशन भी पिछले प्रकाशनो की भाति सर्वप्रिय होगा।

विनम्र,

हीरालाल जैन 'कौशल'

(साहित्यरत्न, शास्त्री, न्यायतीर्थ)

अध्यक्ष, जैन विद्वत्समिति,

देहली।

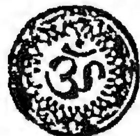
३७४६, गली जमादार

पहाड़ी धीरज देहली

आवश्यक सूचना

प्रतिष्ठित प्रतिमायें और यंत्र ही पूज्य होते हैं और उन्ही को नमस्कार करना चाहिए। (मन्दिर मे बने हुए चित्र तथा टंगी हुई तस्वीरें (मन्त्रो द्वारा) प्रतिष्ठित नहीं हैं। अत उनको नमस्कार नही करना चाहिये।)

श्री जिनेन्द्राय नम



पूजन-पाठ-प्रदीप

श्री मंगलाष्टक स्तोत्र

श्रीमन्नम्र-सुरासुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योत-रत्नप्रभा-
भास्वत्पादनखेन्दव प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।
ये सर्वे जिन-सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधव.
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥

अर्थ—शोभायुक्त और नमस्कार करते हुए देवेन्द्रो और असुरेन्द्रों के मुकुटो के चमकदार रत्नो की कान्ति से जिनके श्री चरणो के नखरूपी चन्द्रमा की ज्योति स्फुरायमान हो रही है। और जो प्रवचन रूप सागर की वृद्धि करने के लिए स्थायी चन्द्रमा हैं एवं योगिजन जिनकी स्तुति करते रहते हैं, ऐसे अरिहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय और साधु ये पाचो परमेष्ठी तुम्हारे पापो को क्षालित करें और तुम्हे सुखी करें ॥१॥

नाभेयादिजिनाः प्रशस्त-वदना. ख्याताश्चतुर्विंशति
श्रीमन्तो भरतेश्वर-प्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ।
ये विष्णु-प्रतिविष्णु-लाङ्गलधराः सप्तोत्तरा विंशतिः
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टि-पुरुषाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥२॥

अर्थ—तीनों लोकों में विख्यात और बाह्य तथा आभ्यन्तर लक्ष्मी सम्पन्न ऋषभनाथ भगवान आदि चौबीस तीर्थंकर, श्रीमान् भरतेश्वर आदि १२ चक्रवर्ती, नव नारायण नव प्रतिनारायण और नव बलभद्र ये ६३ शलाका महापुरुष तुम्हारे पापों का क्षय करें और तुम्हें सुखी करें ॥२॥

ये सर्वौषधि-ऋद्धय सुतपसा वृद्धिगता पञ्च ये,
ये चाष्टाङ्ग-महानिमित्तकुशलाश्चाष्टौ विधाश्चारिण ।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वरा,
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवरा कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥३॥

अर्थ—सभी औषधि ऋद्धिधारी, उत्तम तप ऋद्धिधारी, अवधृत क्षेत्र से भी दूरवर्ती विषय के आस्वादन दर्शन स्पर्शन घ्राण और श्रवण की समर्थता की ऋद्धि के धारी, अष्टाङ्ग महानिमित्त विज्ञता की ऋद्धि के धारी, आठ प्रकार की चारण ऋद्धि के धारी, पाच प्रकार के ज्ञान की ऋद्धि के धारी, तीन प्रकार के बलों की ऋद्धि के धारी और बुद्धि-ऋद्धीश्वर, ये सातों जगत्पूज्य गणनायक तुम्हारे पापों को क्षालित करें और तुम्हें सुखी बनावें । बुद्धि, क्रिया, विक्रिया, तप, बल, औषध, रस और क्षेत्र के भेद से ऋद्धियों के आठ भेद है ॥३॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिता,
जम्बूशाल्मलि-चैत्य-शाखिषु तथा वक्षार-रूप्याद्रिषु ।
इक्ष्वाकार-गिरौ च कुण्डल-नगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिन-गृहा कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥४॥

अर्थ—ज्योतिषी, व्यंतर, भवनवासी और वैमानिकों के आवासों के, मेरुओं, कुलाचलों, जम्बू वृक्षों और शाल्मलिवृक्षों, वक्षारों, विजयार्धों, पर्वतों इक्ष्वाकार पर्वतों, कुण्डल पर्वत, नन्दीश्वर द्वीप,

और मानुषोत्तर पर्वत (तथा रुचिक वर पर्वत) के सभी अकृत्रिम जिन चैत्यालय तुम्हारे पापो का क्षय करें और तुम्हे सुखी बनावे ॥४॥

कैलासे वृषभस्य निर्वृ तिमही वीरस्य पावापुरे।
चम्पायां वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतः
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥५॥

अर्थ—भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि-कैलाश पर्वत पर है। महावीरस्वामी की पावापुर मे है। वासुपूज्य स्वामी की चम्पापुरी मे है। नेमिनाथ स्वामी की ऊर्जयन्त पर्वत के शिखर पर और शेष वीस तीर्थंकरो की निर्वाणभूमि श्री सम्मेदशिखर पर्वत पर है, जिनका अतिशय और वैभव विख्यात है। ऐसी ये सभी निर्वाण भूमियां तुम्हे निष्पाप बनादें और तुम्हे सुखी करें ॥५॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो य केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुर-प्रवेश-महिमा सम्पादित स्वर्गिभिः
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥६॥

अर्थ—तीर्थंकारो के गर्भकल्याणक, जन्माभिषेक कल्याणक, दीक्षा कल्याणक, केवलज्ञान कल्याणक और कैवल्यपुर प्रवेश (निर्वाण) कल्याणक के देवो द्वारा सम्भावित महोत्सव तुम्हे सर्वदा माङ्गलिक रहें ॥६॥

जायन्ते जिनचक्रवर्ति-बलभृद्-भोगीन्द्र कृष्णादयो,
धर्मादेव दिगङ्गनाङ्गविलसच्छश्वद्यशश्चन्दनाः।

तद्धीना नरकादियोनिषु नरा दु ख सहन्ते ध्रुवम्,
स स्वर्गात् सुख-रामणीयकपद कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥७॥

अर्थ—दिशाओ रूपी ललनाओ के अंगो पर लगे हुये चन्दन की सुगन्धि के समान शाश्वत यश वाले जिनेन्द्र देव चक्रवर्ती, बलभद्र, भोगीन्द्र और कृष्ण आदि जिस धर्म मे उत्पन्न होते है और जिस धर्म के बिना मनुष्य नरक आदि योनियो मे अनन्त काल तक दु ख सहते रहते है, स्वर्ग आदि सुखो से युक्त रमणीय पद को प्रदान करने वाला वही धर्म तुम सबका कल्याण करें ॥७॥

सर्पो हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायन विषमपि प्रीति विधत्ते रिपुः ।
देवा यान्ति वश प्रसन्नमनसः किं वा बहु ब्रूमहे,
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥८॥

अर्थ—धर्म के प्रभाव से सर्प माला बन जाता है, तलवार फूलो समान कोमल बन जाती है, विष अमृत बन जाता है, शत्रु प्रेम करने वाला मित्र बन जाता है और देवता प्रसन्न मन से धर्मात्मा के वश मे हो जाते है। अधिक क्या कहे धर्म से ही आकाश से रत्नो की वर्षा होने लगती है वही धर्म तुम सबका कल्याण करे ॥८॥

इत्थ श्रीजिन-मङ्गलाष्टकमिदं सौभाग्य-सम्पत्करम्,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणामुष ।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैः धर्मार्थ-कामान्विताः
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय-रहिता निर्वाण-लक्ष्मीरपि ॥९॥

अर्थ—सौभाग्यसम्पत्ति को प्रदान करने वाले इस श्री जिनेन्द्र-मङ्गलाष्टक को जो सुधी तीर्थंकरो के पचकल्याणक के महोत्सवो के अवसर पर तथा प्रभातकाल मे भावपूर्वक सुनते और पढते हैं, वे

सज्जन धर्म, अर्थ और काम से समन्वित लक्ष्मी के आश्रय बनते हैं और पश्चात् अविनश्वर मुक्तिलक्ष्मी को भी प्राप्त करते हैं ॥९॥

दर्शन पाठ

तुम निरखत मुझको मिली, मेरी सम्पति आज।
कहा चक्रवर्ति-संपदा कहा स्वर्ग-साम्राज ॥ १ ॥

तुम वन्दत जिनदेवजी, नित नव मंगल होय।
विघ्न कोटि ततछिन टरै, लहहिं सुजस सब लोय ॥२॥

तुम जाने बिन नाथजी, एक स्वास के मांहि।
जन्म-मरण अठदस किये, साता पाई नांहि ॥ ३ ॥

आप बिना पूजत लहे, दुख नरक के बीच।
भूख प्यास पशुगति सही, कर्‌यो निरादर नीच ॥४॥

नाम उचारत सुख लहै, दर्शनसो अघ जाय।
पूजत पावै देव पद, ऐसे है जिनराय ॥ ५ ॥

वंदत हूँ जिनराज मैं, धर उर समताभाव।
तनधन जन---जगजालतैं धर विरागता भाव ॥ ६ ॥

सुनो अरज हे नाथ जी, त्रिभुवन के आधार।
दुष्ट कर्म का नाश-कर, वेगि करो उद्धार ॥ ७ ॥

जाचत हूँ मै आपसो, मेरे जियके मांहि।
राग द्वेष की कल्पना, क्यो हू उपजै नांहि ॥ ८ ॥

अन्तर बाहिर परिगहन, त्यागा सकल समाज।
सिंहासन पर रहत है, अन्तरीक्ष जिनराज ॥ १९ ॥

जीत भई रिपु मोहतैं, यश सूचत है तास।
देव दुन्दुभिन के सदा, बाजे बजें अकाश ॥ २० ॥

बिन अक्षर इच्छा रहित, रुचिर दिव्यध्वनि होय।
सुर नर पशु समझें सबै, संशय रहै न कोय ॥ २१ ॥

बरसत सुरतरु के कुसुम, गुंजत अलि चहुँ ओर।
फैलत सुजस सुवासना, हरषत भवि सब ठौर ॥२२॥

समुद्र बाघ अरु रोग अहि, अर्गल बंध संग्राम।
विघ्न विषम सबही टरैं, सुमरत ही जिननाम ॥२३॥

शिरीपाल, चंडाल पुनि, अञ्जन, भीलकुमार।
हाथी हरि अरि सब तरे, आज हमारी बार ॥ २४ ॥

'बुधजन' यह विनती करै, हाथ जोड़ शिर नाय।
जबलौं शिव नहिं होय तुव-भक्ति हृदय अधिकाय ॥२५॥

स्तुति

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो सरन जी।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरन जी ॥१॥

तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविध प्रकार जी।
या बुद्धि सेती निज न जाण्यो, भ्रम गिण्यो हितकार जी ॥२॥

अब विकट बन मे करम वैरी, ज्ञानधन मेरो हर्यो।
सब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्यो।३।

धन घडी यो धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभु को लख लयो॥४॥

छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासा पै धरैं।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुण जुत, कोटि रवि छवि को हरें।५।

मिट गयो तिमिर मिथ्यात्व मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो उर हर्ष ऐसो भयो, मनु रङ्क चिन्तामणि लयो॥६॥

मै हाथ जोड नवाय मस्तक, वीनऊँ तुव चरण जी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन तरण जी॥७॥

जाचूं नही सुरवास पुनि, नर-राज परिजन साथ जी।
'बुध' जाचहूँ तुव भक्ति भव भव, दीजिये शिवनाथ जी।८।

देवदर्शन स्तोत्र

दर्शन देवदेवस्य, दर्शन पापनाशनम्।
दर्शन स्वर्गसोपान, दर्शन मोक्षसाधनम्॥१॥

दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूना वदनेन च।
न चिर तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम्॥२॥

वीतरागमुखं दृष्ट्वा, पद्मराग-सम-प्रभ।
जन्म-जन्मकृत पाप दर्शनेन विनश्यति॥३॥

दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसार-ध्वान्त-नाशन ।
बोधनं चित्त-पद्मस्य, समस्तार्थ-प्रकाशनम् ।।४।।
दर्शनं जिनचद्रस्य, सद्धर्मामृत-वर्षणम् ।
जन्म-दाह-विनाशाय, वर्धन सुख-वारिधेः ।।५।।
जीवादि तत्त्वं प्रतिपादकाय, सम्यक्त्व-मुख्याष्ट-गुणार्णवाय ।
प्रशात-रूपायँ दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ।।६।।
चिदानन्दैक-रूपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्म-प्रकाशाय, नित्य सिद्धात्मने नम ।।७।।
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरण मम ।
तस्मात्कारुण्य-भावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ।।८।।
न हि त्राता न हि त्राता, न हि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ।।९।।
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे भवे ।।१०।।
जिनधर्म-विनिर्मुक्तो, मा भवेच्चक्रवर्त्यपि
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासित ।।११।।
जन्म-जन्मकृतं पापं, जन्म-कोटिमुपार्जितम् ।
जन्म-मृत्यु-जरा-रोग, हन्यते जिन-दर्शनात् ।।१२।।
अद्याभवत्सफलता नयन-द्वयस्य,
देव त्वदीय-चरणा- बुज-वीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोक-तिलक प्रतिभासते मे,
ससार-वारिधिरयं चुलुक-प्रमाणम् ।।१३।। इति ।।

पावनि कनक-घट-जुगम पूरण, कमल-कलित सरोवरो।
कल्लोल-माला-कुलित-सागर सिंहपीठ मनोहरो॥
रमणीक अमरविमान फणिपति-भवन भुवि छवि छाजई।
रुचि रतनरासि दिपत, दहन सु तेजपुंज विराजई॥३॥

ये सखि सोरह सुपने सूती सयनही।
देखे माय मनोहर, पश्चिम रयनही॥
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहँ भासियो॥

भासियो फल तिहिं चित दम्पति परम आनन्दित भये।
छहमास परि नवमास पुनि तह, रयन दिन सुखसो गये॥
गर्भावतार महत महिमा, सुनत सब सुख पावही।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावही॥४॥

२—जन्मकल्याणक

मति-श्रुत-अवधि-विराजित, जिन जब जनमियो।
तिहुंलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो।
कल्पवासि घर घंट अनाहद वज्जियो।
जोतिष-घर हरिनाद, सहज गल गज्जियो॥

गज्जियो सहजहिं सख भावन, भुवन सबद सुहावने।
वितर-निलय पटु पटहिं वज्जिय, कहत महिमा क्यो बने॥
कंपित सुरासन अवधिबल जिन-जनम निहचै जानियो।
धनराज तब गजराज मायामयी निरमय आनियो॥५॥

जोजन लाख गयंद, वदन सौ निरमये।
वदन वदन वसुदंत, दंत सर संठये॥

सर-सर सौ-पनवीस, कमलिनी छाजही ।
कमलिनि कमलिनि कमल पचीस विराजहीं ।।
राजही कमलिनि कमलऽठोतर सौ मनोहर दल बने ।
दल दलहि अपछर नटहि नवरस, हाव भाव सुहावने ।।
मणि कनक-किकणि वर विचित्र सु अमर-मण्डप सोहये ।
घन घट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये ।।६।।

तिहि करि हरि चढ़ि आयउ सुर-परिवारियो ।
पुरहिं प्रदच्छन दे त्रय, जिन जयकारिग्रो ।।
गुप्त जाय जिन-जिननिहि, सुखनिद्रा रची ।
मायामई सिसु राखि तौ, जिन आन्यो सची ।।
आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न हूजिये ।
तब परम हरषित हृदय हरिनें सहस लोचन[1] पूजिये ।।
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इन्द्र, उछग धरि प्रभु लीनऊ ।
ईशान इन्द्र सुचद्र छवि सिर, छत्र प्रभुके दीनऊ ।।७।।

सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुइ ढारही ।
शेष शक्र जयकार, शबद उच्चारही ।।
उच्छव-सहित चतुरविधि सुर हरषित भये ।
जोजन सहस निन्यानवै, गगन उलघि गये ।।
लँघि गये सुरगिरि जहा पाडुक, वन विचित्र विराजही ।
पाडुक-शिला तहँ अर्द्धचन्द्र समान, मणि छवि छाजही ।।
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊँची गनी ।
वर अष्ट-मगल-कनक कलशनि सिहपीठ सुहावनी ।।८।।

---

१ पूजिये अर्थात् सहस्र नेत्र बनाकर पूजा की ।

रचि मणिमंडप शोभित, मध्य सिंहासनो ।
थाप्यो पूरब मुख तहँ प्रभु कमलासनो ॥
वाजहिं ताल मृदंग, वेणु वीणा घने ।
दुंदुभि प्रमुख मधुर धुनि, अवर जु वाजने ॥
वाजने वाजहिं सची सब मिल, धवल मंगल गावही ।
पुनि करहिं नृत्य सुरांगना, सब देव कौतुक धावही ॥
भरि छीरसागर जल जु हाथहिं हाथ सुरगिरि ल्यावही ।
सौधर्म अरु ईशान इन्द्र सु कलश ले प्रभु न्हावही ॥९॥

वदन उदर अवगाह, कलशगत जानिये ।
एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिये ॥
सहस-अठोतर कलसा, प्रभुके सिर ढरे ।
पुनि सिंगार प्रमुख, आचार सबै करे ॥
करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहिं दयो ।
धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो ॥
जन्माभिषेक महत महिमा, सुनत सब सुख पावही ।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावही ॥१०॥

३—तपकल्याणक

श्रम-जल-रहित सरीर, सदा सब मल-रहिउ ।
छीर वरन वर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ ॥
प्रथम सार संहनन, सरूप विराजहीं ।
सहज सुगंध सुलच्छन मंडित छाजहीं ।
छाजहिं अतुल बल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने ।
दस सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने ॥

आयाम काल त्रिलोकपति मन-रुचिर उचित जु नित नये।
अमरोपनीत पुनीत अनुपम सकल भोग विभोगये ॥११॥

भव-तन-भोग-विरत्त, कदाचित चिंतए।
धन-यौवन पिय पुत्त, कलित्त अनित्तए ॥
कोउ न सरन मरन दिन, दुख चहुँगति भरयो।
सुखदुख एकहि भोगत, जिय विधि-वशि परयो ॥
परयो विधि-वश आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो।
तन असुचि परतैं होय आस्रव, परिहरे तैं संवरो ॥
निरजरा तपबल होय समकित, बिन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो।
दुर्लभ विवेक बिना न कबहूँ, परम धरम विषै रम्यो ॥१२॥

ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया।
लोकातिक वर देव, नियोगी आइया ॥
कुसुमाजलि दे चरन, कमल सिर नाइया।
स्वयबुद्ध प्रभु थुतिकर, तिन समुझाइया ॥
समुझाय प्रभु को गये निजपुर, पुनि महोच्छव हरि कियो।
रुचि रुचिर चित्र विचित्र सिविका कर सुनन्दन वन लियो।
तहँ पचमुट्ठी लोच कीनो, प्रथम सिद्धनि नुति करी।
मण्डिय महाव्रत पच दुद्धर सकल परिगह परिहरी ॥१३॥

मणि-मय-भाजन केश परिट्ठिय सुरपती।
छीर-समुद्र-जल खिप करि, गयो अमरावती ॥
तप-सयम-बल प्रभुको, मनपरजय भयो।
मौन सहित तप करत, काल कछु तहँ गयो ॥
गयो कछु तहँ काल तपबल, रिद्धि वसुविधि सिद्धिया।
जसु धर्मध्यान-बलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया ॥

खिपि सातवें गुण जतन विन तहँ, तीन प्रकृति जु बुधि त्रढिउ ।
करि करण तीन प्रथम सुकल-वल, खिपक-सेनी प्रभु चढिउ ॥१४॥

प्रकृति छतीस नवें, गुण-थान विनासिया ।
दसवें सूक्षम लोभ, प्रकृति तहँ नासिया ॥
सुकल ध्यानपद दूजो, पुनि प्रभु पूरियौ ।
बारहवें-गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियौ ॥

चूरियो त्रेसठ प्रकृति इह विधि, घतिया-करमनि तणी ।
तप कियो ध्यान-पर्यन्त वाहर-विधि त्रिलोक-सिरोमणी ।
नि ःक्रमण-कल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावही ।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर, जगत मगल गावही ॥१५॥

४—ज्ञानकल्याणक

तेरहवें गुणथान सयोगि जिनेसुरो ।
अनंत-चतुष्टय-मंडित, भयो परमेसुरो ॥
समवसरन तब धनपति वहु-विधि निरमयो ।
आगम-जुगति प्रमान, गगन-तल परि ठयो ॥

परि ठयो चित्र विचित्र मणिमय, सभा-मण्डप सोहये ।
तिहिमध्य वारह वने कोठे, कनक सुरनर मोहये ।
मुनि कलप-वासिनि अरजिका, पुन ज्योति-भौमि-व्यन्तर-तिया ।
पुनि भवन-व्यतर नभग सुर नर पसुनि कोठे बैठिया ॥१६॥

मध्यप्रदेश तीन, मणिपीठ तहां बने ।
गंधकुटी सिंहासन, कमल सुहावने ॥
तीन छत्र सिर सोहत त्रिभुवन मोहए ।
अन्तरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए ॥

राजही चौदह चारु अतिशय, देव रचित सुहावने।
जिनराज केवलज्ञान महिमा, अवर कहत कहा बने ।।
तब इन्द्र आय कियो महोच्छव, सभा सोभा अति बनी।
धर्मोपदेश दियो तहा, उच्चरिय वानी जिनतनी ।।२०।।

छुधा तृषा अरु राग, रोष असुहावने।
जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने ।।
रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घनी।
खेद स्वेद मद मोह, अरति चिंता गनी ।।
गनिये अठारह दोष तिनकरि रहित देव निरजनो।
नव परम केवललब्धि मडिय सिव-रमनि-मनरंजनो ।।
श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावही।
भणि 'रूपचद' सुदेव जिनवर, जगत मगल गावही ।।२१।।

५—निर्वाण कल्याणक

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो[1]।
भव्यनि प्रति उपदेश्यो, जिनवर तारिसो[2] ।।
भव-भय-भीत भविकजन, सरणै आइया।
रत्नत्रय-लच्छन सिवपथ लगाइया ।।
लगाइया पंथ जु भव्य पुनि प्रभु तृतिय सुकल जु पूरियो।
तजि तेरवा गुणथान जोग अजोगपथ पग धारियो।
पुनि चौदहे चौथे सुकल बल बहत्तर तेरह हती।
इमि घाति वसुविध कर्म पहुँच्यो, समय मे पचम गती ।।२२।।
लोकसिखर तनुवात, वलयमहँ संठियो।
धर्मद्रव्य बिन गमन न, जिहि आगे कियो ।।

---

१ जारिसो=जैसा। २ तारिसो=तैसा।

जलाभिषेक वा प्रक्षाल-पाठ

(प्रक्षाल करते समय पढ़ना चाहिये।)

जय जय भगवंते सदा, मंगल मूल महान।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमौं जोरि जुगपान॥

ढाल मंगल की, छंद अडिल्ल और गीता

श्रीजिन जगमें ऐसो को बुधवंत जू।
जो तुम गुण वरननि करि पावै अंत जू॥
इंद्रादिक सुर चार ज्ञानधारी मुनी।
कहि न सकैं तुम गुणगण हे त्रिभुवनधनी॥

अनुपम अमित तुम गुणनि-वारिधि, ज्यों अलोकाकाश है।
किमि धरैं हम उर कोषमें सो अकथ-गुण-मणि-राश है॥
पै निजप्रयोजन सिद्धि की तुम नाम मे ही शक्ति है।
यह चित्त मे सरधान यातैं नाम ही मे भक्ति है॥१॥

ज्ञानावरणी दर्शन,आवरणी भने।
कर्म मोहनी अंतराय चारों हने॥
लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञान मे।
इंद्रादिकके मुकुट नये सुरथान मे॥

तब इन्द्र जान्यो अवधितैं, उठि सुरन-युत बंदत भयो।
तुम पुन्यको प्रेरयो हरी ह्वै मुदित धनपतिसौं चयो॥
अब वेगि जाय रचो समवसृति सफल सुरपदको करो।
साक्षात् श्री अरहंत के दर्शन करो कल्मष हरो॥२॥

ऐसे वचन सुने सुरपति के धनपती।
चल आयो ततकाल मोद धारै अती॥
वीतराग छवि देखि शब्द जय जय चयौ।
दे प्रदच्छिना बार बार वदत भयौ॥
अति भक्ति-भीनो नम्र-चित ह्वै समवशरण रच्यो सही।
ताकी अनूपम शुभ गतीको, कहन समरथ कोउ नहीं॥
प्राकार तोरण सभामंडप कनक मणिमय छाजहीं।
नग-जडित गंधकुटी मनोहर मध्यभाग विराजहीं॥३॥
सिंहासन तामध्य बन्यौ अद्भुत दिपै।
तापर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै॥
तीनछत्र सिर शोभित चौंसठ चमरजी।
महा भक्तियुत ढोरत हैं तहा अमरजी॥
प्रभु तरन तारन कमल ऊपर, अन्तरीक्ष विराजिया।
यह वीतराग दशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया॥
मुनि आदि द्वादश सभाके भविजीव मस्तक नायकें।
बहुभाति बारबार पूजे नमैं गुणगण गायकें॥४॥
परमौदारिक दिव्य देह पावन सही।
क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं॥
जन्म जरामृति अरति शोक विस्मय नसे।
राग रोष निद्रा मद मोह सबै खसे॥
श्रमबिना श्रमजलरहित पावन अमल ज्योति-स्वरूपजी।
शरणागतनिकी अशुचिता हरि, करत विमल अनूपजी॥

ऐसे प्रभू की शांतिमुद्रा को न्हवन जलतैं करैं।
'जस' भक्तिवश मन उचित तैं हम भानु ढिग दीपक धरैं ॥५॥
तुम तौ सहज पवित्र यही निश्चय भयो।
तुम पवित्रता हेत नहीं मज्जन ठयो ॥
मैं मलीन रागादिक मलतैं ह्वै रह्यो।
महा मलिन तनमें वसु-विधि-वश दुख सह्यो ॥
बीत्यो अनंतो काल यह मेरी अशुचिता ना गई।
तिस अशुचिता-हर एक तुम ही, भरहु वांछा चित ठई ॥
अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोष-रागादिक हरौ।
तनरूप कारा-गेहतैं उद्धार शिव वासा करौ ॥६॥
मैं जानत तुम अष्टकर्म हरि शिव गये।
आवागमन विमुक्त राग-वर्जित भये ॥
पर तथापि मेरो मनोरथ पूरत सही।
नय-प्रमानतैं जानि महा साता लही ॥
पापाचरण तजि न्हवन करता चित्त में ऐसे धरूं।
साक्षात श्रीअरहंतका मानो न्हवन परसन करूं ॥
ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंध तैं।
विधि अशुभ नसि शुभबंधतैं ह्वै शर्म सब विधि तासतैं ॥७॥
पावन मेरे नयन, भये तुम दरसतैं।
पावन पानि भये तुम चरननि परसतैं ॥
पावन मन ह्वै गयो तिहारे ध्यानतैं।
पावन रसना मानी, तुम गुण गानतैं ॥

पावन भई परजाय मेरी, भयो मै पूरण-धनी।
मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी, पूर्णभक्ति नहीं बनी॥
धन धन्य ते बडभागि भवि तिन नींव शिव-घरकी धरी।
वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुम भर भक्ती करी॥८॥

विघन-सघन-वन-दाहन-दहन प्रचड हो।
मोह-महा-तम-दलन प्रबल मारतण्ड हो॥
ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि सज्ञा धरो।
जग-विजयी जमराज नाश ताको करो॥

आनन्द-कारण दुख-निवारण, परम-मंगल-मय सही।
मोसो पतित नहिं और तुमसो, पतित-तार सुन्यो नहीं॥
चिंतामणी पारस कलपतरु, एक भव सुखकार ही।
तुम भक्ति-नवका जे चढे, ते भये भवदधि-पार ही॥९॥

दोहा

तुम भवदधितैं तरि गये, भये निकल अविकार।
तारतम्य इस भक्तिको, हमैं उतारो पार॥१०॥

॥ इति हरजसराय कृत अभिपेक पाठ॥

नित्य नियम पूजा

(पूजा प्रारम्भ करने के समय नौ वार णमोकार मन्त्र पढकर नीचे लिखा विनय पाठ बोल कर पूजा प्रारम्भ करनी चाहिये।)

विनयपाठ दोहावली

इह विधि ठाडो होयके, प्रथम पढ़ै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्मजु आठ॥१॥

अनंत चतुष्टयके धनी, तुमही हो सिरताज ।
मुक्ति-वधूके कंत तुम, तीन भुवन के राज ॥२॥

तिहुँ जगकी पीडा-हरन, भवदधि शोषणहार ।
ज्ञायक हो तुम विश्वके, शिवसुख के करतार ॥३॥

हरता अघ अंधियारके, करता धर्मप्रकाश ।
थिरतापद दातार हो, धरता निजगुण रास ॥४॥

धर्मामृत उर जलधिसों ज्ञानभानु तुम रूप ।
तुमरे चरण-सरोजको, नावत तिहुं जग भूप ॥५॥

मैं वंदौं जिनदेवको, कर अति निर्मल भाव ।
कर्मबंधके छेदने, और न कछू उपाव ॥६॥

भविजनको भवकूपतैं, तुमही काढनहार ।
दीनदयाल अनाथपति, आतम गुणभंडार ॥७॥

चिदानंद निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल ।
सरल करी या जगतमें भविजनको शिवगैल ॥८॥

तुम पदपंकज पूजतैं, विघ्न रोग टर जाय ।
शत्रु मित्रताको धरैं, विष निरविषता थाय ॥९॥

चक्री खगधर इंद्रपद, मिलैं आपतैं आप ।
अनुक्रमकर शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप ॥१०॥

तुम विन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल विन मीन ।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥११॥

भजन

श्री जी मै थाने पूजन आयो, मेरी अरज सुनो दीनानाथ !
श्री जी, मै थाने पूजन आयो ॥१॥
जल चन्दन अक्षत शुभ लेके तामे पुष्प मिलायो ।
श्री जी, मै थाने पूजन आयो ॥२॥
चरु अरु दीप धूप फल लेकर, सुन्दर अर्घ बनायो ।
श्री जी, मै थाने पूजन आयो ॥३॥
आठ पहर की साठ जु घडियां, शान्ति शरण तोरी आयो ।
श्री जी, मै थाने पूजन आयो ॥४॥
अर्घ बनाय गाय गुणमाला, तेरे चरणन शीश झुकायो ।
श्री जी, मै थाने पूजन आयो ॥५॥
मुझ सेवक की अर्ज यही है, जामन मरण मिटावो ।
मेरा आवागमन छुटावो ॥ श्री जी, मै० ॥६॥

पूजा प्रारम्भ

ओ जय जय जय । नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु ।
णमो अरिहताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥
ओ ह्री अनादि-मूल-मत्रेभ्यो नम । (पुष्पाजलि क्षिपेत्)
चत्तारि मगल—अरिहता मगल,
सिद्धा मंगलं, साहू मंगल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मगलं ।

चत्तारि लोगुत्तमा-अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो ।।
चत्तारि सरण पव्वज्जामि, अरिहंते सरण पव्वज्जामि,
सिद्धे सरण पव्वज्जामि, साहू सरण पव्वज्जामि,
केवलिपण्णत्त धम्म सरण पव्वज्जामि ।।

ओ नमोऽर्हते स्वाहा, पुष्पांजलि क्षिपामि

अपवित्र. पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पंच-नमस्कार सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।१।।
अपवित्र पवित्रो वा सर्वावस्था गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यंतरे शुचिः ।।२।।
अपराजित-मंत्रोऽयं सर्व-विघ्न-विनाशन ।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथम मंगल मत. ।।३।।
एसो पंच-णमोयारो सव्व-पावप्पणासणो ।
मंगलाण च सव्वेसिं पढमं होइ मंगल ।।४।।
अर्हमित्यक्षर ब्रह्मवाचक परमेष्ठिन. ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीज सर्वत प्रणमाम्यहं ।।५।।
कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं मोक्ष-लक्ष्मी-निकेतनं ।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेत सिद्धचक्र नमाम्यह ।।६।।
विघ्नौघाः प्रलय यान्ति शाकिनी-भूत-पन्नगा. ।
विष निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ।।७।।

(पुष्पांजलि क्षिपामि)

पचकल्याणक अर्घ

उदक-चदन-तदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
धवल-मगल-गान-रवाकुले जिनगृहे कल्याणमह यजे ।।१।।

ओ ह्री श्रीभगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपञ्चकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

पचपरमेष्ठी का अर्घ

उदकचदनतदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमह यजे ।।२।।

ओ ह्री श्री अर्हत-सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।२।।

यदि अवकाश हो तो यहाँ पर सहस्रनाम पढकर दश अर्घ देना चाहिये। नही तो नीचे लिखा श्लोक पढकर एक अर्घ चढाना चाहिए।

उदकचदनतदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाम श्रह यजे ।।३।।

ओ ह्री श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(स्वस्ति मगल)

श्रीमज्जिनेंद्रमभिवद्य जगत्त्रयेश,
स्याद्वाद-नायक-मनत-चतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसघ-सुदृशां सुकृतैकहेतुर्,
जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष मयाऽभ्यधायि ।।१।।

श्रीपुष्पदत स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः ।
श्रीश्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः ।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनतः ।
श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः ।
श्रीकुथुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः ।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः ।
श्रीनमि. स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः ।
श्रीपार्श्व· स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमान. ।

(पुष्पाजलिं क्षिपामि)

इति जिनेन्द्र स्वस्तिमङ्गलविधान ।

नित्याप्रकंपाद्भुत-केवलौघाः स्फुरन्मन· पर्यय-शुद्धबोधाः ।
दिव्यावधिज्ञान-बलप्रबोधा· स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः ।१।

(यहा मे प्रत्येक श्लोक के अत मे पुष्पाजलि क्षेपण करना चाहिये ।)

कोष्ठस्थ-धान्योपमसेकबीज सभिन्न-सश्रोतृ-पदानुसारि ।
चतुर्विध बुद्धिबल दधाना· स्वस्ति-क्रियासुः परमर्षयो नः ।२।

सस्पर्शन संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि ।
दिव्यान् मतिज्ञान-बलाद्वहतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।३

प्रज्ञा-प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टांग-निमित्त-विज्ञाः स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः४

जंघावलि-श्रेणि-फलाबु-तंतु-प्रसून-बीजांकुर-चारणाह्वाः ।
नभोऽङ्गण-स्वैर-विहारिणश्च-स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।५।

अणिम्नि दक्षा कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ता.
कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ॥६
सकामरूपित्व-वशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ता।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधाना स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ॥७
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोर-गुणाश्चरन्त -स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः।८
आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशीर्विषविषा दृष्टिविषविषाश्च।
सखिल्ल-विड्जल्ल-मलौषधीशा स्वस्ति क्रियासु.परमर्षयो न।९
क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवतो मधु स्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंत.।
अक्षीणसंवास-महानसाश्च स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ॥१०

इति परमर्षिस्वस्तिमंगल-विधान।

अथ देव-शास्त्र-गुरु पूजा

अडिल्ल छन्द

प्रथम देव अरहंत सुश्रुत सिद्धांत जू,
गुरु निर्ग्रन्थ महन्त मुकतिपुर पन्थ जू,
तीन रतन जग माहि सो ये भवि ध्याइये,
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये॥

दोहा

पूजो पद अरहंत के पूजो गुरुपद सार,
पूजो देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार।१।

ओं ह्री देव-शास्त्र-गुरु-समूह ! अत्र अवतर अवतर, सवौषट् ...
नन। ओ ह्री देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठ: ठ स्थापन।
ओ ह्री देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरण।

गीता छन्द

सुरपति उरग नरनाथ तिनकर, बन्दनीक सुपद-प्रभा।
अति शोभनीक सुवरण उज्ज्वल, देख छबि मोहित सभा॥
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि अग्र तसु बहुविधि नचूं।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥

दोहा

मलिन वस्तु हर लेत सब, जल स्वभाव मलछीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन।१।

ओ ह्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जल निर्वं०॥

जे त्रिजग उदर मँझार प्राणी तपत अति दुद्धर खरे।
तिन अहित-हरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे॥
तसु भ्रमर-लोभित घ्राण पावन सरस चंदन घिसि सचूं।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥

दोहा

चंदन शीतलता करैं, तपत वस्तु परवीन।
जासो पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन।२।

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्य ससार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वं०॥२॥

यह भवसमुद्र अपार तारण के निमित्त सुविधि ठई।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ भक्ति वर नौका सही॥

उज्ज्वल अखंडित सालि तदुल पुंज धरि त्रयगुण जचूँ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥

दोहा

तंदुल सालि सुगध अति, परम अखडित बीन।
जासो पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन।३।

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निवपा० स्वाहा॥

जे विनयवत सुभव्य-उर-अवुजप्रकाशन भान हैं।
जे एक मुख चारित्र भाषत त्रिजगमाहिं प्रधान हैं॥
लहि कुद कमलादिक पहुप, भव भव कुवेदनसो बचू।
अरहत श्रुन-सिद्धात गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचू॥

दोहा

विविध भाति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन।
जासो पूजौं परमपद देव शास्त्र गुरु तीन।४।

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्य कामबाण-विध्वसनाय पुष्प निर्व०॥४॥

अति सबल मद-कदर्प जाको क्षुधा-उरग अमान है।
दुस्सह भयानक तासु नाशन को सु गरुड समान है॥
उत्तम छहो रसयुक्त नित, नैवेद्य करि घृत मे पचू।
अरहत श्रुत-सिद्धात गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥

दोहा

नानाविधि सयुक्तरस, व्यजन सरस नवीन।
जासो पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन।५।

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्य. क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्य निर्व०॥५॥

जे त्रिजगउद्यम नाश कीने, मोहतिमिर महाबली।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप प्रकाश जोति प्रभावली॥
इह भाँति दीप प्रजाल कचन के सुभाजन मे खचू।
अरहत श्रुतसिद्धात गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचू॥

दोहा—

स्वपरप्रकाशक ज्योति अति, दीपक तमकरि हीन।
जासो पूजौ परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन।६।

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहाधकारविनाशनाय दीप निर्व० ॥६॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगन्धता करि, सकल परिमलता हसै॥
इह भाँति धूप चढाय नित भव ज्वलनमाहि नहीं पचू।
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचू॥

दोहा—

अग्निमाहि परिमल दहन, चदनादि गुणलीन।
जासो पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन।७।

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वसनाय धूप निर्व० ॥७॥

लोचन सुरसना घ्राण उर, उत्साह के करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं॥
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूँ।
अरहंत श्रुतसिद्धाँत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचू॥

दोहा—

जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण-रस लीन।
जासो पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन।८।

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरू।
वर धूप निरमल फल विविध, बहु जनम के पातक हरूं।।
इहि भाँति अर्घ चढाय नित भवि करत शिवपकति मचू।
अरहत श्रुतसिद्धात गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचू।।
वसुविधि अर्घ सजोयके, अति उछाह मन कीन।
जासो पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन।।९।।

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।।

जयमाला

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अलप सुगुण विस्तार।।

पद्धरी छन्द

कर्मन की त्रेसठ प्रकृति नाशि,
जीते अष्टादश दोषराशि।
जे परम सुगुण है अनत धीर,
कहवत के छयालिस गुण गभीर।२।
शुभ समवशरण शोभा अपार,
शत इद्र नमत कर सीस धार।
देवाधिदेव अरहत देव,
बदौं मन-वच-तन करि सु सेव।३।
जिनकी ध्वनि ह्वै ओंकाररूप,
निर-अक्षरमय महिमा अनूप।

दश अष्ट महाभाषा समेत,
लघुभाषा सात शतक सुचेत ।४।
सो स्याद्वादमय सप्तभंग,
गणधर गूंथे बारह सुअंग ।
रवि शशि न हरै सो तम हराय,
सो शास्त्र नमो बहु प्रीति ल्याय ।५।
गुरु आचारज उवझाय साध,
तन नगन रतनत्रय-निधि अगाध ।
संसारदेह वैराग्य धार,
निरवांछि तपै शिवपद निहार ।६।
गुण छत्तिस पच्चिस आठबीस,
भवतारन तरन जिहाज ईस ।
गुरु की महिमा वरनी न जाय,
गुरु-नाम जपो मन-वचन-काय ।७।

सोरठा

कीजै शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै ।
द्यानत- सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ।८।

ओ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

श्री जिनके परसाद तैं सुखी रहैं सब जीव ।
यातैं तन मन वचन तैं सेवो भव्य सदीव ।।

इत्याशीर्वाद पुष्पाजंलि क्षिपेत् ।

तीस चौवीसी का अर्घ

द्रव्य आठो जु लीना है, अर्घ करमे नवीना है।
पूजता पाप छीना है, भानुमल जोर कीना है।
दीप अढ़ाई सरस राजै, क्षेत्र दश ताविषै छाजै।
सातशत बीस जिनराजै, पूजतां पाप सब भाजै।१।

ओ ह्री पाच भरत, पाच ऐरावत, दस क्षेत्र के विषै तीस चौवीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

सूचना—आगे जिस भाई को निराकुलता हो, वह नीचे लिखे अनुसार बीस तीर्थकरो की भाषा पूजा करें। यदि स्थिरता न हो तो उस पूजा के अन्त मे जो अर्घ लिखा है उसको पढकर अर्घ चढा देवें।

श्री बीस तीर्थंकर पूजा भाषा

दीप अढ़ाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस।
तिन सबकी पूजा करूँ, मन-वच-तन धरि शीस ॥

ॐ ह्री विद्यमान विंशति-तीर्थंकरा । अत्र अवतर अवतर सवौषट्
ओ ह्री विद्यमान-विंशति-तीर्थंकरा । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ
ओ ह्री विद्यमानविंशति-तीर्थंकरा. । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

॥ अथाष्टक ॥

इन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र वंद्य, पद निर्मल धारी,
शोभनीक ससार, सारगुण है अविकारी।
क्षीरोदधि सम नीरसो (हो), पूजो तृषा निवार,
सीमधर जिन आदि दे, बीस विदेह मँझार।
श्री जिनराज हो, भव तारण तरण जहाज।१।

ओ ह्रीं विद्यमान-विंशति तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जल (इस पूजा मे बीस पुञ्ज करना हो तो प्रत्येक द्रव्य चढाने समय इस प्रकार मंत्र बोलना चाहिये)

ओ ह्रीं सीमंधर, युगमंधर, बाहु, सुबाहु, सजात, स्वयप्रभ, ऋषभानन, अनन्तवीर्य, सूरप्रभ, विशालकीर्ति, वज्रधर, चन्द्रानन, चद्रबाहु, भुजगम, ईश्वर, नेमिप्रभ, वीरसेन, महाभद्र, देवयशोऽजितवीर्येति विंशति विद्यमानतीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जल निर्व० ॥१॥

तीन लोक के जीव, पाप आताप सताये,
तिनको साता दाता, शीतल वचन सुहाये।
बावन चदनसो जजू, (हो) भ्रमन-तपन निरवार,
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेह मंझार।
श्री जिनराज हो, भव तारण तरण जहाज ॥२॥

ओ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो भवतापविनाशनाय चदन नि०

यह ससार अपार महासागर जिनस्वामी,
तातें तारे बड़ी, भक्ति-नौका जग नामी।
तन्दुल अमल सुगधसो (हो) पूजो तुम गुणसार,
सीमधर० ।३।

ओ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०

भविक-सरोज-विकाश, निद्य-तम-हर रविसे हो,
जति श्रावक आचार, कथन को, तुम ही बडे हो।
फूलसुवास अनेकसो (हो) पूजो मदन प्रहार,
सीमधर० ।४।

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्व०

काम नाग विषधाम, नाशको गरुड कहे हो,
क्षुधा महादव-ज्वाल, तासको मेघ लहे हो।
नेवज बहुघृत मिष्टसो (हो), पूजो भूख विडार,
सीमधर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार।
श्री जिनराज हो, भव तारण तरण जहाज ।।५।

ओं ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य।

उद्यम होन न देत, सर्व जग मांहि भरचो है,
मोह महातम घोर, नाश परकाश करचो हे।
पूजो दीप प्रकाशसो (हो) ज्ञान ज्योति करतार,
सीमधर० ।६।

ओं ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीप।

कर्म आठ सब काठ, भार विस्तार निहारा,
ध्यान अगनि कर प्रकट सरव कीनो निरवारा।
धूप अनूपम खेवतें (हो), दुखजलैं निरधार,
सीमधर० ।७।

ओं ह्रीं विद्यमान विंशति-तीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूप।

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं,
सब को छिन मे जीत जैन के मेरु खरे हैं।
फल अति उत्तमसो जजो (हो) वांछित फलदातार,
सीमधर० ।८।

ओं ह्रीं विद्यमान विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्व०।

जल फल आठो दर्व, अरघ कर प्रीति धरी है,
गणधर इन्द्रनहू तें थुति पूरी न करी है।

द्यानत सेवक जानके (हो) जगतैं लेहु निकार।
सीमधर० ।६।
ओं ह्रीं विद्यमान-विंशति तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्व०।

जयमाला

सोरठा—ज्ञान सुधाकर चंद, भविक खेतहित मेघ हो,
भ्रम-तम-भान अमंद, तीर्थङ्कर वीसो नमो।

चौपाई १६ मात्रा।

सीमंधर सीमंधर स्वामी, जुगमंधर जुगमंधर नामी।
बाहु बाहु जिन जग जन तारे, करम सुबाहु बाहुबलं दारे।१।

जात सुजात सुकेवलज्ञानं, स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं।
ऋषभानन ऋषिभानन दोष, अनंतवीरज वीरजकोषं।२।

सौरीप्रभ सौरीगुणमालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं।
वज्रधार भवगिरि वज्जर हैं, चंद्रानन चंद्रानन वर हैं।३।

भद्रबाहु भद्रनि के करता, श्रीभुजंग भुजंगम हरता।
ईश्वर सब के ईश्वर छाजैं, नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं।४।
वीरसेन वीर जग जाने, महाभद्र महाभद्र बखाने।
नमो जसोधर जसधरकारी, नमो अजितवीरज बलधारी।५।

धनुष पाँचसै काय विराजै, आयु कोडि पूरव सब छाजै।
समवशरण शोभित जिनराजा, भव-जल-तारनतरन जिहाजा
सम्यकरत्नत्रय निधिदानी, लोकालोकप्रकाशक ज्ञानी।
शतइन्द्रनि कर वंदित सोहैं, सुन नर पशु सबके मन मोहैं।७।

दोहा—तुमको पूजे, वदना करे, धन्य नर सोय।
द्यानत सरधा मन धरे, सो भी धरमी होय ॥
ओ ह्री विद्यमानविशतितीर्थकरेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्यमान वीस तीर्थकरो का अर्घ

उदक-चदन-तदुलपुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूपफलार्घकै.।
धवल मगल-गानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमह यजे।१।

ओ ह्री श्री सीमधर-युगमधर-वाहु-सुवाहु-सजात-स्वयप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रवाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरसेन-महाभद्र-देवयश-अजितवीर्येति विंशतिविद्यमान तीर्थङ्करेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

अकृत्रिम चैत्यालयो के अर्घ

कृत्याकृत्रिम-चारु-चैत्य-निलयान् नित्यं त्रिलोकी-गतान्,
वंदे भावन-व्यतर-द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान्।
सद्गधाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकै सद्दीपधूपैः फलैर्,
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शातये।१।
ओ ह्री कृत्रिमाकृत्रिम-चैत्यालय-सबधि-जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

वर्षेषु-वर्षातर-पर्वतेषु नदीश्वरे यानि च मदरेषु।
यावति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वदे जिनपुगवाना।२।

अवनि-तल-गताना कृत्रिमाकृत्रिमाणा,
वन-भवन-गताना दिव्य-वैमानिकाना।
इह मनुज-कृताना देवराजार्चिताना,
जिनवर-निलयाना भावतोऽहं स्मरामि।३।

जंबू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्रत्रये ये भवा.,
चन्द्राभोज-शिखडि-कण्ठ-कनक-प्रावृड्घना भाजिना. ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षण-धरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः ।
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ।४।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजत-गिरिवरे शाल्मलौ जबुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचिके कुंडले मानुषांके ।
इष्वाकारेंजनाद्रौ दधि-मुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवदे भवन-महितले यानि चैत्यालयानि ।५।

द्वौ कुंदेंदु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविंद्रनील-प्रभौ,
द्वौ बंधूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः संतप्त-हेम-प्रभाः,
ते संज्ञान-दिवाकरा सुरनुताः सिद्धि प्रयच्छतु नः ।६।

ओ ह्री त्रिलोक-सवधि-कृत्याकृत्रिम-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्व०
(इच्छामि भक्ति वोलते समय पुष्पाजलि क्षेपण करना ।)

इच्छामि भते ! चेइयभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेउं । अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि, तीसु विलोयेसु भवणवासिय वाण-वितर-जोयसिय-कप्पवासिय त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गधेण दिव्वेण पुपफेण दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्लाणेण णिच्चकाल अच्चंनि पुज्जति वंदंति णमस्सन्ति

अहमवि इह संतो तत्थ सताइ णिच्चकाल अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमण समाहिमरण जिणगुणसंपत्ती होउ मज्झ।

अथ पौर्वाह्णिक-माध्याह्निक-आपराह्णिक-देववंदनाया-पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थ भावपूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्रीपंचमहागुरु-भक्ति-कायोत्सर्ग करोम्यहम्।

तावकाय पावकम्मं दुच्चरिय वोस्सरामि।

णमो अरिहंताण, णमो सिद्धाण, णमो आयरियाण।

णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्वसाहूण।

(यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र जपना चाहिये।)

अथ सिद्ध पूजा (द्रव्याष्टक)

ऊर्ध्वाधोरयुत सबिन्दु सपर ब्रह्म-स्वरावेष्टित,
वर्गापूरित-दिग्गताम्बुज-दलं तत्संधि-तत्वान्वितं।
अत· पत्र-तटेष्वनाहत-युत ह्रींकार-संवेष्टितं।
देवं ध्यायति य स मुक्तिसुभगो वैरीभ-कण्ठी-रवः॥१॥

ॐ ह्री श्रीसिद्धचक्राधिपतये! सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये! सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।

ॐ ह्री श्रीसिद्धचक्राधिपतये! सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

निरस्त-कर्म-सम्बन्धं सूक्ष्म नित्य निरामयम् ।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥

(सिद्धयन्त्र की स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुग परमात्म-गम्य
हान्यादि भावरहित भव-वीत-कायम् ।
रेवापगा-वर-सरो यमुनोद्भवानां
नीरैर्यजे कलशगैर्-वरसिद्ध-चक्रम् ॥१॥

ओं ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जल नि० ॥१॥

आनन्द-कन्द-जनक घन-कर्म-मुक्तं
सम्यक्त्व-शर्म-गरिमं जननार्तिवीनम् ।
सौरभ्य-वासित-भुवं हरि-चन्दनानां
गन्धैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥२॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने ससारतापविनाशनाय चन्दन निर्व० ॥

सर्वावगाहन-गुण सुसमाधि-निष्ठं
सिद्ध स्वरूप-निपुणं कमल विशालम् ।
सौगन्ध्य-शालि-वनशालि-वराक्षताना
पुजैर्यजे-शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम् ॥३॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ॥३॥

नित्यं स्वदेह-परिमाणमनादिसञ्ज्ञ
द्रव्यानपेक्षममृत मरणाद्यतीतम् ।

सिद्धासुरादिपति-यक्ष-नरेन्द्रचक्रै-

ध्येयं शिवं सकल-भव्य-जनैः सुवन्द्यम् ।

नारङ्गि-पूग-कदली-फलनारिकेलैः

सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्ध चक्रम् ॥८॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रत-गणैः सङ्गं वरं चन्दनं,

पुष्पौघं विमलं सदक्षत-चयं रम्यं चरुं दीपकम् ।

धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये,

सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ।९।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं

सूक्ष्म-स्वभाव-परमं यदनन्तवीर्यम् ।

कर्मौघ-कक्ष-दहनं सुख-शस्यबीजं

वन्दे सदा निरुपमं वर-सिद्धचक्रम् ।१०।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

त्रैलोक्येश्वर-वन्दनीय-चरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं

यानाराध्य निरुद्ध-चण्ड-मनसः सन्तोऽपि तीर्थंकराः ।

सत्सम्यक्त्व-विबोध-वीर्य-विशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणै—

र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ।११।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अथ जयमाला

विराग सनातन शात निरश, निरामय निर्भय निर्मल हस ।
सुधाम विबोध-निधान विमोह प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ।१।
विदूरित-ससृति-भाव निरग, समामृत-पूरित देव विसग ।
अबंध कषाय-विहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ।२।
निवारित-दुष्कृतकर्म-विपाश, सदामल-केवल-केलि-निवास ।
भवोदधि-पारग शात विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।३।
अनत-सुखामृत-सागर-धीर, कलक-रजो-मल-भूरि-समीर ।
विखण्डित-कामविराम-विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह।४।
विकार विवर्जित तर्जितशोक, विबोध-सुनेत्र-विलोकित-लोक।
विहार विराव विरग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।५।
रजोमल-खेद-विमुक्त विगात्र, निरतर नित्य सुखामृत-पात्र ।
सुदर्शन राजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।६।
नरामर-वदित निर्मल-भाव, अनत-मुनीश्वर पूज्य विहाव ।
सदोदय विश्व महेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।७।
विदभ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापरशंकर सार वितंद्र ।
विकोप विरूप विशक विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।८।
जरा-मरणोज्झित-वीत-विहार,विचिंतित निर्मल निरहकार ।
अचिन्त्य-चरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।९।
विवर्ण विगध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ
अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।१०।

घत्ता

असम-समयसारं चारु-चैतन्य चिन्हं,
पर-परणति-मुक्तं पद्मनंदीन्द्र-वन्द्यम् ।
निखिल-गुण-निकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं,
स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ।१।

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिल्ल छंद

अविनाशी अविकार परम-रस-धाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।
शुद्धबुद्ध अविरुद्ध अनादि अनंत हो,
जगत-शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ।१।
ध्यान अगनिकर कर्म कलंक सबै दहे,
नित्य निरंजन देव स्वरूपी ह्वै रहे ।
ज्ञायक के आकार ममत्व निवारकें ।
सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायकें ॥२॥
अविचल ज्ञान प्रकाशते, गुण अनन्त की खान ।
ध्यान धरे सो पाइए, परम सिद्ध भगवान ॥३॥
अविनाशी आनन्द मय, गुण पूरण भगवान ।
शक्ति हिये परमातमा, सकल पदारथ जान ॥४॥

इत्याशीर्वाद

सिद्धपूजा का भावाष्टक तथा भाषा द्रव्याष्टक

निज-मनोमणि-भाजन-भारया, समरसैक सुधारस-धारया ।
सकल-बोध-कलारमणीयक, सहज-सिद्धमह परिपूजये ।

मोहि तृषा दुख देत, सो तुमने जीती प्रभू ।
जलसे पूजू मै तोय, मेरो रोग निवारियो ।।

ओ ह्रीं णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिने (सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन वीर्यत्व, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अव्याबाधत्व अष्टगुण-सहिताय) जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

सहज-कर्म-कलक-विनाशनै-रमल-भाव-सुवासित-चन्दनै ।
अनुपमान-गुणावलिनायक सहज-सिद्ध-मह परिपूजये ।।

हम भव आतप माहि, तुम न्यारे ससार से ।
कीज्यो शीतल छाह, चन्दन से पूजा करू ।। चन्दनं

सहज-भाव-सुनिर्मल-तदुलै , सकल-दोष-विशाल-विशोधनै ।
अनुप-रोधसुबोध-निधानक, सहज-सिद्धमह परिपूजये ।।

हम अवगुण समुदाय, तुम अक्षयगुण के भरे ।
पूजूं अक्षत ल्याय, दोष नाश गुण कीजियो ।। अक्षतं

समय-सार-सुपुष्प-सुमालया, सहज-कर्म-करेण विशोधया ।
परम-योग-बलेन वशी-कृत, सहज-सिद्धमह परिपूजये ।।

काम अग्नि है मोहि, निश्चय शीलस्वभाव तुम ।
फूल चढ़ाऊ मै तोय, मेरो रोग निवारियो ।। पुष्पं

अकृत-बोध-सुदिव्य-नैवेद्यकैर्विहित-जात जरा-मरणातकै ।
निरवधि-प्रचुरात्म-गुणालय, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।

मोहि क्षुधा दुख देत ध्यान खड्ग करि तुम हती ।
मेरी बाधा चूर, नेवज से पूजा करूं ।। नैवेद्यं

सहज-रत्नरुचि-प्रतिदीपकै रुचि-विभूतितम' प्रविनाशनै' ।
निरवधि-स्वविकाश-प्रकाशनै, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

मोह तिमिर हम पास, तुम पै चेतन ज्योति है ।
पूजो दीप प्रकाश, मेरो तम निरवारियो ॥ दीपं

निज गुणाक्षय रूप-सुधूपनै, स्वगुण-घाति-मलप्रविनाशनै ।
विशद बोध-सुदीर्घ-सुखात्मक, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥

अष्टकर्म वन जाल, मुक्ति माँहि स्वामी सुख करो ।
खेऊं धूप रसाल, अष्ट कर्म निरवारियो ॥ धूपं

परम-भाव-फलावलि-सम्पदा, सहज-भाव-कुभाव-विशोधया ।
निज-गुणास्फुरणात्म निरंजनं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥

अन्तराय दुख टाल, तुम अनन्त थिरता लही ।
पूजूं फल दरशाय, विघ्न टाल शिवफल करो ॥ फलं

नेत्रोन्मीलि-विकास-भावनिवहैरत्यन्त-बोधाय वै
वार्गन्धाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकै सद्दीपधूपै फलै ।
यश्चिन्तामणि-शुद्ध-भाव-परम-ज्ञानात्मकैरर्चयेत्,
सिद्ध स्वादुमगाध-बोध-मचल सञ्चर्चयामो वय ॥९॥

हममें आठों ही दोष, जजहुँ अर्घ ले सिद्धजी ।
दीजिये वसु गुण मोय, कर जोड़े सेवक खडा ॥ अर्घं

सिद्ध पूजा (भाषा)

अडिल्ल छद

अष्टकरमकरि नष्ट अष्ट गुण पायकै,
अष्टम वसुधा माँहि विराजे जायकै ।
ऐसे सिद्ध अनत महत मनायकै,
सवौषट् आह्वान करू हरषायकै ।१।

ओ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् ।
ओ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठ ।
ओ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

छद त्रिभगी

हिमवनगत गगा आदि अभगा, तीर्थ उतगा सरवगा ।
आनिय सुरसगा सलिल सुरगा, करि मन चगा भरि भृ गा ।।
त्रिभुवन के स्वामी त्रिभुवननामी, अतरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी शिरनामी ।।

ओ ह्री श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जल निर्वपामीति स्वाहा ।।

हरिचदन लायो कपूर मिलायो, बहु महकायो मन भायो ।
जलसग घसायो रगसुहायो, चरनचढायो हरषायो । त्रिभु०।२।

ओ ह्री श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने चदन निर्वपामीति स्वाहा ।।२।।

तदुल उजियारे शशि-दुतिटारे, कोमल प्यारे अनियारे ।
तुषखड निकारे जलसु पखारे, पुज तुम्हारे ढिग धारे ।
त्रिभु० ।३।

ओ ह्री श्रीअनाहृत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधि-पतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

सुरतरुकी बारी, प्रीतिविहारी, किरिया प्यारी गुलजारी ।
भरि कंचनथारी माल सँवारी, तुमपदधारी अतिसारी ।
त्रिभुवन के स्वामी त्रिभुवन नामी, अंतरयामी अभिरामी ॥
शिवपुर विश्रामी निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी शिरनामी ॥

ओ ह्री श्रीअनाहृत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

पकवान निवाजे, स्वाद विराजे, अमृत लाजे क्षुत भाजे ।
बहु मोदक छाजे, घेवर खाजे, पूजन काजे करि ताजे ।
त्रिभु० ।५।

ओ ह्री श्रीअनाहृत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

आपापर भासै ज्ञान प्रकाशै, चित्त विकासै तम नासै ।
ऐसे विध खासे दीप उजासे धरि तुम पासे उल्लासे ।त्रिभु०।६।

ओ ह्री श्रीअनाहृत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये दीप सिद्धपरमेष्ठिने निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

चुंबक अलिमाला गंधविशाला, चदनकाला गरुवाला ।
तस चूर्ण रसाला करि ततकाला, अगनी ज्वाला में डाला ।
त्रिभु० ।७।

ओ ह्री श्रीअनाहृत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

श्रीफल अतिभारा, पिस्ता प्यारा, दाख छुहारा सहकारा ।
रितु रितु का न्यारा सत्फलसारा, अपरंपारा लै धारा ।
त्रिभु० ।८।

ओ ह्री श्रीअनाहृत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने फल निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

जल फल वसुवृंदा अरघ अमंदा, जजत अनदा के कंदा ।
मेटो भवफंदा सब दुखददा, 'हीराचदा' तुम बदा ।
त्रिभु० ।९।

ओ ह्री श्रीअनाहृत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये-सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

अथ जयमाला

दोहा—ध्यान दहन विधि-दारु दहि, पायो पद निरवान ।
पंचभाव-जुत थिर थये, नमौं सिद्ध भगवान ॥१॥

त्रोटकछंद

सुख सम्यकदर्शन ज्ञान लहा, अगुरु-लघु सूक्षम-वीर्य महा ।
अवगाह अबाध अघायक हो, सब सिद्ध नमो सुखदायक हो ॥२
असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजें, भुवनेन्द्र खगेन्द्र गणेन्द्र भजें ।
जर जामन-मर्ण मिटायक हो । सब० ।३।
अमलं अचलं अकल अकुल अछल असल अरलं अतुल ।
अरलं सरलं शिवनायक हो । सब० ।४।
अजरं अमर अधरं सुधरं । अडर अहरं अमर अधरं ।
अपरं असर सब लायक हो । सब० ।५।
वृषवृंद अमद न निद लहै । निरदद अफंद सुछद रहैं ।
नित आनदवृंद बधायक हो । सब० ।६।
भगवत सुसंत अनंत गुणी । जयवंत महंत नमंत मुनी ।
जगजतु तणे अघ-घायक हो । सब० ।७।

निरवर्ण अकर्ण उधर्ण वली, दुख हर्ण अशर्ण सुशर्ण भली।
बलि मोह की फौज भगायक हो ।। सब । १८।।

अविरुद्ध अक्रुद्ध अजुद्ध प्रभू, अति-शुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध विभू ।
परमातम पूरन पायक हो ।। सब० । १९।।

विररूप चिद्रूप स्वरूप द्युती, जसकूप अनूपम भूप भुती ।
कृतकृत्य जगत्त्रय नायक हो ।। सब० ।२०।।

सब इष्ट अभीष्ट विशिष्ट हितू, उतकिष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू
शिव तिष्टत सर्व सहायक हो ।। सब० । २१।।

जय श्रीधर श्रीकर श्रीवर हो, जय श्रीकर श्रीभर श्रीभरहो ।
जय रिद्धि सुसिद्धि-बढायक हो ।।सब० ।२२।।

दोहा—सिद्ध सुगुण को कहि सकै, ज्यो विलस्त नभमान ।
'हीराचद' तातै जजै, करहु सकल कल्यान ।।२३ ।।

ओ ह्री श्रीअनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये-महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल—सिद्ध जजै तिनको नहि आवै आपदा ।
पुत्र पौत्र धन धान्य लहै सुख सपदा ।।
इद्र चद्र धरणेद्र नरेंद्र जु होयकै ।
जावै मुकति मझार करम सब खोयकै ।।२४।।

(इत्याशीर्वादाय पुष्पाजलि क्षिपेत्) समाप्त ।

———

ओ ह्री वृषभादि-वी॰रातेभ्यो कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्व० ॥

मन मोदन मोदक आदि, सुन्दर सद्य वने ।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने ॥ चौ० ५॥

ओ ह्री श्रीवृषभादिवीरातेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य निर्व०

तमखडन दीप जगाय, धारो तुम आगे ।
सब तिमिर मोह क्षय जाय, ज्ञानकला जागे ॥ चौ० ६॥

ओ ह्री श्रीवृषभादि-वीरातेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीप ॥

दशगध हुताशन माहि, हे प्रभु खेवत हो ।
मिस धूम करम जरि जाहि,तुम पद सेवत हो ॥ चौ० ७।

ओ ह्री श्रीवृषभादि-वीरातेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामी० ॥

शुचि-पक्व-सरस-फल सार,सब ऋतु के ल्यायो ।
देखत दृग मनको प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौ० ८॥

ओ ह्री श्रीवृषभादि-वीरातेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामी० ॥

जल फल आठो शुचिसार, ताको अर्घ करो ।
तुमको अरपो भवतार, भव तरि मोक्ष वरो ॥
चौबीसों श्रीजिनचद, आनन्दकद सही ।
पदजजत हरत भवफद, पावत मोक्ष मही ॥९॥

ओ ह्री श्रीवृषभादिवीरातचतुर्विशतितीर्थकरेभ्योऽनर्घ-पदप्राप्तये अर्घ

जयमाला

श्रीमत तीरथनाथ पद, माथ नाय हितहेत ।
गाऊ गुणमाला अवै, अजर अमर पद देत ॥१॥

छन्द घत्तानन्द।

जय भवतम भञ्जन जनमनकञ्जन, रंजन दिनमनि स्वच्छकरा।
शिव मग परकाशक,अरिगण नाशक चौवीसों जिनराज वरा २

छन्द पद्धरी।

जयरिषभदेव ऋषिगन नमंत। जयअजित जीतवसुअरि तुरत।
जय संभव भवभय करत चूर। जय अभिनंदन आनंदपूर।३।
जय सुमति सुमतिदायक दयाल। जयपद्म पद्मदुति तनरसाल
जय जय सुपास भवपास नाश। जय चंद चंदतनदुति प्रकाश ४
जय पुष्पदंत दुतिदंत सेत। जय शीतल शीतल गुननिकेत॥
जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज। जय वासवपूजित वासुपुज्ज ५
जय विमल विमलपददेनहार। जय जय अनंत गुनगन अपार।
जय धर्म धर्म शिव शर्म देत। जय शांति शांति पुष्टीकरेत ६
जय कुंथु कुंथुवादिक रखेय। जयअर जिनवसुअरि छयकरेय।
जय मल्लि मल्ल हतमोहमल्ल। जय मुनिसुव्रत व्रतशल्लदल्ल ७
जय नमि नित वासवनुत सपेम। जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम।
जय पारसनाथ अनाथ नाथ। जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ८

छन्द घत्तानन्द।

चौबीस जिनंदा आनंदकंदा, पापनिकंदा सुखकारी।
तिनपद जुगचंदा उदय अमंदा, वासव-वंदा हितधारी।१।

ओं ह्रीं श्रीवृषभादि-चतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

सोरठा।

भुक्ति मुक्ति दातार, चौबीसों जिनराजवर।
तिनपद मनवचधार, जो पूजै सो शिव लहै॥१॥

इत्याशीर्वाद

श्री आदिनाथ जिनपूजा

नाभिराय मरुदेविके नदन, आदिनाथ स्वामी महाराज।
सर्वारथसिद्धतैं आप पधारे, मध्यम लोक माहि जिनराज ॥
इन्द्रदेव सव मिलकर आये, जन्म महोत्सव करने काज।
आह्वानन सव विधि मिलकरके, अपने कर पूजें प्रभु पाय ॥

ओ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर सवौपट
ओ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।
ओ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

अष्टक

क्षीरोदधि को उज्ज्वल जल ले, श्रीजिनवर पद पूजन जाय।
जन्म जरा दुख मेटन कारन, ल्याय चढाऊँ प्रभुजीके पाय ॥
श्रीआदिनाथकेचरणकमलपर, बलि बलि जाऊँ मनवचकाय।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातै मै पूजो प्रभु पाय ॥
ओ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल नि०।१
मलियागिरि चदन दाह निकदन, कचन झारी मे भर ल्याय।
श्रीजीके चरणचढावो भविजन,भवआताप तुरतमिटजाय।श्री०
ओ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय ससारतापविनाशनाय चदन निर्व०२
शुभशालि अखडित सौरभमडित,प्रासुक जलसो धोकर ल्याय।
श्रीजीके चरणचढावो भविजन,अक्षय पदको तुरतउपाय। श्री०
ओ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षन निर्वपा० ।३
कमल केतकी बेल चमेली, श्रीगुलाब के पुष्प मँगाय।
श्रीजीके चरणचढावो भविजन,कामबाण तुरत नसिजाय।श्री०
ओ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वसनाय पुष्प नि० ।४

नेवज लीना तुरत रस भीना, श्री जिनवर आगे धरवाय ।
थाल भराऊँ क्षुधा नसाऊँ,जिन गुण गावत मन हरपाय ।।
श्रीआदिनाथके चरण कमलपर, बलिबलि जाऊँ मनवचकाय ।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजो प्रभु पाय ।।
ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य नि० ।५
जगमग जगमग होत दशोंदिस, ज्योति रही मंदिर मे छाय ।
श्रीजीके सन्मुख करत आरती मोह तिमिर नासे दुखदाय ।श्री०
ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप नि० ।६
अगर कपूर सुगंध मनोहर चदन कूट सुगंध मिलाय ।
श्रीजीके सन्मुख खेय धुपायन,कर्म जरे चहुँगति मिटिजाय।श्री०
ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति० ।७
श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय ।
महामोक्षफल पावन कारन,ल्याय चढाऊँ प्रभुजीके पाय । श्री०
ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति० ८।
शुचि निर्मल नीर गंध सुअक्षत, पुष्प चरू ले मन हरपाय ।
दीप धूप फल अर्घ सुलेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय ।। श्री०
ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति० ९।

पंचकल्याणक अर्घ

दोहा ।

सर्वारथ सिद्धि तैं चये, मरुदेवी उर आय ।
दोज असित आषाढ की, जजूँ तिहारे पाय ।।

ओं ह्रीं श्रीआषाढ-कृष्ण-द्वितीयायां गर्भ-कल्याणक-प्राप्ताय श्रीआदि-नाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चैत वदी नौमी दिना, जन्म्या श्री भगवान।
सुरपति उत्सव अति करा, मैं पूजो धरि ध्यान॥
ओं ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय अर्घं।

तृणवत् ऋधि सब छाडिके तप धारयो वन जाय।
नौमी चैत्र असेत की जजूँ तिहारे पाय॥
ओं ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तप कल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय अर्घं।

फाल्गुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान।
इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजो यह थान॥
ओं ह्रीं श्रीफाल्गुनकृष्ण-एकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्री आदि-जिनाय अर्घं।

माघ चतुर्दशि कृष्ण की, मोक्ष गये भगवान्।
भवि जीवो को बोधिके, पहुँचे शिवपुर थान॥
ओं ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय अर्घं

अथ जयमाला

आदीश्वर महाराज, मैं विनती तुम से करूँ,
चारो गति के माहि, मैं दुख पायो सो सुनो।
अष्ट कर्म मैं एकलो यह दुष्ट महादुख देत हो,
कबहू इतर निगोद मे मोकू पटकत करत अचेत हो॥

म्हारी दीनतनी सुन वीनती॥१॥ प्रभु कबहुक पटक्यो नरक मे, जठे जीव महादुख पाय हो। निष्ठुर निरदई नारकी, जठे करत परस्पर घात हो॥ म्हारी०॥२॥

प्रभु नरकतणा दुख अब कहू जठे करत परस्पर घात हो।
कोइयक बाध्यो खंभस्यो पापी दे मुद्गर की मार हो॥

कोइ इक काटें करोतसो, पापी अगतणी दोय फाड़ हो ॥ म्हारी ॥३॥ प्रभु इहविधि दुख भुगतया घणा, फिर गति पाई तिरियंच हो । हिरण बकरा बाछला पशु दीन गरीब अनाथ हो । पकड कसाई जाल मे, पापी काट काट तन खाय हो ॥ म्हारी ॥४॥ प्रभु मै ऊँट बलद भैंसा भयो, जापै लादियो भार अपार हो । नहीं चाल्यो जब गिर परचो, पापी दे सोटनकी मार हो ॥ म्हारी० ॥५॥ प्रभु कोइयक पुण्य संयोग सूं मै तो पायो स्वर्ग निवास हो । देवांगना सग रम रह्यौ जठे भोगनि को परकास हो ॥ म्हारी० ॥६॥ प्रभु संग अप्सरा रम रह्यो कर कर अति अनुराग हो । कबहुँक नंदन वनविषै, प्रभु कवहुंक वनगृह माँहि हो ॥ म्हारी० ॥७॥ प्रभु यहि विधि काल गमायके, फिर माला गई मुरझाय हो । देव थिति सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो । सोच करता तन खिर पडचो, फिर उपज्यो गरभ मे जाय हो ॥ म्हारी० ॥८॥ प्रभु गर्भतणा दुख अब कहूं, जठे सकुडाई की ठौर हो । हलन चलन नहि करसक्यो जठे सघन कीच घनघोर हो ॥ म्हारी० ॥९॥ माता खावे चरपरो फिर लागे तन संताप हो । प्रभु जो जननी तातो भखै, फेर उपजै तन संताप हो ॥ म्हारी० ॥१०॥ औंधे मुख झूलो रह्यो फेर निकसन कौन उपाय हो । कठिन कठिन कर नीसरो, जैसे निसरै जन्त्री मे तार हो ॥ म्हारी० ॥११॥ प्रभु फिर निकसतही धरत्यां पड़चो फिर

लागी भूख अपार हो। रोय-रोय बिलख्यो घनो, दुख वेदनको नहिं पार हो ॥ म्हारी० ॥१२॥ प्रभु दुख मेटन समरथ धनी, याते लागू तिहारे पाय हो। सेवक अर्ज करे प्रभु, मोकूं भवोदधि पार उतार हो। म्हारी दीनतनी सुन वीनती ॥१३॥

दोहा—श्रीजीकी महिमा अगम है, कोई न पावै पार।
मैं मति अल्प अज्ञान हूँ, कौन करे विस्तार ॥

ओ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय महार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

विनती ऋषभ जिनेशकी, जो पढसी मन ल्याय।
सुरगो मे सशय नही, निश्चय शिवपुर जाय ॥

इत्याशीर्वाद ।

श्री बख्तावरसिंह कृत

अथ श्रीशान्तिनाथ जिनपूजा

सर्वारथ सुविमान त्याग गजपुर मे आये।
विश्वसेन भूपाल तासु के नन्द कहाये ॥
पंचम चक्री भये मदन द्वादस मे राजे।
मै सेवू तुम चरण तिष्ठये ज्यो दु:ख भाजे ॥

ओ ह्री श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्र: अत्र अवतर अवतर सवौषट्।
ओ ह्री श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्र: अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।
ओ ह्री श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

नोट—इस पूजा मे गजपुर, नागपुर ये हस्तिनापुर के ही नाम हैं।

अथ अष्टक

पचम उदधि तनो जल निरमल कंचन कलश भरे हरपाय ।
धार देत ही श्रीजिन सन्मुख जन्म जरामृत दूर भगाय ।।
शातिनाथ पचम चक्रेश्वर द्वादश मदन तनो पद पाय ।
तिन के चरण कमल के पूजे रोग शोक दुःख दारिद जाय ।।
ओ ह्री श्रीशातिनाथ जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जल ।१

मलियागिर चदन कदली नदन कुंकुम जल के संग घसाय ।
भव आताप विनाशन कारण चरचू चरण सर्व सुखदाय ।।
शातिनाथ०
ओ ह्री श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय ससार-ताप-विनाशनाय चदन ।२

पुण्यराशि सम उज्ज्वल अक्षत शशि-मरीचि तसु देख लजाय ।
पुंज किये तुम चरणन आगे अक्षय पद के हेतु बनाय ।।
शांतिनाथ०
ओ ह्री श्रीशातिनाथ-जिनेन्द्राय अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान् । ३

सुर पुनीत अथवा अवनी के कुसुम मनोहर लिए मगाय ।
भेट धरत तुम चरणन के ढिग ततक्षिन काम बाण नस जाय ।।
शांतिनाथ०
ओ ह्री श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय काम-बाण-विनाशनाग पुष्पं ।४

भांति-भांति के सद्य मनोहर कीने मै पकवान संवार ।
भर थारी तुम सन्मुख लायो क्षुधा वेदनी वेग निवार ।।
शातिनाथ०
ओ ह्री शातिनाथ—जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं ५।

घृत सनेह करपूर लाय कर दीपक ताके धरे प्रजार।
जग मग जोत होत मदिर मे मोह अध को देत सुटार ।।
शातिनाथ पचम चक्रेश्वर द्वादश मदन तनो पद पाय।
तिनके चरण कमल के पूजे रोग शोक दुख दारिद जाय ।।
ओ ह्री श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीप ।६
देवदारु कृष्णागरु चन्दन तगर कपूर सुगन्ध अपार।
खेऊँ अष्ट करम जारन को धूप धनजय माहि सुडार ।।
शातिनाथ०
ओ ह्री श्रीशातिनाथ जिनेन्द्राय अष्ट कर्मदहनाय धूप निर्व० ।७
नारगी बादाम सुकेला एला दाडिम फल सहकार।
कचन थाल माहि धर लायो अरचत ही पाऊ शिव नार ।।
शान्तिनाथ०
ओ ह्री श्रीशातिनाथ जिनेन्द्राय मोक्ष फल प्राप्तये फल निर्व० । ८
जल फलादि वसु द्रव्य सवारे अर्घ चढाये मगल गाय।
'वखत रतन' के तुम ही साहिब दीजे शिवपुर राज कराय ।।
शातिनाथ०
ओ ह्री श्रीशातिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ निर्व० ।९

पंचकल्याणक

छन्द उपगति

भादव सप्तमि श्यामा, सर्वारथत्याग नागपुर आये।
माता ऐरा नामा, मै पूजू ध्याऊं अर्घ शुभलाये ।।
ओ ह्री श्रीशातिनाथ जिनेन्द्राय भाद्रपद कृष्ण सप्तम्या गर्भकल्याण प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।

जन्मे तीरथ नाथ, वर जेठ असित चतुर्दशी सोहै।
हरिगण नावे माथ, मैं पूजूं शांतिचरण युग जोहै॥
ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्राय ज्येष्ठ-कृष्ण-चतुर्दश्यां जन्म-कल्याण प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

चौदस जेठ अघहारी, कानन में जाय योग प्रभु लीन्हा।
नवनिधिरत्न सुछारी, मैं वन्दूं आतमसार जिन चीन्हा॥
ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्राय ज्येष्ठ-कृष्ण-चतुर्दश्यां तप-कल्याण प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

पौष दसैं उजियारा, अरि घाति ज्ञान भानु जिन पाया।
प्रातिहार्य वसुधारा, मैं सेऊं सुर नर जासु यश गाया॥
ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्राय पौष-शुक्ला-दशम्यां ज्ञान-कल्याण प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

सम्मेद शैलभारी, हन कर अघाति मोक्ष जिन पाई।
जेठ चतुर्दशि-कारी, मैं पूजूं सिद्धथान सुखदाई॥
ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्राय ज्येष्ठ-कृष्ण-चतुर्दश्यां मोक्ष-कल्याण प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

जयमाला

छप्पय छन्द

भये आप जिनदेव जगत में सुख विस्तारे।
तारे भव्य अनेक तिन्हों के संकट टारे॥
टारे आठों कर्म मोक्ष सुख तिनको भारी।
भारी विरद निहार लही मैं शरण तिहारी॥

तिहारे चरणन को नमू दु ख दारिद सताप हर ।
हर सकल कर्म छिन एक मे, शांति जिनेश्वर शांति कर ॥१॥

दोहा—सारग लक्षण चरण मे, उन्नत धनु चालीस ।
हाटक वर्ण शरीर द्युति, नमू शांति जग ईश ॥२॥

छन्द भुजग-प्रयात

प्रभो आपने सर्व के फन्द तोड़े,
गिनाऊ कछू मै तिनो नाम थोड़े ।
पड़ो अबु के बीच श्रीपाल राई,
जपो नाम तेरो भए थे सहाई ॥३॥
धरो रायने सेठ को सूलिका पै,
जपी आपके नाम की सार जापै ।
भये थे सहाई तबै देव आये,
करी फूल वर्षा सिहासन बनाये ॥४॥
जबै लाख के धाम वह्नि प्रजारी,
भयो पाण्डवो पै महा कष्ट भारी ।
जबै नाम तेरे तनी टेर कीनो,
करी थी विदुर ने वही राह दीनो ॥५॥
हरी द्रोपदी धातुकी खड माही,
तुम्हीं वहां सहाई भला और नाहीं ।
लियो नाम तेरो भलो शील पालो,
बचाई तहां ते सबै दुःख टालो ॥६॥

जबै जानकी राम ने जो निकारी,
धरे गर्भ को भार उद्यान डारी ।
रटो नाम तेरो सबै सौख्यदाई,
करी दूर पीडा सु क्षण ना लगाई ॥७॥
व्यसन सात सेवें करें तस्कराई,
सुअंजन से तारे घडी ना लगाई ।
सहे अंजना चंदना दु.ख जेते,
गये भाग सारे जरा नाम लेते ॥८॥
घड़े बीच मे सास ने नाग डारो,
भलो नाम तेरो जु सोमा सभारो ।
गई काढने को भई फूलमाला,
भई है विख्यात सबै दु ख टाला ।९।
इन्हे आदि देके कहां लो वखानें,
सुनो विरद भारी तिहूँ लोक जानें ।
अजी नाथ मेरी जरा ओर हेरो,
वडी नाव तेरी रतो वोझ मेरो ॥१०॥
गहो हाथ स्वामी करो वेग पारा,
कहूँ क्या अवै आपनी मै पुकारा ।
सबै ज्ञान के बीच भासी तुम्हारे,
करो देर नाहीं मेरे शांति प्यारे ॥११॥

घत्ता

श्री शांति तुम्हारी, कीरत भारी, सुर नरनारी गुणमाला।
'बख्तावर'ध्यावे, रतन सु गावे, मम दुख दारिद सब टाला १२

ओ ह्री श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घ-पद-प्राप्ताय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।

अजी एरा नन्दन छबि लखत ही आप अरण।
धरैं लज्जा भारी करत श्रुति सो लाग चरण ।।
करैं सेवा सोई लहत सुख सो सार क्षण मे।
घने दीना तारे हम चहत हैं बास तिन मे ।।

इत्याशीर्वाद ।



श्री पार्श्वनाथ जिन पूजा

गीता छन्द

वर स्वर्ग प्राणत को विहाय, सुमात वामा सुत भये।
विश्वसेन के पारस जिनेश्वर, चरन जिनके सुर नये ।।
नव हाथ उन्नत तन विराजै, उरग लच्छन पद लसैं।
थापूं तुम्हे जिन आय तिष्ठो करम मेरे सब नसैं ।।१।।

ओ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। सवौषट्।
ओ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठ ठ ।
ओ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्

अथाष्टक—छद नाराच ।

क्षीरसोम के समान अम्बुसार लाइये।
हेमपात्र धारिकैं सु आपको चढाइये ।

पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥१॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जल नि०

चदनादि केशरादि स्वच्छ गध लीजिये ।
आप चरण चर्च मोहताप को हनीजिये ॥पार्श्व०॥२॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चदन नि० ।

फेन चद के समान अक्षतान् लाइके ।
चर्नके समीप सार पुंजको रचाइके ॥पार्श्व॥३॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षत निर्व० ।

केवडा गुलाब और केतकी चुनाइके
धार चर्नके समीप कामको नसाइकै ॥पार्श्व॥४॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्व० ।

घेवरादि बावरादि मिष्ट सद्य मे सने ।
आप चर्न चर्चतें क्षुधादिरोग को हने ॥पार्श्व॥५॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्व० ।

लाय रत्न दीपको सनेहपूर के भरू ।
वातिका कपूर बारि मोह ध्वातकों हरू ॥पार्श्व।६।

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहाधकार विनाशनाय दीप निर्व०।

धूप गध लेयके सुअग्निसग जारिये ।
तास धूप के सुसग अष्टकर्म वारिये ॥पार्श्व॥७॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्टकम दहनाय धूप निर्व० ।

खारिकादि चिरभटादि रत्न थाल मे भरूं ।
हर्ष धारिकै जजू सुमोक्ष सौख्य को वरू
पार्श्व नाथ देव सेव आपकी करूँ सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नही कदा ।।८।।
ओ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फल निर्व० ।
नीरगध अक्षतान पुष्प चारु लीजिये ।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घ लै जजीजिये ।।पार्श्व।।९।
ओ ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ निर्व० ।

पचकल्याणक ।

शुभप्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।
वैशाख तनी दुतिकारी, हम पूजें विघ्न निवारी ।।१।।
ओ ह्री वैशाखकृष्णद्वितीयाया गर्भमगल मडिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता ।
श्यामा तन अद्भुत राजै, रवि कोटिक तेज सु लाजै ।।२।।
ओ ह्री पौषकृष्णएकादश्या जन्ममगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
कलि पौष एकादशि आई, तब बारह भावन भाई ।
अपने कर लौंच सु कीना, हम पूजै चरन जजीना ।३।
ओ ह्रीं पौषकृष्णएकादश्या तपोमगल प्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेद्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवल ज्ञान उपाई ।
तब प्रभु उपदेश जु कीना, भवि जीवन को सुख दीना ।।४।।
ओ ह्री चैत्रकृष्णचतुर्थ्या केवलज्ञानमडिताय श्री पार्श्व जिनेन्द्राय अर्घ ।

सित साते सावन आई, शिवनारि वरी जिनराई ।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजें मोक्ष कल्याना ।।५।।

ओं ह्रीं श्रावण-शुक्ल-सप्तम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

।। अथ जयमाला ।। छन्द

पारसनाथ जिनेंद्रतने वच, पौन भखी जरते सुन पाये ।
करयो सरधान लह्यो पद आन भये पद्मावति शेष कहाये ।
नाम प्रताप टरैं संताप सु, भव्यन को शिवशर्म दिखाये ।
हे विश्वसेन के नंद भले, गुण गावत हैं तुमरे हर्षाये ।।१।।

दोहा—केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
लक्षण उरग निहार पग, वंदो पारसनाथ ।।

पद्धरी छंद

रची नगरी छह मास अगार । बने चहुं गोपुर शोभ अपार ।
सु कोट तनी रचना छवि देत । कंगूरन पै लहकें बहुकेत ।३।
बनारस की रचना जु अपार । करी बहु भाँति धनेश तैयार ।
तहाँ विश्वसेन नरेन्द्र उदार । करैं सुख वाम सु दे पटनार ।४।
तज्यो तुम प्रानत नाम विमान । भये तिनके वर नंदन आन ।
तबै सुर इंद्र नियोगनि आय । गिरिंद करी विधि न्हौन सुजाय॥
पिता-घर सौंपि गये निज धाम । कुवेर करै वसु जाम सुकाम।
बढ़े जिन दोज मयंक समान । रमैं बहु बालक निर्जर आन ।६।
भए जब अष्टम वर्ष कुमार । धरे अणुव्रत्त महा सुखकार ।
पिता जब आन करी अरदास । करो तुम ब्याह वरो ममआस

फरी तव नाहि रहे जग चद । किये तुम काम कषाय जुमद ॥
चढे गजराजकुमारन सग । सुदेखत गंगतनी सुतरंग ॥८॥
लख्यो इक रंक करै तप घोर । चहूँदिशि अगनि वलै अति जोर
कहै जिननाथ अरे सुन भ्रात । करै बहु जीवन की मत घात९
भयो तव कोप कहै कित जीव । जले तब नाग दिखाय सजीव।
लख्यो यह कारण भावन भाय । नये दिव ब्रह्मरिषीसुर आय१०
तर्वाहि सुर चार प्रकार नियोग । धरी शिविका निज कध मनोग
कियो वन माहिं निवास जिनद । धरे व्रत चारित आनदकद११
गहे तह अष्टम के उपवास । गये धनदत्त तने जु अवास ।
दियो पयदान महासुखकार । भई पन वृष्टि तहा तिहिं बार१२
गये तब कानन माहि दयाल । धरयो तुम योग सबहिं अघ टाल
तबै वह धूम सुकेतु अयान । भयो कमठाचर को सुर आन१३
करै नभ गौन लखे तुम धीर । जु पूरब बैर विचार गहीर।
कियो उपसर्ग भयानक घोर । चली बहु तीक्षण पवन झकोर१४
रह्यो दशहू दिश मे तम छाय । लगी वहु अग्नि लखी नहिं जाय
सुरुण्डन के बिन मुण्ड दिखाय । पडै जल मूसलधार अथाय ।१५
तबै पद्मावति-कत धनिद । नये जुग आय जहाँ जिनचद ।
भग्योतबरक सुदेखत हाल । लह्यो तव केवलज्ञानविशाल ।१६
दियो उपदेश महा हितकार । सुभव्यन बोध समेद पधार ।
सुवर्णभद्र जहाँ कूट प्रसिद्ध । वरी शिवनारि लही वसुरिद्ध ।१७।
जजू तुम चरन दोउ कर जोर । प्रभूलखिये अबही मम ओर ।
कहै 'बखतावर' रत्नवनाय । जिनेश हमे भव पार लगाय ।१८

घत्ता—

जय पारस देवं सुरकृत सेवं। वंदत चरनं सुनागपती।
करुणा के धारी पर उपकारी, शिवसुखकारी कर्महनी ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल—जो पूजैं मन लाय भव्य पारस प्रभु नितही।
ताके दुख सब जांय भीति व्यापै नहिं कितही॥
सुख संपति अधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे।
अनुक्रमसों शिव लहै, 'रत्न' इमि कहैं पुकारे॥२०॥

इत्याशीर्वादः।

श्री महावीर जिनपूजा

मत्तगयन्द

श्रीवीर महा अतिवीर, सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि०।

मलयागिर चन्दनसार, केसर सग घसो।
प्रभु भवआताप निवार, पूजत हिय हुलसो। श्रीवीर०

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदन नि० ॥२॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीनो थार भरी।
तसु पुंज धरो अविरुद्ध, पावो शिवनगरी। श्रीवीर०

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्व० ॥३॥

सुरतरु के सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे।
सो मनमथ भंजन हेत, पूजो पद थारे ॥ श्रीवीर०

ओं ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि० ॥४॥

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी।
पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी। श्रीवीर०

ओ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि० ॥५॥

तमखंडित मंडित नेह, दीपक जोवत हो।
तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हो ॥ श्रीवीर०

ओ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीप निर्व० ।६

हरिचंदन अगर कपूर, चूर सुगंध करा।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा ॥ श्रीवीर०

ओ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि० ॥७॥

रितुफल कल-वर्जित लाय, कंचन थार भरो।
शिव फलहित हे जिनराय, तुम ढिग भेंट धरो।

श्री वीर महा अतिवीर, सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति दायक हो॥
ओं ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फल निर्व० ॥८॥

जल फल वसु सजि हिम थार, तन मन मोद धरो।
गुणगाऊं भवदधितार, पूजत पाप हरो। श्रीवीर०
ओं ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तय अर्घं निर्व० ॥६॥

पंचकल्याणक। राग टप्पा।

मोहि राखो हो सरना, श्री वर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो०॥
गरभ साढसित छट्ट लियो थित, त्रिशला उर अघ हरना।
सुर सुरपति तित सेव करो नित, मैं पूजूं भवतरना॥ मोहि०
ओं ह्रीं आषाढ शुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगल मंडिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

जनम चैत सित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कनवरना।
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजो भवहरना॥
मोहि राखो हो०॥
ओं ह्रीं चैत्रशुक्ला त्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

मगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना।
नृपति कूलघर पारन कीनो, मैं पूजों तुम चरना॥ मोहि
राखो हो०॥
ओं ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥३॥

शुक्लदशैं वैसाख दिवस अरि, घात चतुक क्षय करना।
केवललहि भवि भवसर तारे, जजो चरन सुख भरना ॥
मोहि राखो हो० ॥

ओं ह्रीं वैशाखशुक्ल-दशम्या केवलज्ञानमंडिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतैं वरना।
गणफनिवृन्द जजें तित बहुविध, मैं पूजों भयहरना ॥
मोहि राखो हो० ॥

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णअमावस्याया मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

जयमाला। छन्द हरिगीता। २८ मात्रा।

गणधर अशनिधर, चक्रधर हलधर, गदाधर वरवदा।
अरु चापधर, विद्यासुधर तिरशूलधर सेवहिं सदा ॥
दुखहरन आनंदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं।
सुकुमाल गुण मनिमाल उन्नत भालकी जयमाल है ॥१॥

छन्द घत्तानन्द।

जय त्रिशलानंदन, हरिकृतवदन, जगदानंदन चंदवरं।
भवतापनिकंदन, तनकनमंदन, रहित सपंदन नयन धरं ।२।

छन्द त्रोटक ॥

जय केवलभानु-कला-सदनं। भवि-कोक-विकाशन कंदवनं।
जगजीत महारिपु मोहहर। रजज्ञान-दृगांवर चूर कर ॥१॥
गर्भादिक-मंगलमंडित हो। दुखदारिदको नितखंडित हो।
जगमांहि तुम्ही सतपंडित हो। तुमहीभवभाव-विहंडित हो ।२।

हरिवंश सरोजनको रवि हो। बलवत महत तुम्हीं कवि हो।
लहि केवलधर्म प्रकाशकियो। अबलों सोइमारग राजतियो।३।
पुनि आप तने गुण माहि सही। सुरमग्न रहै जितने सवही।
तिनकी वनिता गुनगावत हैं। लय माननिसो मनभावत है।४।
पुनि नाचत रग उमग-भरी। तुश्र भक्ति विषै पग एम धरी।
झननं झनन झनन झननं। सुर लेत तहा तननं तनन।।५।।
घनन घनन घनघट वजै।। दृमद दृमद मिरदग सजै।
गगनागन-गर्भगता सुगता। ततता ततता अतता वितता।६।
धृगतां धृगता गति बाजत है। सुरताल रसालजु छाजत है।
सननं सननं सनन नभमे। इकरूप अनेक जु धारि भ्रमे।।७।।
कई नारि सुवीन वजावत हैं। तुमरो जस उज्ज्वल गावत है।
करताल विषै करताल धरैं। सुरताल विशाल जुनाद करैं।८।
इन आदि अनेक उछाह भरी। सुरभक्ति करें प्रभुजो तुमरी।
तुमही जग जीवन के पितु हो। तुमही विनकारनतें हितु हो।६।
तुमही सब विघ्न विनाशन हो। तुमही निज आनंदभासन हो।
तुमही चितचिंतितदायक हो। जगमाहि तुम्हीं सबलायकहो१०
तुमरे पन मंगल माहि सही। जिय उत्तम पुन्य लियो सवही।
हमको तुमरी शरणागत है। तुमरे गुन मे मन पागत है।।११।।
प्रभु मोहिय आप सदा वसिये। जबलो वसु कर्म नहीं नसिये।
तबलो तुम ध्यान हिये वरतो। तबलो श्रुतचिंतन चित्त रतो।१२
तबलों व्रत चारित चाहतु हो। तबलों शुभभाव सुगाहतु हो।
तबलो सतसगति नित्त रहो। तबलों मम संजम चित्त गहो।१३

जबलो नहिं नाश करो अरिको, शिव नारि वरो समता धरिको
यह द्यो तबलो हमको जिनजी। हम जाचतु हैं इतनी सुनजी १४
घत्तानंद-श्रीवीरजिनेशा नमित सुरेशा,नाग नरेशा भगति भरा।
'वृन्दावन' ध्यावै विघन नशावै,वांछित पावै शर्म वरा ॥१५॥
ओ ह्री श्री वर्द्धमान जिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
दोहा—श्री सन्मति के जुगल पद, जो पूजे धरि प्रीति ।
वृन्दावन सो चतुर नर, लहैं मुक्ति नवनीत ॥
इत्याशीर्वाद ।

समुच्चय महार्घ

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूं सिद्ध पूजूं चाव सा ।
आचार्य श्री उवझाय पूजूं साधु पूजूं भाव सो ॥१॥
अर्हन्न-भाषित बैन पूजूं द्वादशांग रचे गनी ।
पूजूं दिगम्बर गुरुचरन शिव हेतु सब आशा हनी ॥२॥
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि दया-मय पूजूं सदा ।
जजुं भावना षोडश रत्नत्रय जा बिना शिव नहिं कदा ॥३॥
त्रैलोक्यके कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय जजूं ।
पन मेरु नन्दीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूं ॥४॥
कैलाश श्री सम्मेद श्री गिरनार गिरि पूजूं सदा ।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा ॥५॥

चौबीस श्री जिनराज पूजूं बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस-वसु जपि होय पति शिवगेह के ॥६॥

दोहा—जल गंधाक्षत पुष्प चरु दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूज हूं बहु विधि भक्ति बढ़ाय ॥७॥

ओ ह्री महार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति पाठ (जुगल किशोर)

शास्त्रोक्त विधि पूजा महोत्सव सुरपती चक्री करें।
हम सारिखे लघु पुरुष कैसे यथाविधि पूजा करें॥
धन क्रिया ज्ञान रहित न जानें रीति पूजन नाथ जी।
हम भक्ति वश तुम चरण आगे जोड लीने हाथ जी ॥१॥

दुखहरण मंगल करण आशा भरन जिन पूजा सही।
यो चित्त मे सरधान मेरे शक्ति है स्वयमेव ही॥
तुम सारिखे दातार पाए काज लघु जाचूं कहा।
मुझ आप सम कर लेहु स्वामी यही इक वांछा महा।२।

संसार भीषण विपिन मे वसुकर्म मिल आतापियो।
तिस दाह तें आकुलित चित है शांति थल कहु ना लियो॥
तुम मिले शांतिस्वरूप शांति करण समरथ जगपती।
वसु कर्म मेरे शांत करदो शांतिमय पंचम गती।३।

जबलौं नहीं शिव लहूँ तबलौं देहु यह धन पावना।
सतसंग शुद्धाचरण श्रुत-अभ्यास आतम भावना॥

तुम बिन अनतानत काल गयो रुलत जगजाल मे ।
अब शरण आयो नाथ दुहु कर जोड नावत भाल मैं ।४।
दोहा—करप्रमाण के मान तै गगन नपै किहि भत ।
त्यों तुम गुण वर्णन करत कवि पावै नहि अत ।।
यहाँ नो वार णमोकार मत्र जपना चाहिए ।

विसर्जन पाठ (जुगल किशोर)

सम्पूर्ण विधि कर वीनऊ इस परम पूजन ठाठ मे ।
अज्ञानवश शास्त्रोक्त विधि तें चूक कीनो पाठ मे ।।
सो होहु पूर्ण समस्त विधि-वत तुम चरण की शरणतै ।
वदौं तुम्हे कर जोरिकें उद्धार जामन मरणतै ।१।
आह्वानन स्थापन तथा सन्निधिकरण विधान जी ।
पूजन विसर्जन यथाविधि जानूं नहीं गुणखान जी ।।
जो दोष लागो सो नशौ सब तुम चरण की शरणतै ।
वदो तुम्हे कर जोरि कर उद्धार जामन मरणतै ।२।
तुम रहित आवागमन आह्वानन कियो निज भाव मे ।
विधि यथाक्रम निजशक्ति सम पूजन कियो अतिचाव मे ।।
करहूं विसर्जन भाव ही मे तुम चरण की शरणतें ।
वदो तुम्हे कर जोरि कर उद्धार जामन मरणतें ।।
दोहा—तीन भुवन तिहू काल मे, तुमसा देव न और ।
सुख कारण सकट हरण, नमो 'जुगल' कर जोर ।।
इत्याशीर्वाद ।

आशिका लेने का छन्द ।

दोहा—श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।
भव भवके पातक कटें, दुःख दूर हो जाय ॥

भजन

नाथ! तोरी पूजाको फल पायो, मेरेयो निश्चय अब आयो ।टेक।
मेढक कमल पाखड़ी मुखमे, वीर जिनेश्वर धायो,
श्रेणिक गजाके पगतल मूवो, तुरत स्वर्गपद पायो ।
नाथ! तोरी पूजाको फलपायो, मेरेयो निश्चय अब आयो ॥१॥
मैनासुन्दरि शुभमन सेती, सिद्धचक्र गुण गायो,
अपने पतिको कोढ गमायो, गधोदक फल पायो ।
नाथ! तोरी पूजाको फल पायो, मेरेयो निश्चय अब आयो ॥२॥
अष्टा-पद मे भरत नरेश्वर, आदिनाथ मन लायो,
अष्टद्रव्य से पूजा कीनी, अवधिज्ञान दरशायो ।
नाथ! तोरी पूजाको फल पायो, मेरेयो निश्चय अब आयो ॥३॥
अंजनसे सब पापी तारे, मेरो मन हुलसायो,
महिमा मोटी नाथ तुम्हारी, मुक्तिपुरी सुख पायो ।
नाथ! तोरी पूजाको फल पायो, मेरेयो निश्चय अब आयो ॥४॥
थकि थकि हारे सुरपति, नरपति आगम भीख जतायो,
देवेन्द्रकीर्ति गुरु ज्ञान मनोहर, पूजा ज्ञान बतायो ।
नाथ! तोरी पूजाको फल पायो, मेरेयों निश्चय अब आयो ॥५॥

भजन

महाराज चरण पूज के खुशहाल दिल भया।
कहाँ लौ करूँ बयान ज्यो शशि देख तम गया ॥
आया हू तुम दरबार मे धन्य आज मो भया।
छवि देख के प्रभू जी नैना सफल भया ॥
शुभकर्म तो उदय भये निज पाप तम गया।
अशुभ कर्म तुझे देखते ही क्षीण हो गया ॥
कहता है "जगत राम" समझ बूझ मैं लिया।
जिन नाम थारा ले लिया सोई पार हो गया ॥

भाषा स्तुति

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविक मन आनन्दनो।
श्रीनाभिनन्दन जगतवंदन, आदिनाथ निरजनो।१।
तुम आदिनाथ अनादि सेऊँ, सेय पदपूजा करूँ।
कैलाश गिरिपर ऋषभ जिनवर, पदकमल हिरदै धरूँ।२।
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली।
यह विरद सुनकर शरण आयो, कृपा कीज्यो नाथजी।३।
तुम चंद्रवदन सु चंद्रलच्छन चद्रपुरि परमेश्वरो।
महासेननदन, जगतवंदन चद्रनाथ जिनेश्वरो।४।
तुम शाति पांचकल्याण पूजो, शुद्धमनवचकाय जू।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलाय जू।५।

तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमल विकाशनो।
श्री नेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो।६।
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश करी।
चारित्ररथ चढि भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी।७।
कदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो।
अश्वसेननंदन जगतवंदन सकलनघ मगल कियो।८।
जिनधरी बालकपणे दीक्षा, कमठ-मान विदारकै।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमो शिरधारकै।९।
तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जानि दया करो।
सिद्धार्थनंदन जगतवदन, महावीर जिनेश्वरो।१०।
छत्र तीन सोहैं सुरनर मोहैं, वीनती अब धारिये।
करजोड़ि सेवक वीनवै प्रभु आवागमन निवारिये।११।
अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहों।
करजोड यो वरदान मांगू, मोक्षफल जावत लहों।१२।
जो एक माहीं एक राजै, एक माहि अनेकनो।
इक अनेककी नहीं सख्या, नमू सिद्ध निरजनो।१३।

चौपाई

मैं तुम चरणकमलगुणगाय, बहुविधि भक्ति करों मनलाय।
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवाफल दीजै मोहि।१४।
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोह।
बारबार मैं विनती करूं, तुम से या भवसागर तरूं।१५।

नाम लेत सब दुख मिटजाय तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवनके देव, मैं तो करूं चरण की सेव ॥१६॥
जिन पूजा तैं सब सुख होय. जिन पूजा सम अवर न कोय।
जिन पूजा तैं स्वर्ग विमान अनुक्रम तैं पावे निर्वाण ॥१७॥
मैं आयो पूजनके काज मेरो जन्म सफल भयो आज।
पूजा करके नवाऊं शीश. मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥१८॥

दोहा

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीब की वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥१९॥
दर्शन करते देव के, आदि मध्य अवसान।
सुरगन के सुख भोगकर पावैं मोक्ष निदान ॥२०॥
जैसी महिमा तुमविषैं और धरैं नहिं कोय।
जो सूरज मे ज्योति है, नहिं तारागण सोय ॥२१॥
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमांहि पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतैं. अंधकार विनशाय ॥२२॥
बहुत प्रशंसा क्या करूं मैं प्रभु बहुत अजान।
पूजाविधि जानूं नहीं सरन राख भगवान ॥२३॥

———

श्री देव-शास्त्र-गुरु-पूजा

(श्री युगल जी)

केवल-रवि-किरणो मे जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर,
जिस श्री जिनवाणी मे होता, तत्वो का सुन्दरतम दर्शन ।
सद्दर्शन-बोध-चरण-पथ पर, अविरल जो बढते है मुनिगण,
उन देव परम आगम गुरु को, शत-शत वंदन शत-शत वदन ॥

ॐ ह्री श्री देव शास्त्र गुरुसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं
ओं ह्री श्री देव शास्त्र गुरुसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनं ।
ओं ह्री श्री देव शास्त्र गुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्

इन्द्रिय के भोग मधुर विष सम, लावण्यमयी कचन काया ।
यह सब कुछ जग की क्रीडा है, मै अब तक जान नहीं पाया ॥
मै भूल स्वय के वैभव को, पर ममता मे अटकाया हूँ ।
अब निर्मल सम्यक् नीर लिये, मिथ्या मल धोने आया हूँ ॥१॥

ओं ह्री श्री देव शास्त्र-गुरुभ्यो मिथ्यात्व मल विनाशनाय जल नि० ।

जड चेतन की सब परणति प्रभु ! अपने-अपने मे होती है ।
अनुकूल कहे प्रतिकूल कहे, यह झूठी मन की वृत्ति है ॥
प्रतिकूल सयोगो मे क्रोधित, होकर ससार बढाया है ।
सतप्त हृदय प्रभु ! चन्दन सम, शीतलता पाने आया हू ॥२॥

ॐ ह्री श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो क्रोध कषाय मल विनाशनाय चदन निर्व०

उज्ज्वल हूँ कुन्द धवल हूँ प्रभु ! पर से न लगा हूँ किंचित भी ।
फिरभी अनुकूल लगें उनपर, करता अभिमान निरन्तर ही ॥

जड़ पर झुक-झुक जाता चेतन, नश्वर वैभव को अपनाया।
निज शाश्वत अक्षत-निधि पाने,
अब दास चरण-रज मे आया ।।३।।
ॐ ह्री श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मान कषाय मल विनाशनाय अक्षतं नि०
यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन मे माया कुछ शेष नहीं ।
निज अन्तर का प्रभु भेद कहू, उसमे ऋजुता का लेश नही।।
चिंतन कुछ,फिर सम्भाषण कुछ, क्रिया कुछ की कुछ होती है।
स्थिरता निज मे प्रभु पाऊँ जो,
अन्तर का कालुष धोती है ।।४।।
ॐ ह्री श्री देव शास्त्र गुरुभ्यो माया कषाय मल विनाशनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।।
अब तक अगणित जड द्रव्यो से,प्रभु! भूख न मेरी शात हुई ।
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही ।।
युग युग से इच्छा सागर मे, प्रभु ! गोते खाता आया हूं ।
पचेन्द्रिय मन के षट्रस तज, अनुपम रस पीने आया हू ।।
ॐ ह्री श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो लोभ कषाय मल विनाशनाय नैवेद्य नि०
जग के जड दीपक को अब तक समझा था मैने उजियारा,
झझा के एक झकोरे मे जो बनता घोर तिमिर कारा ।
अतएव प्रभो ! यह नश्वर दीप, समर्पण करने आया हू ।
तेरी अन्तर लौ से निज अन्तर दीप जलाने आया हू ।।६।।
ॐ ह्री श्री देव शास्त्र गुरुभ्यो अज्ञान विनाशनाय दीप नि०।

जड़ कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी।
मै राग-द्वेष किया करता, जब परिणति होती जड केरी
यो भाव करम या भाव मरण, युग युग से करता आया हू।
निज अनुपम गध अनल से प्रभु, पर गध जलाने आया हू।७।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो विभाव परिणति विनाशनाय धूप नि०

जग मे जिसको निज कहता मैं, वह छोड मुझे चल देता है,
मैं आकुल व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है।
मै शान्त निराकुल चेतन हू, है मुक्ति रमा सहचर मेरी,
यह मोह तडक कर टूट पडे प्रभु ! सार्थक फल पूजा तेरी।८।
ॐ ह्री श्री देव शास्त्र गुरुभ्यो मोक्ष पद प्राप्ताय फल निर्व०।

क्षणभर निज रस को पी चेतन, मिथ्या मलको धो देता है,
काषायिक भाव विनष्ट किये निज आनन्द अमृत पीता है।।
अनुपमसुख तव विलसित होता, केवल रवि जगमग करता है
दर्शन बल पूर्ण प्रकट होता, यह ही अर्हंत अवस्था है।।
यह अर्घ समर्पण करके प्रभु ! निज गुण का अर्घ बनाऊगा।
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु ! अर्हंत अवस्था पाऊंगा।९।
ॐ ह्री श्री देव शास्त्र गुरुभ्यो अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ निर्व०।

'स्तवन'

भव वन मे जी भर घूम चुका,
कण कण को जी भर भर देखा।
मृग-सम मृग तृष्णा के पीछे,
मुझको न मिली सुख की रेखा।।१।।

झूठे जग के सपने सारे,
झूठी मन की सब आशायें।
तन-जीवन-यौवन-अस्थिर है,
क्षण भगुर पल मे मुरझाये ॥२॥
सम्राट् महा बल सेनानी,
उस क्षण को टाल सकेगा क्या।
अशरण मृत काया मे हर्षित,
निज जीवन डाल सकेगा क्या ॥३॥
ससार महा दुख सागर के,
प्रभु दुखमय सुख आभासो मे।
मुझको न मिला सुख क्षण भर भी,
कचन-कामिनि-प्रासादो मे ॥४॥
मै एकाकी एकत्व लिए,
एकत्व लिए सब ही आते।
तन धन को साथी समझा था,
पर वे भी छोड चले जाते ॥५॥
मेरे न हुए ये मै इनसे,
अति भिन्न अखण्ड निराला हूं।
निज मे पर से अन्यत्व लिए,
निज सम रस पीने वाला हूं ॥६॥
जिसके शृङ्गारो मे मेरा,
यह महगा जीवन घुल जाता।

अत्यन्त अशुचि जड काया से,
इस चेतन का कैसा नाता ॥७॥
दिन रात शुभाशुभ भावो से,
मेरा व्यापार चला करता।
मानस वाणी और काया से,
आश्रव का द्वार खुला रहता ॥८॥
शुभ और अशुभ की ज्वाला से,
झुलसा है मेरा अन्तस्थल।
शीतल समकित किरणें फूटें,
संवर से जागे अन्तर्बल ॥९॥
फिर तप की शोधक वन्हि जगे,
कर्मों की कडियां टूट पड़ें।
सर्वाङ्ग निजात्म प्रदेशो से,
अमृत के निर्झर फूट पडें ॥१०॥
हम छोड चले यह लोक तभी,
लोकात विराजें क्षण मे जा।
निज लोक हमारा वासा हो,
फिर भव बन्धन से हमको क्या ॥११॥
जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो!
दुर्नयतम सत्वर टल जावे।
बस ज्ञाता-दृष्टा रह जाऊं,
मद-मत्सर मोह-विनश जावे ॥१२॥

चिर रक्षक धर्म हमारा हो,
हो धर्म हमारा चिर साथी।
जग मे न हमारा कोई था,
हम भी न रहे जग के साथो ॥१३॥
चरणो मे आया हू प्रभुवर,
शीतलता मुझ को मिल जावे।
मुरझाई ज्ञान लता मेरी,
निज अन्तर्बल से खिल जावे ॥१४॥
सोचा करता हूं भोगो से,
बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला।
परिणाम निकलता है लेकिन,
मानो पावक मे घी डाला ॥१५॥
तेरे चरणो की पूजा से,
इन्द्रिय सुख की ही अभिलाषा।
अब तक न समझ ही पाया प्रभु वर !
सच्चे सुख की भी परिभाषा ॥१६॥
तुम तो अविकारी हो प्रभु वर !
जग में रहते जग से न्यारे।
अतएव झुके तव चरणो मे,
जग के माणिक मोती सारे ॥१७॥
स्याद्वाद मयी तेरी वाणी,
शुभनय के झरने झरते हैं।

उस पावन नौका पर लाखों,
प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं ॥१८॥
हे गुरुवर ! शाश्वत सुख-दर्शक,
यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है।
जग की नश्वरता का सच्चा,
दिग्दर्शन करने वाला है ॥१९॥
जब जग विषयों मे रच पच कर,
गाफिल निद्रा में सोता हो।
अथवा वह शिव के निष्कंटक,
पथ में विष-कंटक बोता हो ॥२०॥
हो अर्ध निशा का सन्नाटा,
बन में बनचारी चरते हों।
तब शान्त निराकुल मानस तुम,
तत्वों का चिंतन करते हो ॥२१॥
करते तब शैल नदी तट पर,
तरु तल वर्षा की झड़ियों में।
समता रस पान किया करते,
सुख दुख दोनो की घड़ियों में ॥२२॥
अन्तर ज्वाला हरती वाणी,
मानो झडती हो फुलझड़ियां।
भव बन्धन तड तड़ टूट पड़ें,
खिल जावें अन्तर की कलियां ॥२३॥

तुम सा दानी क्या कोई हो,
जग को देदीं जग की निधियां।
दिन रात लुटाया करते हो,
सम-शम की अविनश्वर मणिया।।२४।।

हे निर्मल देव ! तुम्हे प्रणाम, हे ज्ञान दीप आगम ! प्रणाम।
हे शान्ति त्याग के मूर्तिमान, शिव-पथ-पंथी गुरुवर ! प्रणाम।।
ॐ ह्री श्री देव शास्त्र गुरुभ्यो पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा

श्री चन्द्रप्रभु जिन पूजा (देहरा)

।। स्थापना ।।

शुभ पुण्य उदय से ही प्रभुवर, दर्शन तेरा कर पाते है।
केवल दर्शन से ही प्रभु, सारे पाप मेरे कट जाते है।।
देहरे के चन्द्रप्रभु स्वामी, आह्वानन करने आया हूँ।
मम हृदय कमल मे आ तिष्ठो तेरे चरणो मे आया हूँ।

ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन।
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरण।

।। अथाष्टक ।।

भोगो मे फँसकर हे प्रभुवर, जीवन को वृथा गँवाया है।
इस जन्म-मरण से मुझे नहीं, छुटकारा मिलने पाया है।।

मन मे कुछ भाव उठे मेरे, जल झारी मे भर लाया हूँ ।
मन के मिथ्या मल धोने को, चरणो में तेरे आया हूँ ।।

ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ् जिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलम् ।

निज अन्तर शीतल करने को, चन्दन घिसकर ले आया हूँ ।
मन शान्त हुआ ना इससे भी, तेरे चरणो में आया हूँ ।।
क्रोधादि कषायों के कारण, सतप्त हृदय प्रभु मेरा है ।
शीतलता मुझको मिल जाये, हे नाथ सहारा तेरा है ।।

ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभृजिनेन्द्राय ससारताप विनाशनाय चन्दन० ।

पूजा में ध्यान लगाने को, अक्षत धोकर ले आया हूँ ।
चरणो में पुज चढाकरके, अक्षयपद पाने आया हूँ ।।
निर्मल आत्मा होवे मेरी, सार्थक पूजा तब तेरी है ।
निज शाश्वत अक्षयपद पाऊँ, ऐसी प्रभु विनती मेरी है ।।

ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ् जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम् नि० ।

पर गध मिटाने को प्रभुवर, वह पुष्प सुगंधी लाया हूँ ।
तेरे चरणो में अर्पित कर, तुमसा ही होने आया हूँ ।।
श्री चन्द्रप्रभु यह अरज मेरी भवसागर पार लगा देना ।
यह काम अग्नि का रोग बढ़ा, छुटकारा नाथ दिला देना ।।

ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्प नि० ।

दुख देती है तृष्णा मुझको, कैसे छुटकारा पाऊँ मैं ।
हे नाथ बता दो आज मुझे, चरणो में शीश झुकाऊँ मैं ।।

यह क्षुधा मिटाने को प्रभुवर नैवेद्य बनाकर लाया हूँ।
हे नाथ मिटादो क्षुधा मेरी, भव भव मे फिरता आया हूं ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यम् नि०।

यह दीपक की ज्योती प्यारी, अँधियारा दूर भगाती है।
पर यह भी नश्वर है प्रभुवर, झञ्झा इसको धमकाती है ॥
हे चन्द्रप्रभु दे दो ऐसा दीपक अज्ञान मिटा डाले।
मोहान्धकार हो नष्ट मेरा यह, ज्योति नई मन है वाले ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीप नि०।

शुभ धूप दशांग बना करके, पावक में खेऊँ हे प्रभुवर।
क्षय कर्मों का प्रभु हो जावे, जग का झंझट सारा नश्वर ॥
हे चन्द्रप्रभु अन्तर्यामी, कैसे छुटकारा अब पाऊँ।
हे नाथ बता दो मार्ग मुझे, चरणो पर बलिहारी जाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप नि०।

पिस्ता बादाम लवंगादिक, भर थाली प्रभु मैं लाया हूँ।
चरणों में नाथ चढ़ा करके, अमृत रस पीने आया हूँ ॥
करुणा के सागर दया करो मुक्ति का मार्ग अब पाऊँ।
देदो वरदान प्रभु ऐसा शिवपुर को हे प्रभुवर जाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फल नि०।

जल चन्दन अक्षत पुष्प चरु, दीपक घृत से भर लाया हूं।
वस गंध धूप फल मिला अर्घ ले, स्वामी अति हरषाया हूं ॥

हे नाथ अनर्घ पद पाने को, तेरे चरणों में आया हूँ।
भव भव के बंध कटें प्रभुवर, यह अरज सुनाने आया हूँ॥
ॐ ह्रीं श्री श्रीचन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्ताय अर्घं नि०।

॥ पंचकल्याणक ॥

जब गर्भ में प्रभुजी आये थे, इन्द्रों ने नगर सजाया था।
छः मास प्रथम ही आकर के, रत्नों का मेह बरसाया था॥
तिथि चैत्र वदी पंचम प्यारी, जब गर्भ में प्रभुजी आये थे।
लक्ष्मणा माता को पहले ही, सोलह सपने दिखलाये थे॥
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय चैत्र कृष्णा पंचमी दिवसे गर्भ मंगल मंडिताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ वेला में प्रभु जन्म हुआ, वदि पौष एकादशि थी प्यारी।
श्री महासेन नृप के घर में हुई, जय जयकार बड़ी भारी॥
पांडुकशिल पर अभिषेक कियो, सब देव मिले थे चतुरनिकाय
सो जिनचन्द्र जयो जग मांहीं, विघ्नहरण और मंगलदाय॥
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय पौष कृष्णा एकादश्या जन्म मंगल मंडिताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के झंझट से मन ऊबा तप की ली श्रीजिनने ठहराय।
पौष वदी ग्यारस को इन्द्र ने, तप कल्याण कियो हरषाय॥
सर्वर्तुक वन में जाय विराजे केशलोंच जिन कियो हरषाय।
देहरे के श्री चन्द्रप्रभु को अर्घ चढ़ाऊँ नित्य बनाय॥
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय पौष कृष्णा एकादश्यां तपो मंगल मंडिताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुनवदी सप्तमी के दिन चार घातिया घात महान ।
समवशरण रचना हरि कीनी, ता दिन पायो केवल ज्ञान ।।
साढे आठ योजन परमित था, समवशरण श्रीजिन भगवान ।
ऐसे श्री जिन चन्द्र प्रभु को, अर्घचढाय करूँ नित ध्यान ।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय फाल्गुन कृष्ण सप्तम्या केवल ज्ञान प्राप्ताय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

शुक्ला फाल्गुन सप्तमिके दिन, ललितकूट शुभ उत्तम थान ।
श्रीजिन चन्द्रप्रभु जगनामी, पायो आतम शिव कल्याण ।।
वसु कर्म जिनचन्द्र ने जीते पहुँचे स्वामी मोक्ष मझार ।
निर्वाण महोत्सव कियो इन्द्र ने देव करें सब जयजयकार ।।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय फाल्गुन शुक्ला सप्तम्या मोक्ष मंगलमण्डिताय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रावण सुदी दसमी को प्रभु जी प्रकट भये देहरे मे आन ।
सवत तेरह दो सहस्र ऊपर शुभ बृहस्पतिवार ना दिन जान ।।
जय जयकार हुई देहरे मे प्रकट हुए जब श्री भगवान ।
चरणो मे आ अर्घ चढ़ाऊँ प्रभु के दर्शन सुख की खान ।।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय श्रावण शुक्ला दशम्या देहरा स्थाने प्रकट रूपाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

॥ जयमाला ॥

हे चन्द्रप्रभु तुम जगतपिता जगदीश्वर तुम परमात्मा हो ।
तुम ही हो नाथ अनाथो के जग को निज आनद दाता हो ।।

इन्द्रियो को जीत लिया तुमने जितेन्द्रनाथ कहाये हो ।
तुम ही हो परम हितैषी प्रभु गुरु तुम ही नाथ कहाये हो ।।
इस नगर तिजारा मे स्वामी देहरा स्थान निराला है ।
दुख दुखियो का हरने वाला श्रीचन्द्र नाम अति प्यारा है ।।
जो भाव सहित पूजा करते मनवाछित फल पा जाते हैं ।
दर्शन से रोग नसें सारे गुन गान तेरा सब गाते हैं ।।
मै भी हूँ नाथ शरण आया कर्मो ने मुझको रोदा है ।
यह कर्म बहुत दुख देते है प्रभु एक सहारा तेरा है ।।
कभी जन्म हुआ कभी मरण हुआ हे नाथ बहुत दुख पाया है ।
कभी नरक गया कभी स्वर्ग गया भ्रमता भ्रमता ही आया है ।।
तिर्यंच गति के दुख सहे ये जीवन बहुत अकुलाया है ।
पशुगति मे मार सही भारी, बोझा रख खूब भगाया है ।।
अंजन से चोर अधम तारे भव सिन्धु से पार लगाया है ।
सोमा की सुन कर टेर प्रभु नाग को हार बनाया है ।।
मुनि समन्तभद्र को हे स्वामी आ चमत्कार दिखलाया है ।
कर चमत्कार को नमस्कार चरणो मे शीश झुकाया है ।।
इस पञ्चमकाल मे हे स्वामी क्या अद्भुत महिमा दिखलाई ।
दुख दुखियो का हरने वाली देहरे मे प्रतिमा प्रकटाई ।।
शुभ पुण्य उदय से हे स्वामी दर्शन तेरा करने आया हूँ ।
इस मोह जाल से हे स्वामी छुटकारा पाने आया हूँ ।।

श्री चन्द्रप्रभु मोरी अर्ज सुनो चरणों मे तेरे आया हूँ।
भवसागर पार करो स्वामी यह अर्ज सुनाने आया हूँ ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय महार्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—देहरे के श्रीचन्द्र को भाव सहित जो ध्याय।
'मुशी' पावे सम्पदा मनवांछित फल पाय ॥

— — —

श्री पार्श्वनाथ जिन पूजा

'पुष्पेन्दु'

स्थापना

हे पार्श्वनाथ ! हे विश्वसैन सुत, करुणा सागर तीर्थंकर।
हे सिद्धशिला के अधिनायक, हे ज्ञान उजागर तीर्थंकर ॥
हमने भावुकता मे भरकर, तुमको हे नाथ पुकारा है।
प्रभुवर ! गाथा की गङ्गा से, तुमने कितनो को तारा है ॥
हम द्वार तुम्हारे आये हैं, करुणा कर नेक निहारो तो।
मेरे उर के सिंहासन पर, पग धारो नाथ ? पधारो तो ॥
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानन
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन ॥
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण ॥

मै लाया निर्मल जल धारा, मेरा अन्तर निर्मल कर दो,
मेरे अन्तर को हे भगवन्, शुचि सरल भावना से भर दो।

मेरे इस आकुल अन्तर को दो शीतल सुखमय शान्ति प्रभो,
अपनी पावन अनुकम्पा से हर लो मेरी भव-भ्रान्ति प्रभो।१।

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भ, जन्म, तप, केवल ज्ञान, निर्वाण पच कल्याणक सहिताय जन्म, जरा, मृत्यु विनाशनाय जल नि०।

प्रभु पास तुम्हारे आया हू भव का सन्ताप सताया हूं,
तव पद चन्दन के हेतु प्रभो मलयागिरि चन्दन लाया हूं।
अपने पुनीत चरणाम्वुज की हमको कुछ रेणु प्रदान करो,
हे सकटमोचन तीर्थंकर मेरे मन के सन्ताप हरो।२।

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भ, जन्म, तप, केवल ज्ञान, निर्वाण पच कल्याणक सहिताय ससार ताप विनाशनाय चन्दन नि०।

प्रभुवर क्षण भंगुर वैभव को तुमने क्षण मे ठुकराया है,
निज तेज तपस्या से तुमने अभिनव अक्षय पद पाया है।
अक्षय हो मेरे भक्ति भाव प्रभु पद की अक्षय प्रीति मिले,
अक्षय प्रतीति रवि किरणो से प्रभु मेरा मानस-कुंज खिले।३।

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भ, जन्म, तप, केवल ज्ञान, निर्वाण पच कल्याणक सहिताय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षत नि०।

यद्यपि शतदल की सुषमा से मानस-सर शोभा पाता है,
पर उसके रस मे फस मधुकर अपने प्रिय प्राण गंवाता है।
हे नाथ आपके पद-पकज भव सागर पार लगाते हैं,
इस हेतु तुम्हारे चरणो मे श्रद्धा के सुमन चढ़ाते हैं।४।

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भ, जन्म, तप, केवल ज्ञान, निर्वाण पच कल्याणक सहिताय काम वाण विध्वंसनाय पुष्पं नि०।

व्यंजन के विविध समूह प्रभो तन की कुछ क्षुधा मिटाते हैं,
चेतन की क्षुधा मिटाने में प्रभु ! ये असफल रह जाते हैं।
इनके आस्वादन से प्रभु मैं सन्तुष्ट नहीं हो पाया हू,
इस हेतु आपके चरणो मे नैवेद्य चढाने आया हू।५।

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भ, जन्म, तप, केवल ज्ञान, निर्वाण पच कल्याणक सहिताय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि०।

प्रभु दीपक की मालाओ से जग अन्धकार मिट जाता है,
पर अन्तर्मन का अन्धकार इनसे न दूर हो पाता है।
यह दीप सजाकर लाए हैं इनमे प्रभु दिव्य प्रकाश भरो,
मेरे मानस-पट पर छाए अज्ञान तिमिर का नाश करो।६।

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भ, जन्म, तप, केवल ज्ञान, निर्वाण पच कल्याणक सहिताय मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि०।

यह धूप सुगन्धित द्रव्यमयी नभमण्डल को महकाती है,
पर जीवन-अघ की ज्वाला मे ईंधन बनकर जल जाती है।
प्रभुवर इसमे वह तेज भरो जो अघ को ईंधन कर डाले,
हे वीर विजेता कर्मों के, हे मुक्ति-रमा वरने वाले।७।

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भ, जन्म, तप, केवल ज्ञान, निर्वाण पच कल्याणक सहिताय अष्ट कर्म दहनाय धूप नि०।

यो तो ऋतुपति ऋतु मे ही फल से उपवन को भर जाता है,
पर अल्प अवधि का ही झोका उनको निष्फल कर जाता है।
दो सरस भक्ति का फल प्रभुवर,
जीवन-तरु तभी सफल होगा।

सहजानन्द सुख से भरा हुआ,

इस जीवन का प्रतिफल होगा ।८।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भ, जन्म, तप, केवल ज्ञान, निर्वाण पच कल्याणक सहिताय मोक्ष फल प्राप्ताय फल नि० ।

पथ की प्रत्येक विषमता को मै समता से स्वीकार करू,
जीवन-विकास के प्रिय-पथ की बाधाओ का परिहार करू ।
मै अष्ट कर्म आवरणो का प्रभुवर आतक हटाने को,
वसु द्रव्य सजोकर लाया हूं चरणो मे नाथ चढाने को ।९।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पच कल्याणक सहिताय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ नि० ।

पच कल्याणक

शिवदेवी के गर्भ मे, आये दीनानाथ ।
चिर अनाथ जगती हुई, सजग, समोद, सनाथ ।।
अज्ञानमय इस लोक मे, आलोक सा छाने लगा,
होकर मुदित सुरपति नगर मे, रत्न बरसाने लगा ।
गर्भस्थ बालक की प्रभा प्रतिभा, प्रकट होने लगी,
नभ से निशा की कालिमा, अभिनव उषा धोने लगी ।१।

ॐ ह्रीं वैसाख कृष्ण द्वितीया(यां) गर्भ मगल मडिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

द्वार द्वार पर सज उठे, तोरण वन्दनवार ।
काशी नगरी मे हुआ, पार्श्व प्रभु अवतार ।।
प्राची दिशा के अग मे नूतन दिवाकर आ गया,
भविजन जलज विकसित हुए जग मे उजाला छा गया ।

भगवान के अभिषेक को जल क्षीर सागर ने दिया,
इन्द्रादि ने हे मेरु पर अभिषेक जिनवर का किया ।।२।।

ॐ ह्रीं पौष कृष्णैकादश्या जन्म मंगल प्राप्ताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

निरख अथिर संसार को, गृह कुटुम्ब सब त्याग ।
वन मे जा दीक्षा धरी, धारण किया विराग ।।

निज आत्मसुख के श्रोत मे तन्मय प्रभु रहने लगे,
उपसर्ग और परीषहो को शान्ति से सहने लगे ।
प्रभु की विहार वनस्थली तप से पुनीता हो गई,
कपटी कमठ शठ की कुटिलता भी विनीता हो गई ।।३।।

ॐ ह्रीं पौष कृष्णैकादश्या तपो मगल मण्डिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

आत्मज्योति से हट गये, तम के पटल महान ।
प्रकट प्रभाकर सा हुआ, निर्मल केवल ज्ञान ।।

देवेन्द्र द्वारा विश्वहित सम+अनुसरण निर्मित हुआ,
समभाव से सबको शरण का पथ निर्देशित हुआ ।
था शान्ति का वातावरण उसमे न विकृत विकल्प थे,
मानो सभी तव आत्महित के हेतु कृत-सकल्प थे ।।४।।

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्ण चतुर्थी दिने केवल ज्ञान प्राप्ताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

युग युग के भव भ्रमण से, देकर जग को त्राण ।
तीर्थंकर श्री पार्श्व ने, पाया पद-निर्वाण ।।

निर्लिप्त आज नितान्त है चैतन्य कर्म अभाव से,
है ध्यान, ध्याता, ध्येय का किंचित न भेद स्वभाव से।
तव पाद पद्मो की प्रभु सेवा सतत पाते रहे,
अक्षय असीमानन्द का अनुराग अपनाते रहे ॥५॥

ॐ ह्री श्रावणशुक्ल सप्तम्या मोक्ष मंगलमंडिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

वन्दनागीत

अनादिकाल से कर्मो का मै सताया हूं,
इसी से आपके दरबार आज आया हूं।
न अपनी भक्ति, न गुणगान का भरोसा है,
दया निधान श्री भगवान का भरोसा है।
इक आस लेकर आया हू कर्म कटाने के लिये.
भेंट मे कुछ भी नहीं, लाया चढाने के लिये ॥१॥

जल न चन्दन और अक्षत पुष्प भी लाया नहीं,
है नही नैवेद्य, दीप, मै धूप फल पाया नहीं।
हृदय के टूटे हुए उद्‌गार केवल साथ हैं,
और कोई भेंट के हित, अर्घ सजवाया नहीं।
है यही फलफूल जो समझो चढाने के लिये।
भेंट मे कुछ भी नहीं लाया चढाने के लिये ॥२॥

मागना यद्यपि बुरा समझा किया मै उम्र भर,
किन्तु अब जब मांगने पर बांध कर आया कमर।
और फिर सौभाग्य से जब आप सा दानी मिला,
तो भला फिर मांगने में आज क्यो रक्खूं कसर।

प्रार्थना है आप ही जैसा बनाने के लिये
भेंट मै कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ॥३॥

यदि नहीं यह दान देना आपको मन्जूर है।
और फिर कुछ मागने से दास ये मजबूर है।
किन्तु मुह मागा मिलेगा मुझको ये विश्वास है,
क्योंकि लौटाना न इस दरबार का दस्तूर है।
प्रार्थना है कर्म बन्धन से छुडाने के लिए।
भेंट मे कुछ भी नही लाया चढाने के लिये।४।

हो न जब तक मांग पूरी नित्य सेवक आयेगा,
आपके पदकज मे 'पुष्पेन्दु' शीश झुकायेगा।
है प्रयोजन आपको यद्यपि न भक्ति से मेरी,
किन्तु फिर भी नाथ मेरा तो भला हो जायेगा।
आपका क्या जायेगा बिगड़ी बनाने के लिये।
भेंट मे कुछ भी नहीं लाया चढाने के लिये।५।

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा



सप्तर्षि-पूजा

[कविवर मनरंगलालजी]

छप्पय

प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर॥
पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि।
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्र-धाम गनि॥
ये सातो चारण-ऋद्धि-धर, करूं तास पद थापना।
मैं पूजूं मन वचन काय करि, जो सुख चाहूं आपना॥

ओं ह्रीं चारण ऋद्धिधर श्रीसप्त ऋषीश्वरा! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।

ओं ह्रीं चारण ऋद्धिधर श्रीसप्त ऋषीश्वरा! अत्र तिष्ठत २ ठः ठः।
ओं ह्रीं चारण ऋद्धिधर श्रीसप्तर्षीश्वरा! अत्र मम सन्निहितो भवत-भवत वषट्।

शुभ-तीर्थ-उद्भव-जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायकें।
भव-तृषा-कंद-निकंद-कारण, शुद्ध-घट भरवायकें॥
मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिनकी पूजा करूं।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनंद विस्तरूं॥

ओं ह्रीं श्रीचारण-ऋद्धिधर श्रीमन्व-स्वरमन्व-निचय-सर्वसुन्दर-जयवान-विनयलालस-जयमित्रऋषिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंड कदली नंद केशर, मंद मंद घिसायकें।
तस गंध प्रसरित दिग-दिगंतर, भर कटोरी लायकें॥

मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिनकी पूजा करू।
ता करे पातक हरें सारे, सकल आनँद विस्तरूँ ॥

ओ ह्री श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्य चदन निर्वपामीति स्वाहा।

अति धवल अक्षत खड-वर्जित, मिष्ट राजन भोग के।
कलधौत-थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोग के॥
मन्वादि०

ओ ह्री श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बहु-वर्ण सुवरण-सुमन आछे, अमल कमल गुलाव के।
केतकी चंपा चारु मरुआ, चुने निज-कर चावके॥
मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिनकी पूजा करू।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनद विस्तरूँ॥

ओ ह्री श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्य पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान नानाभाति चातुर, रचित शुद्ध नये नये।
सदमिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरटके थारा लये॥
मन्वादि०

ओ ह्री श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

कलधौत-दीपक जडित नाना, भरित गोघृत-सारसो।
अति ज्वलितजगमग-ज्योति जाको, तिमिर नाशनहारसो॥
मन्वादि०

ओ ह्री श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो दीप निर्वपामीति स्वाहा।

दिक्-चक्र गधित होत जाकर, धूप दश-अंगी कही।
सो लाय मन-वच-कायशुद्ध, लगाय कर खेऊ सही॥

मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिनकी पूजा करें ।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनंद विस्तरें ।।

ओ ह्रीं श्रीमन्वादिमुनिभ्यो धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायकें ।
द्रावडी दाडिम चारु पुंगी, थाल भर भर लायकें ।।
मन्वादि०

ओ ह्रीं श्रीमन्वादिमुनिभ्यो फल निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठों द्रव्य-मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ।।
मन्वादि०

ओ ह्रीं श्री श्रीमन्वादिमुनिभ्यो अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

वंदूं ऋषिराजा धर्म-जहाजा निज-पर-काजा करत भले ।
करुणा के धारी गगन-विहारी दुख-अपहारी भरम दले ।।
काटत जम फंदा भवि-जन-वृंदा करत अनंदा चरणन में ।
जो पूजें ध्यावें मंगल गावें फेर न आवें भव-वन में ।।१।।

छन्द पद्धरी

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत, त्रस-थावरकी रक्षा करंत ।
जय मिथ्या-तम-नाशक पतंग, करुणा-रस-पूरित अंग अंग ।
जय श्रीस्वरमनु अकलंकरूप, पद-सेव करत नित अमर भूप ।
जय पंच अक्ष जीते महान, तप तपत देह कंचन-समान ।

जय निचय सप्त तत्त्वार्थ भास, तप-रमातनो तनमें प्रकाश।
जय विषय-रोध संबोध भान, परपरणति नाशन अचल ध्यान।
जय जयहि सर्वसुन्दर दयाल, लखि इन्द्रजालवत जगत-जाल।
जय तृष्णाहारी रमण राम, निज परणतिमे पायो विराम।
जय आनँदघन कल्याण रूप, कल्याण करत सबको अनूप।
जय मद-नाशन जयवान देव, निरमद विचरत सब करतसेव।
जय जयहि विनयलालस अमान, सब शत्रु मित्र जानत समान।
जय कृशित-काय तपके प्रभाव, छबि-छटा उडति आनद-दाय।
जयमित्र सकल जगके सुमित्र, अनगिनत अधम कीने पवित्र।
जय चन्द्र-वदन राजीव-नैन, कबहूँ विकथा बोलत न बैन।
जय सातौ मुनिवर एकसग, नित गगन-गमन करते अभग।
जय आये मथुरा पुर मँझार, तह मरी रोगको अति प्रचार।
जय जय तिन चरणनिके प्रसाद, सबमरी देवकृत भई वाद।
जय लोक करे निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोड हस्त।
जय ग्रीषम-ऋतु पर्वत मँझार, नित करत अतापन योग सार।
जय तृषा-परीषह करत जेर, कहु रच चलत नहि मन-सुमेर।
जय मूल अठाइस गुणन धार, तप उग्र तपत आनदकार।
जय वर्षा-ऋतु मे वृक्ष-तीर, तहँ अति शीतल झेलत समीर।
जय शीत-काल चौपट मँझार, कै नदी-सरोवर-तट विचार।
जय निवसत ध्यानारूढ होय, रचक नहि मटकत रोम कोय।
जय मृतकासन वज्रासनीय, गोदूहन इत्यादिक गनीय।
जय आसन नानाभाँति धार, उपसर्ग सहत ममता निवार।

जय जपत तिहारो नाम कोय, लख पुत्र पौत्र कुल वृद्धि होय।
जय भरे लक्ष अतिशय भंडार दारिद्रतनो दुख होय छार।
जय चोर अग्नि डाकिन पिशाच, अर ईति भीति सब नसत साच।
जय तुम सुमरत सुख लहत लोक सुर असुर नमत पद देत धोक।

छन्द रोला

ये सातों मुनिराज, महातप लक्ष्मी धारी।
परम पूज्य पद धरैं, सकल जगके हितकारी॥
जो मन वच तन शुद्ध, होय सेवै औ ध्यावै।
सो जन 'मनरंगलाल', अष्ट ऋद्धिनकौं पावै॥

दोहा

नमन करत चरनन परत, अहो गरीबनिवाज।
पंच परावर्तननितैं, निरवारो ऋषिराज॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

निर्वाण क्षेत्र-पूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

सोरठा

परम पूज्य चौवीस, जिह जिह थानक शिव गये।
सिद्धभूमि निश-दीस, मन वच तन पूजा करौं॥१॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाण क्षेत्राणि! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।

ओं ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्राणि! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।

ओं ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्राणि! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

गीता-छन्द

शुचि छीर-दधि-सम नीर निरमल, कनक-झारी मे भरो ।
ससार पार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं ।।
सम्मेदगढ गिरनार चपा, पावापुरि कैलासको ।
पूजो सदा चौबीस जिन, निर्वाणभूमि-निवासको ।।१।।

ओ ह्री चतुर्विशति-तीर्थंकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्व०

केशर कपूर सुगध चदन, सलिल शीतल विस्तरौं ।
भव-तापको संताप मेटो, जोर कर विनती करौं ।। समेद०।।

ओ ह्री श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो चन्दन निर्व०

मोती-समान अखंड तदुल, अमल आनद धरि तरौं ।
औगुन हरौं गुन करौ हमको, जोरकर विनती करौं ।।स०।।

ओ ह्री श्रीचतुर्विंशति तीर्थंकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् निर्व०

शुभ फूल-रास सुवास-वासित, खेद सब मनकी हरौं ।
दुख-धाम-काम विनाश मेरो, जोरकर विनती करो ।।सं०।।

ओ ह्री श्रीचतुर्विशति-तीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्प निर्व० ।

नेवज अनेक प्रकार जोग मनोग धरि भय परिहरौं ।
मम भूख-दूखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौं ।।स।।

ओ ह्री श्रीचतुर्विशति-तीर्थंकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्य निर्व० ।

दीपक-प्रकाश उजास उज्ज्वल, तिमिरसेती नहिं डरौं ।
सशय-विमोह-विभरम-तम-हर, जोर कर विनती करौं ।स०।

ओ ह्री श्रीचतुर्विशति-तीर्थंकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीप निर्व० ।

शुभ-धूप परम-अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।
सब करम-पुंज जलाय दीज्यो, जोर कर विनती करौं।स।

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्व०।

बहु फल मंगाय चढाय उत्तम, चार गतिसों निरवरौं।
निहचै मुकति-फल देहु मोको, जोर कर विनती करौं।स।

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशति तीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो फलं निर्व०।

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगतसों, जोर कर विनती करौं।स०।

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व०।

जयमाला

सोरठा

श्रीचौबीस जिनेश, गिरि कैलाशादिक नमों।
तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवाणतें ।।१।।

चौपाई १६ मात्रा

नमों ऋषभ कैलासपहार, नेमिनाथ गिरनार निहार।
वासुपूज्य चंपापुर वंदौं, सन्मति पावापुर अभिनंदौं ।।२।।
वंदौं अजित अजित पद-दाता, वंदौं संभव भव-दुख-घाता।
वंदौं अभिनंदन गुण-नायक, वंदौं सुमति सुमतिके दायक।३।
वंदौं पदम मुकति-पदमाकर, वंदौं सुपास आश-पासाहर।
वंदौं चंद्रप्रभ प्रभु चंदा, वंदौं सुविधि सुविधि-निधि-कंदा।४।
वंदौं शीतल अघ-तप-शीतल, वंदौं श्रेयांस श्रेयांस महीतल।

वदौं विमल विमल उपयोगी, वदौं अनत अनत-सुखभोगी ।५
वदौं धर्म धर्म-विस्तारा, वदौ शाति शाति-मन-धारा ।
वंदौं कुथ कुथ-रखवाल, वदौं अर अरि-हर गुण माल ।६।
वदौं मल्लि काम-मल-चूरन वंदौं मुनिसुव्रत व्रत-पूरन ।
वदौं नमि जिन नमित-सुरासुर, वंदौ पास पास-भ्रम-जग-हर
बीसौ सिद्धिभूमि जा ऊपर, शिखरसम्मेद-महागिरि भूपर ।
भावसहित वंदे जो कोई, ताहि नरक-पशु-गत-नहि होई ।८।
नरपति नृप सुर शुक्र कहावे, तिहु जग-भोग भोगि शिव पावै
विघन-विनाशन मगलकारी, गुण-विलास वदौं भव तारी ।९

दोहा

जो तीरथ जावै पाप मिटावे, ध्यावे गावै भगति करै ।
ताको जस कहिये सपति लहिये, गिरिके गुण को बुध उचरैं ॥
ओ ह्री श्रीचतुर्विशति-तीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्व०

पंच बालयति तीर्थंकर पूजा

दोहा ।

श्रीजिन पच अनग-जित, वासुपूज्य मलि नेमि ।
पारसनाथ सुवीर अति, पूजू चित धर प्रेम ॥१॥

ओ ह्री पच बालयति-तीर्थंकरा अत्र अवतरत २ सवौषट आह्वानम् । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठ स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् सन्निधिकरण ।

अथाष्टक

शुचि शीतल सुरभि सुनीर लायो भर झारी
दुख जामन मरन गहीर, याको परिहारी ।
श्री वासुपूज्य मलि नेमि, पारस वीर अति,
नमूं मन वच तन धरि प्रेम पाँचो बालयति ।।

ओ ह्री श्री वासुपूज्य मल्लिनाथ नेमनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर स्वामी, श्री पचवालयति तीर्थंकरेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

चदन केशर कर्पूर, जल मे घसि आनौ,
भव तप भजन सुखपूर, तुमको मै जानौ ।।चदन।।
वर अक्षत विमल बनाय, सुवरण थाल भरे,
बहु देश देशके लाय, तुमरी भेंट धरे ।।अक्षत।।
यह काम सुभट अति सूर, मनमे क्षोभ करौ,
मै लायौ सुमन हजूर, याको वेग हरौ ।।पुष्प।।
षट् रस पूरित नैवेद्य, रसना सुखकारी,
द्वय कर्म वेदनी छेद, आनन्द ह्वै भारी ।।नैवेद्यं।।
धरि दीपक जगमग ज्योति, तुम चरणन आगे,
मम मोहतिमिर क्षय होत, आतम गुण जागे ।।दीप।।
ले दशविधि धूप अनूप खेऊं गध मई,
दशबंध दहन जिन भूप तुम हो कर्म जई ।।धूपं।।
पिस्ता अरु दाख बदाम श्रीफल लेय घने
तुम चरण जजू गुणधाम द्यौ सुख मोक्ष तने ।।फलं।।

क्षीरोदधि तैं बहु देव जाय, भरि जल घट हाथो हाथ लाय ।
करि न्हवन वस्त्र भूषण सजाय,दे मात नृत्य तांडव कराय ।।
पुनि हर्ष धार हृदय अपार,सब निर्जर तब जय जय उचार ।
तिस अवसर आनन्द हे जिनेश,हम कहिवे समरथ नही लेश ।।
जय जादोपति श्री नेमिनाथ,हम नमत सदा जुग जोरि हाथ ।
तुम ब्याह समय पशुवन पुकार,सुनि तुरत छुडाये दया धार ।।
कर कंकण अरु सिर मौर वन्द,सो तोड़भये छिनमे स्वच्छन्द ।
तब ही लौकान्तिक देव आय,बैराग्य वर्द्धनी थुति कराय ।।
ततक्षण शिविका लायो सुरेन्द्र,आरूढ भये तापर जिनेन्द्र ।
सो शिविका निजकंधन उठाय,सुरनर खग मिल तपवन ठराय
कच लौंच वस्त्र भूषण उतार,भये जती नगन मुद्रा सुधार ।
हरि केश लेय रतनन पिटार, सो क्षीर उदधि माही पधार ।।
जय पारसनाथ अनाथ नाथ,सुर असुरनमत तुम चरणमाथ ।
जुग नाग जरत कीनो सुरक्ष,यह बात सकल जगमे प्रत्यक्ष ।।
तुम सुरधनुसम लखिजग असार,तप तपत भयेतन ममत छांड ।
शठ कमठ कियो उपसर्ग आय,तुम मन सुमेर नहि डगमगाय ।।
तुमशुक्लध्यान गहि खडगहाथ,अरि च्यारि घातियाकरसुघात
उपजायो केवल ज्ञान भानु,आयो कुबेर हरि बच प्रमाण ।।
की समोशरण रचना विचित्र,तहाँ खिरत भई वाणी,पवित्र ।
मुनि सुर नर खग तिर्यंच आय,सुनि निज निज भाषा बोधपाय
जय वर्द्धमान अन्तिम जिनेश, पायो न अंत तुम गुण गणेश ।

तुम च्यारि अघाती करम हान,लियोमोक्ष स्वय सुख अचलथान
तव ही सुरपति वल अवधि जान,सव देवन युत वहु हर्ष ठान।
सजि निज वाहन आयो सुतीर, जह परमौदारिक तुम शरीर।।
निर्वाण महोत्सव कियो भूर, ले मलयागिर चदन कपूर।
वहु द्रव्य सुगधित सरससार,तामे श्री जिनवर वपु पधार।।
निज अगनिकुमारिन मुकुट नाय,तिहरतनन शुचिज्वालाउठाय
तन सर माहीं दीनी लगाय,सो भस्म सबन मस्तक चढ़ाय ।।
अति हर्ष थकी रचि दीप माल शुभ रतन मई दश दिश उजाल
पुनि गीत नृत्य वाजे वजाय,गुणगाय ध्याय सुरपति सिधाय ।।
सो थान अवै जग मे प्रत्यक्ष,नित होत दीप माला सुलक्ष।
हे जिन तुम गुण महिमा अपार,वसु सम्यक् ज्ञानादिक सु सार
तुम ज्ञान माँहि तिहु लोक दर्व,प्रतिविम्वित हैं चर अचर सर्व।
लहि आतम अनुभव परम ऋद्धि,भये वीतराग जग में प्रसिद्ध।
ह्वै वालयती तुम सवन एम,अचरज शिव काँता वरी केम।
तुम परम शाँति मुद्रा सुधार,किय अष्ट कर्म रिपु को प्रहार।
हम करत वीनती वार-वार,कर जोर स्व मस्तक धार-धार।
तुम भये भवोदधि पार-पार,मोको सुवेग ही तार-तार।।
अरदास दास ये पूर-पूर,वसु कर्म शैल चक चूर-चूर।
दुख सहन दास अव शक्ति नाँहि,गहि चरण शरण कीजेनिवाह।।

चौपाई

पाँचो वाल यती तीर्थेश, तिनकी यह जयमाल विशेष ।।
मन वच काय त्रियोग सम्हार, जे गावत पावत भव पार।।
ओ ह्री श्रीपच वालयति तीर्थंकर जिनेन्द्रेभ्यो पूर्णार्घम् ।।

मलयागर कपूर चदन घसि, केशररग मिलाय ।
भवतपहरन चरन पर वारो, मिथ्याताप मिटाय ।।
पूजो भावसो, श्रीपदमनाथ पद सार, पूजो भावसो ।२।

ओ ह्री श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चदनं निर्व० ।

तंदुल उज्ज्वल गधअनीजुत, कनक थार भर लाय ।
पुज धरो तुव चरनन आगे, मोहि अखयपद दाय ।पू० ३।

ओ ह्री श्रीपदमप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ।।

पारिजात मदार कलपतरु-जनित, सुमन शुचि लाय ।
समरशूल निरमूल-करनको, तुम पद पद्म चढाय ।पू० ४।

ओ ह्री श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय कामवाण विध्व सनाय पुष्प निर्व०

घेवर बावर आदि मनोहर, सद्य सजे शुचि लाय ।
क्षुधारोग के नाशन कारन, जजो हरष उर लाय ।पू० ५।

ओ ह्री श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०

दीपक ज्योति जगाय ललित वर, धूम रहित अभिराम ।
तिमिरमोह नाशन के कारन, जजो चरन गुनधाम ।पू० ६।

ओ ह्री श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीप निर्व०

कृष्णागर मलयागिर चदन, चूर सुगन्ध बनाय ।
अगिनि माहि जारो तुम आगे, अष्टकरम जरि जाय ।पू० ७

ओ ह्री श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व० ।

सुरस-वरन रसना मनभावन, पावन फल अधिकार ।
तासो पूजो जुगम चरन यह, विघन करम निरवार ।पू० ८।

ओ ह्री श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० ।

जल फल आदिमिलाय गाय गुन, भगतभाव उमगाय।
जजो तुम्हिं शिवतियवर जिनवर,आवागमन मिटाय।पू० ६

ओ ह्री श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व०।

पंचकल्याणक।

छद द्रुतविलंबित तथा सुन्दरी (मात्रा १६)।

असित माघ सु छट्टबखानिये। गरभमगल तादिन मानिये।
उरधग्रीवकसो चयराजजी। जजत इन्द्र जजें हम आजजी।१

ओ ह्री माघकृष्णषष्ठीदिने गर्भावतरण मगल प्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

शुकलकार्तिकतेरसको जये। त्रिजगजीव सुआनंदको लयें।
नगर स्वर्गसमान कुसंबिका। जजतु हैं हरिसंजुत अंबिका।२

ओ ह्री कार्तिकशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगल प्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

सुकल तेरम कार्तिक भावनी। तप धर्यो वन षष्टम पावनी।
करत आतमध्यान धुरंधरो। जजत हैं हम पाप सबै हरो।३।

ओ ह्री कार्तिक शुक्लत्रयोदश्या नि क्रमण कल्याणक प्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

सुकल-पूनमचैत सुहावनी। परम केवल सो दिन पावनी॥
सुरसुरेश नरेश जजें तहाँ। हमजजैं पदपंकज को यहा ॥४॥

ओ ह्री चैत्र शुक्ल पूर्णिमायां केवलज्ञान प्राप्ताय श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

असित फागुनचौथ सुजानियो। सकलकर्म महारिपु हानियो।
गिरिसमेद थकी शिवको गये। हम जजें पदध्यानविषें लये।५।

ओ ह्रीं फाल्गुन कृष्णचतुर्थीदिने मोक्ष मगल मण्डिताय श्रीपद्म-प्रभ जिनेन्द्राय अर्घ निव पामोति स्वाहा ॥५॥

जयमाला ।

छद घत्तानंद ।

जय पद्मजिनेशा शिवसद्मेशा, पाद पद्म जजि पद्मेशा ।
जय भवतप भजन मुनिमनकजन,–रञ्जनको दिव साधेसा ।१

छद रूपचौपाई ।

जय-जयजिनभविजनहितकारी।जयजय जिन भवसागरतारी
जयजयसमवमरनधनधारी । जय जयवीतरागहितकारी ।।२
जयतुम साततत्त्वविधिभाख्यौ।जयजय नवपदार्थ लखिआख्यौ
जय षटद्रव्य पंचजुतकाया । जयसबभेदनहितदरशाया ।३।
जय गुनथान जीव पर मानो । जय पहिले अनतजिय जानो ।
जय दूजे सासादन माही । तेरहकोडि जीवथित आंहीं ।।४।।
जय तीजे मिश्रितगुणथाने । जीव सु बावन कोड़ि प्रमाने ।
जय चौथे अविरतिगुनजीवा । चारअधिक शतकोडिसदीवा ।।
जय जिय देशवरतमे शेषा । कौडिमातसौ हैं थिति वेशा ।
जय प्रमत्त षटशून्य दोय वसु । पाच तीननव पाँच जीवलसु ।।
जय जय अपरमत्तगुन कोर ' लच्छ छानवें सहस बहोरं ।
निन्यानवे एकशत तीना । ऐते मुनि तित रहहिं प्रवीना ।७।
जय जय अष्टममे दुइ धारा । आठशतक सत्तानो सारा ।
उपशममे दुइसो निन्यानो । छपकमाहिं तसु दूने जानौं ।।८।।

जय इतने इतने हितकारी। नवें दशें जुगश्रेणी धारी।
जय ग्यारें उपशममगगामी। दुइसै निन्यानो अधमामी ॥९॥
जयजय छीनमोहगुनथानो। मुनि शतपान्चअधिकअट्ठानो।
जय जयतेरहमेअरहंता। जुग नभपन वसु नववसुतता ॥१०
एते राजतु हैं चतुरानन। हम बदे पद थुतिकरि आनन।
हैं अजोग गुनमे जे देवा। पनसोठानो करो सुसेवा ॥११॥
तिततिथिअइउऋलृलघुभासत। करिथितिफिरशिवआनँदचाखत
एउतकृष्टसकलगुणधारी। तथा जघन मध्यम जेप्रानी।१२।
तीनो लोकमदन के वासी। निज गुनपरज भेदमय राशी।
तथा और द्रव्यन के जेते। गुन परजाय भेद हैं तेते ॥१३॥
तीनो कालनने जु अनता। सो तुम जानत जुगपत सता।
सोई दिव्यवचनके द्वारे। दे उपदेश भविक उद्धारे ॥१४॥
फेरि अचलथलबासा कीनो। गुन अनत निजआनँद भीनो।
चरमदेहते किंचित ऊनो। नरआकृति ततहैं नित गूनो।१५।
जय जय सिद्धदेव हितकारी। बार बार यह अरज हमारी।
मोको दुखसागर से काढो। वृन्दावन जाँचतु है ठाढो ॥१६।

छद घत्ता

जय जय जिनचदा पद्मानदा, परम सुमति पद्माधारी।
जय जनहितकारी दयाविचारी, जय जय जिनवर अधिकारी

ओं ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद रोडक ।

जजत पद्म पद पद्म सद्म ताके सुपद्म अंत ।
होत वृद्धि सुतमित्र सकल आनंदकंद शत ।।
लहत स्वर्गपदराज, तहाँतें चय इत आई ।
चक्रीको सुख भोगि, अंत शिवराज कराई ।।८।।

इत्याशीर्वाद ।

———

श्रीचन्द्रप्रभजिन पूजा

छप्पय—अनोष्ठय यमकालंकार तथा शब्दालंकार शांतरस ।

चारुचरन आचरन, चरन चितहरन चिहनचर ।
चंद-चंद-तनचरित, चंदथल चहत चतुर नर ।।
चतुक चंड चकचूरि, चारि चिदचक्र गुनाकर ।
चंचल चलितसुरेश, चूलनुत चक्र धनुरधर ।।
चर अचर हितू तारन तरन, सुनत चहकि चिर नंद शुचि ।
जिनचंद चरन चरच्यो चहत, चितचकोर नचि रच्चि रुचि।१।

दोहा—धनुष डेढसौ तुङ्ग तन, महासेन नृपनंद ।
मातु लछमना उर जये, थापो चंद जिनंद ।।२।।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठ ।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

चाल—द्यानतराय कृत नदोश्वराष्टक की अष्टपदी तथा होली की ताल मे, तथा गरवा आदि अनेक चालो मे ।

गगाह्रद निरमल नीर, हाटक भृग भरा ।
तुम चरन जजो वरवीर, मेटो जनम जरा ॥
श्री चंदनाथदुति चंद, चरनन चंद लगै ।
मनवचतन जजत अभंद, आतमजोति जगै ॥

ॐ ह्ली श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल नि० । १

श्रीखड कपूर सुचग, केशर रग भरी ।
घसि प्रासुक जल के सग, भवआताप हरी ॥ श्री०

ॐ ह्ली श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दन नि० ।२

तदुल सित सोमसमान, सो ले अनियारे ।
दिय पुज मनोहर आन, तुम पदतर प्यारे ॥ श्री०

ॐ ह्ली श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ।३

सुरद्रुमके सुमन सुरग, गधित अलि आवै ।
तासो पद पूजत चंग, कामविथा जावै ॥ श्री०

ॐ ह्ली श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय कामवाण विध्वसनाय पुष्प नि० ।४

नेवज नाना परकार, इद्रिय बलकारी ।
सो ले पद पूजो सार, आकुलता-हारी ॥ श्री०

ॐ ह्ली श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नवैद्य नि० ।५

तमभजन दीप सँवार, तुम ढिग धारतु हो ।
मम तिमिरमोह निरवार, यह गुण धारतु हो । श्री०

ॐ ह्ली श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप नि० ६

दसगंध हुतासन माहिं, हे प्रभु खेवतु हो।
मम करम दुष्ट जरि जाहिं, यातैं सेवतु हो। श्री०

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप नि० ।७

अति उत्तम फल सु मगाय, तुम गुण गावतु हो।
पूजो तनमन हरषाय, विघन नशावत हो। श्री०

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल नि० ।८

सजि आठो दरब पुनीत, आठो अंग नमों।
पूजो अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमो। श्री०

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं नि० ।९

पंच कल्याणक छंद तोटक (वर्ण १२)

कलि पंचम चैत सुहात अली।
गरभागम मंगल मोद भरी ॥
हरि हर्षित पूजत मातु पिता।
हम ध्यावत पावत शर्मसिता ॥१॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपचम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं

कलि पौष एकादशि जन्म लयो।
तब लोकविषैं सुखथोक भयो ॥
सुरईश जजैं गिरशीश तबै।
हम पूजत हैं नुत शीश अबै ॥२॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेंद्राय अर्घं

तप दुद्धर श्रीधर आप धरा।
कलिपौष ग्यारसि पर्व वरा।
निज ध्यान विषैं लवलीन भये।
धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ॥३॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां निःक्रमणमहोत्सव मंडिताय श्रीचंद्रप्रभ-
जिनेंद्राय अर्घं नि० स्वाहा।

वर केवल भानु उद्योत कियो।

तिहुँलोकतणो भ्रम मेट दियो॥

कलि फाल्गुण सप्तमि इद्र जजैं।

हम पूजहिं सर्व कलंक भजैं ॥४॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानमंडिताय श्रीचंद्रप्रभ-जिनेंद्राय अर्घं नि० स्वाहा।

सित फाल्गुन सप्तमि मुक्ति गये।

गुणवंत अनंत अबाध भये॥

हरि आय जजे तित मोद धरे।

हम पूजत ही सब पाप हरे ॥५॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभ-जिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ जयमाला ॥

दोहा—हे मृगांक अंकित चरण, तुम गुण अगम अपार।
गणधर से नहिं पार लहिं, तौ को वरनत सार ॥१॥
पै तुम भगति हिये मम, प्रेरे अति उमगाय।
तातैं गाऊं सुगुण तुम, तुम ही होउ सहाय ॥२॥

छन्द पद्धरी (१६ मात्रा)

जय चंद्र जिनेंद्र दयानिधान। भवकाननहानन दव प्रमान
जय गरभ जनम मंगल दिनंद।

भवि-जीव विकाशन शर्म कन्द ॥३॥

दशलक्ष पूर्व की आयु पाय। मनवाँछित सुख भोगे जिनाय।
लखि कारण ह्वै जगतैं उदास।

चिंत्यो अनुप्रेक्षा सुख निवास ॥४॥

तित लौकांतिक वोध्यो नियोग ।
हरि शिविका सजि धरियो अभोग ।
तापै तुम चढि जिनचंदराय ।
ता छिन की शोभा को कहाय ॥५॥
जिन अंग सेत सितचमर ढार ।
सित छत्र शीस गल गुलक हार ॥
सित रतन जडित भूषण विचित्र ।
सित चन्द्र चरण चरचै पवित्र ॥६॥
सित तनद्युति नाकाधीश आप ।
सित शिविका कांधे धरि सुचाप ।
सित सुजस सुरेश नरेश सर्व ।
सित चितमे चिंतत जात पर्व ॥७॥
सित चंद्र नगरतैं निकसि नाथ ।
सित वन मे पहुंचे सकल साथ ॥
सितशिला शिरोमणि स्वच्छ छांह ।
सित तप तित धारयो तुम जिनाह ॥८॥
सित पयको पारण परम सार ।
सित चंद्रदत्त दीनो उदार ।
सित कर में सो पय धार देत ।
मानो बांधत भवसिंधु सेत ॥९॥
मानो सुपुण्य धारा प्रतच्छ ।
तित अचरजपन सुर किय ततच्छ ।

फिर जाय गहन सित तप करंत ।
सित केवल ज्योति जग्यो अनन्त ॥१०॥
लहि समवसरन रचना महान ।
जाके देखत सब पाप हान ॥
जहँ तरु अशोक शोभै उतंग ।
सब शोक तनो चूरै प्रसंग ॥११॥
सुर सुमन वृष्टि नभतें सुहात ।
मनु मन्मथ तजि हथियार जात ॥
बानी जिनमुखसो खिरत सार ।
मनु तत्व प्रकाशन मुकुर धार ॥१२॥
जहँ चौंसठ चमर अमर ढुरंत ।
मनु सुजस मेघ झरि लगिय तंत ॥
सिंहासन है जहँ कमल जुक्त ।
मनु शिव सरवरको कमल-शुक्त ॥१३॥
दुंदुभि जित बाजत मधुर सार ।
मनु करमजीतको है नगार ॥
शिर छत्र फिरै त्रय श्वेत वर्ण ।
मनु रतन तीन त्रय ताप हर्ण ॥१४॥
तन प्रभातनो मडल सुहात ।
भवि देखत निज भव सात सात ॥
मनु दर्पण द्युति यह जगमगाय ।
भविजन भव मुख देखत सु आय ॥१५॥

श्री शीतलनाथ जिनपूजा

छंद मत्तमातंग

शीतलनाथ नमो धरि हाथ, सुमाथ जिन्हो भवगाथ मिटाये।
अच्युततें च्युत मात सुनन्द के, नन्द भये पुरभद्दल आये।।
वंश इक्ष्वाक कियो जिन भूषित, भव्यनको भव पार लगाये।
ऐसे कृपानिधि के पदपंकज, थापतु हो हिय हर्ष बढाये।।१।।

ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर, संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद वसंततिलका

देवापगा सुवरवारि विशुद्ध लायो,
भृंगार हेम भरि भक्ति हिये बढायो।
रागादिदोष मलमर्द्दनहेतु येवा,
चर्चौं पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा ।।१।।

ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलम्।

श्रीखंडसार वर कुंकुम गारि लीनो।
कंसंग स्वच्छ घसि भक्ति हिये धरीनो ।।रा०।।२।।

ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनम्।

मुक्ता-समान सित तंदुल सार राजें।
धारंत पुंज कलिकुंज समस्त भाजें ।।रा०।।३।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम्।

श्रीकेतकी प्रमुख पुष्प अदोप लायो ।
नीरग जगकरि भृग सुरग पायो ॥रा०॥४॥
ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वसनाय पुष्पम् ।

नैवेद्य सार चरु चारु सवारि लायो ।
जाबूनद-प्रभृति भाजन शीस नायो ॥रा०॥५॥
ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम ।

स्नेह प्रपूरित सुदीपक जोति राजै ।
स्नेह प्रपूरित हिये जजतेऽघ भाजै ॥रा०॥६॥
ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपम् ।

कृष्णागुरु प्रमुखगध हुताश माहीं ।
खेवो तवाग्र वसुकर्म जरत जाहीं ॥रा०॥७॥
ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपम् ।

निम्बाम्र कर्कटि सु दाडिम आदि धारा ।
सौवर्ण गध फल सार सुपक्क प्यारा ॥रा०॥८॥
ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलम् ।

कश्रीफलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजे ।
नाचे रचे मचत बज्जत सज्ज बाजे ॥रा०॥९॥
ॐ ह्री श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घम् ।

पचकल्याणक

छंद इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा

आठै वदी चत सुगर्भ माहीं,
आये प्रभू मगलरूप थाहीं ।

सेवैं सची मातु अनेक भेवा,
चर्चों सदा शीतलनाथ देवा ।।१।।

ॐ ह्री चैत्रकृष्णाष्टम्या गर्भमङ्गलम ण्डिताय श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घम् ।

श्री माघ की द्वादशि श्याम जायो,
भूलोक मे मंगल सार आयो ।
शैलेन्द्र पै इन्द्र फनिन्द्र जज्जै,
मैं ध्यान धारो भवदुःख भज्जैं ।।२।।

ओ ह्री श्री माघकृष्णद्वादश्या जन्मम गलमण्डिताय श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घम् ।

श्री माघ की द्वादशि श्याम जानो,
वैराग्य पायो भवभाव हानो ।
ध्यायो चिदानन्द निवार मोहा,
चर्चों सदा चर्न निवारि कोहा ।।३।।

ओ ह्री माघकृष्णद्वादश्या तपोम गलमण्डिताय श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घम् ।

चतुर्दशी पौषवदी सुहायो,
ताही दिना केवललब्धि पायो ।
शोभै समोसृत्य बखानि धर्म,
चर्चों सदा शीतल पर्म शर्म ।।४।।

ओ ह्री पौषकृष्णचतुर्दश्या ज्ञानम गलमण्डिताय श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ ।

कुवार की आठैं शुद्ध बुद्धा,
भये महामोक्षसरूप शुद्धा ।

तित धर्मबखानि कियौ हितको ॥५॥

पहले महि श्रीगजराज रजै,

दुतिये महि कल्पसुरी जु सजै।

त्रितिये गणनी गुन भूरि धरैं,

चवथे तिय जोतिष जोति भरैं ॥६॥

तिय-वितरनी पनमे गनिये,

छहमे भुवनेसुर ती भनिये।

भुवनेश दशो थित सत्तम हैं,

वसुमे वसु-वितर उत्तम हैं ॥७॥

नव मे नभजोतिष पच भरे,

दशमे दिविदेव समस्त खरे।

नरवृन्द इकादशमे निवसैं,

अरु बारह में पशु सर्व लसैं ॥८॥

तजिवैर, प्रमोद धरैं सब ही,

समतारस मग्न लसैं तब ही।

धुनि दिव्य सुनै तजि मोहमल,

बनराज असी धरि ज्ञानबल ॥९॥

सबके हित तत्त्व बखान करे,

करुना-मन-रंजित शर्म भरे।

वरने षटद्रव्य तनें जितने,

वर भेद विराजतु हैं तितने ॥१०॥

पुनि ध्यान उभै शिवहेत मुना,
इक धर्म दुती सुकल अधुना।
तिन धर्म सुध्यान तणो गुनियो,
दशभेद लखे भ्रमको हनियो ॥११॥
पहलो अरि नाश अपाय सही,
दुतियो जिनवैन उपाय गही।
त्रिति जीवविचै निजध्यावन है,
चवथो सु अजीव रमावन है ॥१२॥
पनमो सु उदै वलटारन है,
छहमो अरि-राग-निवारन है।
भव त्यागन चिंतन सप्तम है
वसुमो जितलोभ न आतम है ॥१३॥
नवमो जिनकी धुति सीस धरै,
दशमो जिनभाषित हेत करै।
इमि धर्म तणो दश भेद भन्यो,
पुनि शुक्लतणो चहु येम गन्यो ॥१४॥
सुपृथक्त-वितर्क-विचार सही,
सुइकत्व-वितर्क-विचार गही।
पुनि सूक्ष्मक्रिया-प्रतिपात कही,
विपरीत-क्रिया-निरवृत्त लही ॥१५॥
इन आदिक सर्व प्रकाश कियो,
भवि जीवनको शिव स्वर्ग दियो।

पुनि मोच्छविहार कियो जिनजी,
सुखसागर मग्न चिर गुनजी ॥१६॥
अब मै शरना पकरी तुमरी,
सुधि लेहु दयानिधिजी हमरी ।
भव व्याधि निवार करो अब ही,
मति ढील करो सुख द्यो सब ही ॥१७॥

छद घत्तानद

शीतल जिन ध्याऊ भगति बढाऊ,ज्यो रतनत्रयनिधि पाऊं ।
भवदंद नशाऊं शिवथल जाऊ,फेर न भौवनमे आऊ ॥१८॥

ओ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय महार्घम् ।

छद मालनी

दिढ़रथ सुत श्रीमान्. पचकल्याणक धारी,
तिनपद जुगपद्मं, जो जजै भवितधारी ।
सहसुख धनधान्य, दीर्घ सौभाग्य पावै,
अनुक्रम अरिदाहै, मोक्ष को सो सिधावै ॥१९॥

परिपुष्पाजलिम् क्षिपेत्, इत्याशीर्वाद ।



श्री वासुपूज्य जिनपूजा

छंद रूपकवित्त।

श्रीमतवासुपूज्य जिनवरपद, पूजन हेत हिये उमगाय।
थापो मनवचतन शुचि करकै, जिनकी पाटलदेव्या माय॥
महिष चिह्न पद लसै मनोहर लाल बरन तन समतादाय।
सो करुनानिधि कृपादृष्टिकरि, तिष्टहु सुपरितिष्ट इहँ आय॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्
ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठ ठ
ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

अष्टक

छंद जोगीरासा। आचलीबद्ध "जिनपदपूजों लवलाई॥"

गंगाजल भरि कनककुंभ में, प्रासुक गंध मिलाई।
करम कलंक विनाशन कारन, धार देत हरषाई॥
वासुपूज्य वसुपूज-तनुज-पद, वासव सेवत आई।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई।

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं।

कृष्णागरु मलयागिरचंदन, केशरसंग घसाई।
भवआताप विनाशन-कारन, पूजों पद चितलाई। वा० २।

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं।

देवजीर सुखदास शुद्धवर, सुबरन थार भराई।
पुंजधरत तुम चरनन आगैं, तुरित अखय पद पाई। वा० ३

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्।

पारिजात सतान कल्पतरु—जनित सुमन बहु लाई।
मीन केनु मद भंजनकारन, तुम पदपद्म चढाई।
वासु पूज्य वसु पूज-तनुज-पद, वासव सेवत आई।
बाल ब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई।४।

ओ ह्री श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाण विध्वसनाय पुष्प।

नव्यगव्यआदिक-रसपूरित, नेवज तुरत उपाई।
छुधारोग निरवारन कारन, तुम्हें जजो शिरनाई। वा०५।

ओ ह्री श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य।

दीपकजोत उदोत होत वर, दशदिश मे छबि छाई।
तिमिरमोहनाशक तुमको लखि, जजो चरन हरषाई। वा०६

ओ ह्री श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीप।

दशविध गधमनोहर लेकर, वातहोत्र मे डाई।
अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं, धूम सु धूम उडाई। वा० ७।

ओ ह्री श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं।

सुरस सुपक्क सुपावन फल लै, कचन थार भराई।
मोक्ष महाफलदायक लखि प्रभु, भेंट धरो गुनगाई। वा०८

ओ ह्री श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं।

जलफल दरव मिलाय गाय गुन, आठो अंग नमाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति ! निकट धरो यह लाई।वा०९

ओ ह्री श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ।।९।।

पंचकल्याणक

छंद पाईत्ता (मात्रा १४)

कलि छट्ट असाढ़ सुहायो। गरभागम मंगल पायो।
दशमे दिवितें इत आये। शतइन्द्र जजे सिर नाये। १।

ओं ह्रीं आषाढकृष्णषष्ठ्या गर्भ मङ्गल मण्डिताय श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घं निर्व०

कलि चौदस फागुन जानो। जनमे जगदीश महानो।
हरि मेरु जजे तब जाई। हम पूजत हैं चितलाई। २।

ओं ह्रीं श्रीफाल्गुनकृष्णचतुर्दश्या जन्ममङ्गल प्राप्ताय श्रीवासु-पूज्यजिनेन्द्राय अर्घं नि०

तिथि चौदस फागुन श्यामा। धरियो तप श्री अभिरामा।
नृप सुन्दर के पय पायो। हम पूजत अति सुख थायो।३।

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्या तपोमंङ्गल प्राप्ताय श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घं नि०

वदि भादव दोइज सोहै। लहि केवल आतम जो है।
अनअंत गुनाकर स्वामी। नित वंदो त्रिभुवन नामी। ४।

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णद्वितीयाया केवलज्ञान मण्डिताय श्रीवासु-पूज्य जिनेन्द्राय अर्घं नि०

सित भादव चौदस लीनो। निरवान सुथान प्रवीनो।
पुर चंपाथानक सेती। हम पूजत निज हित हेती। ५।

ओं ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्या मोक्षमङ्गल-प्राप्ताय श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घं निर्व०

जयमाला

दोहा

चंपापुर मे पंचवर, कल्याणक तुम पाय ।
सत्तर धनु तन शोभनो, जै जै जै जिनराय । १ ।

छद मोतियदाम (वर्ण १२) ।

महासुखसागर आगर ज्ञान । अनंत सुखामृतमुक्त महान ।
महाबलमडित खडितकाम । रमाशिवसग सदा बिसराम ।२
सुरिंद फनिंद खगिंद नरिंद । मुनिंद जजै नित पादरविंद ।
प्रभू तुव अंतरभाव विराग । सुबालहितें व्रतशीलसोराग ।३।
कियो नहिं राज उदाससरूप । सुभावन भावत आतम रूप ।
अनित्यशरीर प्रपचसमस्त । चिदातमनित्यसुखाश्रित वस्त ।४।
अशर्न नही कोउ शर्न सहाय । जहां जिय भोगत कर्मविपाय
निजातम कै परमेसुर शर्न । नहीं इनके बिन आपद हर्न ।५।
जगत्त जथा जलबुदबुद येव । सदा जिय एक लहै फलमेव ।
अनेक प्रकार धरी यह देह । भमे भवकानन आन न नेह ।६
अपावन सात कुधात भरीय । चिदातम शुद्ध सुभाव धरीय ।
धरै इनसों जब नेह तबेव । सुआवत कर्म तबै वसुभेव । ७ ।
जबै तन-भोग-जगत्त-उदास । धरै तब सवर निर्जरआस ।
करै जब कर्मकलक विनाश । लहै तब मोक्षमहासुखराश ।८
तथा यह लोक नराकृत नित्त । विलोकियते षट द्रव्यविचित्त
सुआतमजानन बोध विहीन । धरै किन तत्वप्रतीत प्रवीन ।९।

जिनागमज्ञानरु नजमभाव । सबै निजज्ञान विना विरसाव ।
सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्रसुकाल । सुभाव सबै जिहतें शिवहाल ।१०
लयोसबजोगसुपुन्य वशाय । कहो किमिदीजिय ताहि गँवाय ।
विचारत यो लौकान्तिक आय । नमे पदपंकज पुष्पचढाय ।।
कह्यो प्रभुधन्यकियो सुविचार । प्रबोधि सुयेमकियो जुविहार
तबैसौधर्मतनोहरि आय ।।रच्यौ शिविकाचढ़िआएजिनाय ।।
धरे तप पाय सुकेवलबोध । दियो उपदेश सुभव्य सबोध ।
लियोफिरमोक्ष महासुखराश । नमैनितभक्त सोईसुखआश ।।

घत्तानद ।

नित वासव वदत, पापनिकदत, वासपूज्य व्रत ब्रह्मपती ।
भवनकलखडित, आनदमंडित, जै जै जै जैवत जती ।१४।

ओ ह्रीं श्रीवासुपुज्यजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४।।

सोरठा छद ।

वासुपूजपद सार, जजौ दरबविधि भावसो ।
सो पावै सुखसार, भुक्ति मुक्तिको जो परम ।।१५।।

इत्याशीर्वाद परिपुष्पांजलि क्षिपेत् ।

श्री कुथुनाथजिनपूजा

छद माधवी तथा किरोट (वर्ण २५)

अजअंक अजैपद राजै निशक, हरै भवशक निशकित दाता ।
मतमत्त मतंगके माथें गँथे, मतवाले तिन्हे हनें ज्यो हरिहाता
गजनागपुरै लियो जन्म जिन्हौ, रविके प्रभुनदन श्रीमतिमाता
सहकुंथुसुकुथुनिके प्रतिपालक, थापौंतिन्हेजुतभक्तिविख्याता

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । सवौषट् ।
ओं ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठ ।
ओं ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ॥

अष्टक ।

चाल लावनी मरहठी की, लाला मनसुखरायजी कृत ।

कुंथु सुन अरज दास केरी । नाथ सुन अरज दासकेरी ।
भवसिन्धु परयो हो नाथ निकारो बांह पकर मेरी ।
प्रभू सुन अरज दासकेरी । नाथ सुन अरज दासकेरी ।
जगजाल परयो हो वेग निकारो बांह पकर मेरी । टेक ।
सुरसरिताको उज्वल जल भरि, कनकभृंग भेरी ।
मिथ्यातृषा निवारन कारन, धरो धार नेरी । कुंथु० ।१।

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।

बावन चंदन कदलीनंदन, घसिकर गुन टेरी ।
तपत मोह नाशन के कारन, धरो चरन नेरी । कुंथु० ।२।

ओं ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदन ।

मुक्ताफलसम उज्ज्वल अच्छत, सहित मलय लेरी ।
पुंज धरो तुम चरनन आगे अखय सुपद देरी । कुंथु ।३।

ओं ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

कमल केतकी बेला दौना, सुमन सुमनसेरी ।
समरशूल निरमूल हेतु प्रभु, भेंट करो तेरी । कुंथु० ।४।

ओं ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं ।

घेवर बावर मोदन मोदक, मृदु उत्तम पेरी ।
तासो चरन जजो करुनानिधि, हरो छुधा मेरी । कुंथु० ।५।

ओं ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।

कंचन दीपमई वर दीपक, ललित जोति घेरी।
सो लै चरन जजो भ्रम तम रवि, निज सुबोध देरी। कुंथु०६
ओं ह्री श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप
देवदारु हरि अगर तगर करि चूर अगनि खेरी।
अष्ट करम ततकाल जरै ज्यो, धूम धनजेरी। कुंथु० ।७।
ओ ह्री श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप
लोग लायची पिस्ता केला, कमरख शुचि लेरी।
मोक्छ महाफल चाखन कारन, जजो सुकरि ढेरी। कुं० ।८।
ओ ह्री श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल
जल चदन तदुल प्रसून चरु, दीप धूप लेरी।
फलजुत जजन करों मनसुख धरि, हरो जगत फेरी ।कुं०९।
ॐ ह्री श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं

पंचकल्याणक

छन्द मोतियदाम (वर्ण १२)

सुसावनकी दशमीकलि जान। तज्योसरवारथसिद्ध विमान।
भयो गरभागममगल सार। जजै हम श्रीपद अष्टप्रकार।१।
ओ ह्री श्रावणकृष्णदशम्या गर्भमगलप्राप्ताय श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अर्घ
महा बयशाख सु एकम शुद्ध। भयो तब जन्म तिज्ञान समृद्ध।
कियो हरि मगल मदरशीस। जजै हम अत्र तुम्हे नुतशीस।२।
ॐ ह्री वैशाखशुक्लप्रतिपदि जन्ममगलप्राप्ताय श्रीकुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घं
तज्यो षटखंड विभौ जिनचद। विमोहितचित्तचितार सुछद।

धरे तप एकम शुद्ध विशाख। सुमन भये निजआनदचाख ।३

ओ ह्री वैशाखशुक्लप्रतिपदि नि क्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीकु थुनाथजिनेन्द्राय अर्घं।

सुदी तियचैत सु चेतन शक्त। चहूं अरि छैकरि तादिन व्यक्त
भई समवसृत भाखि सुधर्म। जजो पद ज्यों पद पाइयपर्म ।४

ओ ह्री चैत्रशुक्लतृतीयाया केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीकु थुनाथ जिनेन्द्राय अर्घं

सुदी वैशाखसु एकमनाम। लियौतिहि द्यौस अभै शिवधाम
जजे हरि हर्षित मगल गाय। समर्चतु हौ सु हिक्षावचकाय ५

ओ ह्री वैशाख शुक्ल प्रतिपदि मोक्षमगलप्राप्ताय श्रीकु थुनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्व०

जयमाला

अडिल्ल छद। (मात्रा २१ रूपकालंकार)।

खट खंडन के शत्रु राजपदमे हने।
धरि दीक्षा खटखंडन पाप तिन्हे दनें ॥
त्यागि सुदरशन चक्र धरम चक्री भये।
करमचक्र चकचूर सिद्ध दिढ़ गढ लये ॥१॥
ऐसे कुंथुजिनेशतनें पदपद्मको ॥
गुनअनंत भडार महासुखसद्मको ॥
पूजो अरघ चढाय पूरणानंद हो।
चिदानद अभिनद इन्द्रगन वद हो ॥२॥

पद्धरी छद (मात्रा १६)।

जय जय जय जय श्रीकुंथुदेव। तुम ही ब्रह्मा हरि त्रिबुकेद

जय बुद्धि विदांवर विष्णु ईस । जय रमाकत शिवलोक शीस
जय दयाधुरधर सृष्टिपाल, जय जय जगबधू सुगुनमाल ।
सरवारथसिद्ध विमान छार, उपजे गजपुर मे गुन अपार ।४।
सुरराजकियो गिरन्हौन जाय, आनद-सहितजुत-भगत भाय ।
पुनि पितासौंपिकरमुदितअग, हरितांडव-निरत कियोअभग ।
पुनि स्वर्गगयो तुम इत दयाल, वय पायमनोहरप्रजापाल ।
खटखडविभौभोग्योसमस्त फिर त्याग जोगधारयौ निरस्त ६
तबघाति घात केवल उपाय, उपदेश दियो सबहित जिनाय ।
जाकेजानतभ्रम-तमविलाय, सम्यक्दर्शन निरमललहाय ।७।
तुम धन्य देव किरपा-निधान, अज्ञान-छिपा-तमहरन भान ।
जयस्वच्छगुनाकर शुक्तशुक्त, जयस्वच्छसुखामृत भुक्तमुक्त ।
जय भौभयभजन कृत्यकृत्य । मैं तुमरो हो निज भृत्य भृत्य ।
प्रभुअशरनशरन अधारधार, मम विघ्नतूलगिरिजारजार ।९।
जय कुनय यामिनी सूर सूर, जय मन वांछित सुख पूर पूर ।
मम करमबध दिढ चूर चूर, निजसम आनद दै भूर भूर १०
अथवा जबलौंशिव लहौ नाहि, तबलो ये तोनित ही लहांहि ।
भव भवश्रावक-कुलजनमसार, भवभव सतमत सतसग धार ।।
भव भव निजआतम-तत्व ज्ञान, भवभव तपसजमशील दान ।
भवभव अनुभव नितचिदानद, भवभव तुमआगम हे जिनद ।।
भवभव समाधिजुत मरनसार, भवभव व्रतचाहो अनागार ।
यह मोको हेकरुणानिधान, सब जोग मिला आगमप्रमान १३
जबलो शिवसम्पतिलहो नांहि, तबलो मैं इनको नितलहांहि ।
यह अरजहिये अवधारि नाथ, भवसकट हरि कीजै सनाथ ।।

छद घत्तानन्द (मात्रा ३१)

जय दीनदयाला, वरगुनमाला, विरदविशाला सुख आला ॥
मै पूजों ध्यावो शीस नमावों, देहु अचल पदकी चाला ।१५।

ओ ह्री श्री कुथुनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ नि० स्वाहा ॥

छद रोकड मात्रा (२४)

कुंथुजिनेसुरपादपदम जो प्रानी ध्यावे ।
अलि समकर अनुराग, सहज सो निजनिधि पावे ॥
जो बांचे सरदहै, करै अनुमोदन पूजा,
वृंदावन तिह पुरुष सदृश, सुखिया नहि दूजा ॥१६॥

इत्याशीर्वाद परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।

इति श्रीकुथुनाथजिनपूजा समाप्त ॥

श्रीअरनाथजिनपूजा ।

छप्पय छद । वीररसरूपकालकार

तप तुरंग असवार धार, तारन विवेक कर ।
ध्यान शुकल असि धार, शुद्ध सुविचार सुबखतर ।
भावन सेना धरम, दशों सेनापति थापे ।
रतन तीन धरि सकति मंत्रि अनुभो निरमापे ।
सत्तातल सोह सुभटि धुनि, त्याग केतु शत अग्र धरि ।
इहविध समाज सज राजको अरजिन जीते करम अरि ।१।

ओ ह्री श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् ।
ओ ह्री श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठ
ओ ह्री श्री अरनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक ।

छंद त्रिभंगी (अनुप्रयामक मात्रा ३२-जगनवर्जित)

कनमनिमय झारी, दृगसुखकारी, सुरसरितारी नीरभरी।
मुनिमनसम उज्जल, जनमजरादल, सोलें पदतल, धारकरी।
प्रभु दीनदयालं, अरिकुलकालं, विरदविशालं सुकुमालं।
हरि मम जंजाल, हे जगपाल, अरगुनमाल, वरमाल।१।

ओं ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल

भवताप नशावन, विरद सुपावन, सुनि मनभावन, मोदभयो।
तातैं घसिबावन, चंदनपावन, तरहिंचढावन,उमगिअयो। प्रभु०

ओं ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदन

तंदुल अनियारे, श्वेतसँवारे, शशिदुति टारे, थार भरे।
पदअखयसुदाता, जगविख्याता, लखिभवताता पुंजधरे। प्रभु०

ओं ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्

सुरतरुके शोभित, सुरन मनोभित, सुमनअछोभित लैआयो।
मनमथके छेदन, आप अवेदन, लखि निरवेदन गुनगायौ। प्रभु०

ओं ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्प

नेवज सज भक्षक प्रासुक अक्षक,पक्षकरक्षक स्वच्छ धरी।
तुम करमनिकक्षक, भस्मकलक्षक, दक्षकपक्षक रक्षकरी। प्र०

ओं ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य

तुम भ्रमतमभंजन मुनिमनकंजन, रंजन गंजन मोहनिशा।
रविकेवलस्वामी, दीपजगामी,तुमढिग आमी पुन्यदृशा। प्रभु०

ओं ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप.

दशधूप सुरंगी गंधअभंगी बन्हि वरंगी माँहि हवै।
बसुकर्म जरावै धूमउड़ावै, तांडव भावै नृत्य पवै। प्रभु०

ओं ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप।

रितुफल अतिपावन, नयनसुहावन, रसनाभावन, कर लीनें।
तुमविघनविदारक, शिवफलकारक,
भवदधि तारक, चरचीनें। प्रभु०

ओं ह्री श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल

सुचि स्वच्छ पटीरं, गंधगहीर, तंदुलशीर, पुष्पचरुं॥
वर दीपं धूप, आनदरूपं, लै फल भूप, अर्घकर। प्रभु०

ओ ह्री श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं

पंचकल्याणक।

छन्द चौपाई (मात्रा १६)

फागुन सुदी तीज सुखदाई। गरभ सुमंगल ता दिन पाई।
मित्रादेवी उदर सु आये। जजे इन्द्र हम पूजन आये।१।

ॐ ह्री फाल्गुनशुक्ल तृतीयाया गर्भमगलप्राप्ताय श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं।

मँगसिर शुक्लचतुर्दशि सोहै। गजपुर जनम भयौ जग मोहै।
सुर गुरु जजे मेरुपर जाई। हम इत पूजें मनवचकाई।२।

ॐ ह्री मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्या जन्ममगलप्राप्ताय श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं नि०।२।

मंगसिर सित चौदस दिन राजै। तादिन संजम धरे विराजै।
अपराजित घर भोजन पाई। हम पूजें इत चित हरषाई।३।

ओ ह्री मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्या निःक्रमणमगलमण्डिताय श्रीअर-नाथ जिनेन्द्राय अर्घनि०।३।

कातिक सित द्वादसि अरि चूरे। केवलज्ञान भयो गुन पूरे।
समवसरन थिति धरमबखाने। जजतचरन हम पातकभाने।४

ओ ह्री कातिकशुक्लद्वादश्या ज्ञानमगलमण्डिताय श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं नि०।४।

चैत शुकल ग्यारस सब कर्म। नाशि वास कियशिव-थलपर्म।
निह्चल गुन अनंत भंडारी। जजो देव सुधि लेहु हमारी।५।
ओं ह्रीं चैत्रशुक्लएकादश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीअरनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्व०।५।

जयमाला।

दोहा छन्द (जमकपद तथा लाटानुबंधन।)

बाहर भीतर के जिते, जाहर अर दुखदाय।
ता हर कर अरजिन भये, साहर शिवपुर राय॥१॥
राय सुदरशन जासु पितु, मित्रादेवी माय।
हेमवरन तन वरष वर, नव्वै सहस सुआय॥२॥

छन्द तोटक (वर्ण १२)

जय श्रीधरश्रीकरश्रीपति जी। जय श्रीवर श्रीभरश्रीमतिजी
भवभीमभवोदधि तारन हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।३
गरभादिक मंगल सार धरे। जग जीवनि के दुखदंद हरे।
कुरुवंशशिखामनि तारन हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।४
करि राज छखंडविभूतिमई। तप धारत केवलबोध ठई।
गण तीस जहाँ भ्रमवारन हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।५
भविजीवनिको उपदेश दियौ। शिवहेत सबै जन धारि लियो।
जगके सब संकट टारन हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।६
कहि बीसप्ररूपनसार तहाँ। निजशर्म सुधारस धार जहाँ।
गति चार हृषीपन धारन हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।७

खट कायतिजोग तिवेदमथा। पनवीसकषा वसुज्ञानतथा।
सुर संजमभेद पमारन हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।८
रस दर्शन लेश्यय भव्य जुग। खट सम्यक् सैनिय भेद युगं।
जुग हार तथा सु अहारन हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।९
गुनथान चतुर्दस मारगना। उपयोग दुवादश भेद भना॥
इमि वीस विभेद उचारन है। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।१०
इन आदिसमस्त बखान कियौ। भवि जीवनने उरधार लियौ
कितने शिववादिन धारन हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।११
फिर आपअघाति विनाशसवै। शिवधामविषै थितकीन तबै।
कृतकृत्य प्रभू जगतारन है। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।१२
अब दीनदयाल दया धरिये। मम कर्म कलंक सबै हरिये।
तुमरे गुनको कछु पार न हैं। अरनाथ नमो सुखकारन हैं।१३

घत्तानन्द छन्द (मात्रा ३१)

जय श्रीअरदेवं, सुरकृतसेवं, समताभेव, दातार।
अरिकर्म विदारन, शिवसुखकारन, जयजिनवरजनत्रातारं।१४

इति श्रीअरनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं नि० स्वाहा॥

छन्द आर्या (मात्रा ६०)

अरजिनके पदसार, जो पूजै द्रव्यभावसो प्रानी।
सो पावै भवपारं, अजरामर मोच्छथान सुखखानी॥१५॥

इत्याशीर्वाद परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत्।
इति श्रीअरनाथजिनपूजा समाप्त

श्रीमल्लिनाथ जिनपूजा

छन्द रोकड ।

अपराजिततैं आय नाथ मिथलापुर जाये ।
कुभरायके नन्द, प्रजापति मात बताये ॥
कनक वरन तन तुंग, धनुष पच्चीस विराजै ।
सो प्रभु तिष्ठहु आय निकट मम ज्यो भ्रमभाजै ॥

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । सवौषट् ।
ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठ ।
ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् !

अष्टक

छन्द जोगीरासा (मात्रा २८)

सुर-सरिता-जल उज्जल लै कर, मनिभृङ्गार भराई ।
जनम जरामृत नासनकारन, जजहु चरन जिनराई ॥
राग-दोष-मद-मोहहरनको, तुम ही हो वरवीरा ।
यातै शरन गही जगपतिजी, वेग हरौ भवपीरा ॥ १ ॥

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल ।

बावनचदन कदलीनदन, कुकुमसग घसायौ ।
लेकर पूजौ चरनकमल प्रभु, भवआताप नसायौ ॥ राग० २

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चदनं ।

तंदुलशशिसम उज्जल लीनें, दीनें पुज सुहाई ।
नाचत राचत भगति करत ही, तुरित अखैपद पाई । राग० ३

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

पारिजातमंदार सुमन, संतान जनित महकाई ।
मार सुभट मदभंजनकारन, जजहुं तुम्हे शिरनाई ।।
राग-दोष-मद-मोहहरन को, तुम हो हो वर वीरा ।
यातें शरन गही जगपतिजी, वेग हरो भवपीरा ।।४।।

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वसनाय पुष्प ।

फेनी गोझा मोदनमोदक, आदिक सद्य उपाई ।
सो लै छुधा निवारन कारन जजहुं चरन लवलाई । राग० ५

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य ।

तिमिरमोह उरमंदिर मेरे, छाय रह्यो दुखदाई ।
तासु नाश कारन को दीपक, अद्भुतजोति जगाई । राग० ६

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप ।

अगर तगर कृष्णागर चदन चूरि सुगध बनाई ।
अष्टकरम जारनको तुमढिग, खेवत हौं जिनराई । राग० ७

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप ।

श्रीफल लौंग बदाम छुहारा, एला केला लाई ।
मोक्ष महाफलदाय जानिकै, पूजौं मन हरखाई । राग० ८

ओ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल ।

जल फल अरघ मिलाय गाय गुन, पूजो भगति बढाई ।
शिवपदराज हेत हे श्रीधर, शरन गहो मैं आई । राग० ९

ॐ ह्री श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ ।

पंचकल्याणक

लक्ष्मीधरा छन्द (१२ वर्ण)

चैतकी शुद्ध एकैंभलीराजई। गर्भकल्यानकल्यानको साजई।
कुंभराजा प्रजापति माता तने। देवदेवी जजे शीश नाये घने।

ओ ह्ली चैत्र शुक्लप्रतिपदि गर्भागम-मगल-मण्डिताय श्रीमल्लि-नाथजिनेन्द्राय अर्घ।

मार्गशीर्षेंसुदीग्यारसीराजई। जन्मकल्यानकोद्यौस सोछाजई
इन्द्रनागेंद्रपूजें गिरेंद्रे जिन्हें। मैंजजौंध्यायकेंशीशनावो तिन्हे

ओ ह्ली मार्गशीर्ष-शुक्लैकादश्या जन्म-मगल-प्राप्ताय श्रीमल्लि-नाथजिनेन्द्राय अर्घ।

मार्गशीर्षेंसुदीग्यारसीकेदिना। राजको त्याग दीक्षाधरीहैंजिना
दान गोछीर को नदसेनें दयौ। मैंजजोजासुके पचचर्जे भयो

ओ ह्ली मार्गशीर्षशुक्लैकादश्या तपो-मगल-मण्डिताय श्रीमल्लि-नाथजिनेन्द्राय अर्घं।

पोषकीश्यामदूजीहनेघातिया।केवलज्ञानसाम्राज्यलक्ष्मीलिया
धर्मचक्री भये सेव शक्री करें। मै जजो चर्न ज्योकर्मवक्री टरैं

ओ ह्ली पौषकृष्णाद्वितीयाया केवलज्ञान—प्राप्नाय श्रीमल्लि-नाथजिनेन्द्राय अर्घ।

फाल्गुनी सेत पांचै अघाती हते। सिद्धआलै वसे जाय सम्मेदतें
इन्द्रनागेंद्र कीन्हीक्रियाआयकें। मैंजजोसो मही ध्यायकेंगायकें

ओ ह्ली फाल्गुन-शुक्ल-पचम्या मोक्षमगल-प्राप्ताय श्रीमल्लि-नाथजिनेन्द्राय अर्घ।

जयमाला

घत्तानन्द छन्द (३१ मात्रा)

तुम नमित सुरेशा, नर नागेशा, रजतनगेशा, भगतिभरा ।
भवभयहरनेशा, सुखभरनेशा, जै जै जै शिव-रमनिवरा ।१।

पद्धरि छन्द (मात्रा १६ लघ्वन्त) ।

जय शुद्ध चिदातम देव एव । निरदोष सुगुन यह सहज टेव ।
जय भ्रमतमभजन मारतड । भविभवदधितारनको तरड ।२
जय गरभजनममडितजिनेश । जय छायकसमकितवुद्धभेस ।
चौथे कियसातोप्रकृति छीन । चौअनतानु मिथ्यात तीन ।३
सप्तम किय तीनो आयु नास । फिर नवें अश नवमेविलास ।
तिनमाहिप्रकृतिछत्तीस चूर । या भांति कियौ तुमज्ञानपूर ।४
पहिले मह सोलह कहँ प्रजाल । निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचाल ।
हनि थानगृद्धिकोंसकल कुव्व । नर तिर्यंग्गति गत्यानुपुव्व ।५
इक वे ते चौ इन्द्रीय जात । थावर आतप उद्योत घात ।
सूच्छम साधारन एम चूर । पुनि दुतिय अश वसु करौदूर ।६
चौ प्रत्याप्रत्याख्यान चार । तीजे सु नपुसक वेद टार ।
चौथे तियवेद विनाशकीन । पांचै हास्यादिक छहो छीन ।७।
नरवेद छठें छय नियत धीर । सातयें सज्वलन क्रोधचीर ।
आठवें संज्वलन मानभान । नवमे माया सज्वलन हान ।८
इमि घात नवें दशमे पधार । सज्वलनलोभ तित हू विदार ।
पुनि द्वादशके द्वयअशमाहि । सोरह चकचूर कियोजिनाहि ९
निद्रा प्रचला इकभागमाहि । दुति अश चतुर्दश नाश जाहि ।
ज्ञानावरनी पन दरश चार । अरि अतराय पाचो प्रहार ।१०

इमि छय त्रेशठ केवल उपाय। धरमोपदेश दीन्हो जिनाय।
नवकेवललब्धि विराजमान। जय तेरमगुनतिथि गुनअमान ॥
गत चौदहमे द्वै भाग तत्र। क्षय कीन वहत्तर तेरहत्र।
वेदनो असाताको विनाश। औदारि विक्रियाहार नाश।१२
तैजस्य कारमानो मिलाय। तन पचपच वधन विलाय।
सघात पच घाते महत। त्रय आगोपाग सहित भनंत।१३
सठान सहनन छह छहेव। रसवरन पंच वसु फरस भेव।
जुगगध देवगति सहित पुव्व। पुनि अगुरुलघूउस्वासदुव्व १४
परउपघातक सुविहाय नाम। जुत अशुभगमन प्रत्येक खाम
अपरजथिर अथिरअशुभसुभेव। दुरभागसुसुर दुस्सुरअभेव।१५
अन आदर और अजस्य कित्त। निरमान नीचगोतौ विचित्त।
ये प्रथम वहत्तर दिय खपाय। तव दूजे मे तेरह नशाय १६
पहले सातावेदनो जाय। नरआयु मनुषगति कों नशाय।
मानुषगत्यानु सु पूरवीय। पचेंद्रिय जात प्रकृति विधीय १७
त्रसवादर परजापति सुभाग। आदरजुत उत्तमगोत पाग।
जसकीरती तीरथप्रकृति जुक्त। ए तेरहछयकरि भये मुक्त१८
जय गुनअनत अविकार धार। वरनत गनधर नहिलहत पार
ताको मै वदौ वारवार। मेरी आपत उद्धार धार।१९।
सम्मेदशैल सुरपति नमत। तब मुकतथान अनुपम लसंत।
वृन्दावन वदत प्रीतिलाय। मम उरमे तिष्ठहु हे जिनाय २०

घत्तानद।

जयजय जिनस्वामी, त्रिभुवननामी, मलविमलकल्यानकरा
भवददविदारन आनदकारन, भविकुमोदनिशिईश वरा २१

ओ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरिणी।

जजें है जो प्रानी दरब अरु भावादि विधिसो,
करै नानाभाँती भगति थुति औ नौति सुधिसौं।
लहै शक्री चक्री सकल सुख सौभाग्य तिनको,
तथा मोक्ष जावै जजत जन जो मल्लिजिनको।२२।

इत्याशीर्वाद। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रीनेमिनाथपूजा

छंद लक्ष्मी, तथा अर्द्धलक्ष्मीधरा।

जैतिजै जैतिजै जैतिजै नेमकी, धर्म औतार दातार श्योचैनकी
श्री शिवानद भौफद निकन्द ध्यावै, जिन्हैं इन्द्र नागेन्द्र ओ मैनकी
पर्मकल्यानके देनहारे तुम्हो, देव हो एव ताते करौं ऐनको।
थापि हौं वार त्रै शुद्ध उच्चार त्रै, शुद्धताधार भौपारकू लेनकी

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठ ठ।
ओ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

चाल होली, ताल जत्त।

दाता मोच्छके, श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाता० ॥टेक॥
निगम नदी कुश प्राशुक लीनो, कचनभृग भराय!
मनवचतनतें धार देत ही, सकल कलक नशाय॥
दाता मोच्छके, श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाता० ॥१॥

ओ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल।

हरिचन्दनजुत कदलीनन्दन, कुंकुम सङ्ग घसाय।
विघनतापनाशनके कारन,जजौं तिहारे पाय ॥दाता० ॥२॥
ओ ह्री श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चदन।
पुण्यराशि तुमजस सम उज्जल, तदुल शुद्ध मगाय।
अखय सौख्य भोगन के कारन,पुज धरो गुनगाय॥दा० ३॥
ओ ह्री श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
पुण्डरीक तृणद्रुमको आदिक, सुमन सुगंधितलाय।
दर्प्पक मनमथभजनकारन, जजहु चरन लवलाय ॥दा० ४॥
ओ ह्री श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्प।
घेवर वावर खाजे साजे, ताजे तुरत मँगाय।
क्षुधावेदनी नास करनको, जजहुँ चरन उमगाय ॥दाता०५॥
ओ ह्री श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य।
कनक दीप नवनीत पूरकर, उज्जल जोति जगाय।
तिमिरमोहनाशक तुमको लखि,जजहुँ चरन हुलसाय।दा०६॥
ओ ह्री श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप।
दशविध गध मँगाय मनोहर,गुजत अलिगन आय।
दशो बध जारन के कारन, खेवो तुमढिग लाय ॥दा०७॥
ओ ह्री श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं।
सुरस वरन रसना मनभावन, पावन फल सु मगाय।
मोक्षमहाफल कारन पूजो, हे जिनवर तुमपाय।दाता०८॥
ओ ह्री श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं।
जलफलआदि साज शुचि लीने,आठो दरव मिलाय।
अष्ठम छितिके राज करनको, जजो अग वसु नाय ॥दा०॥
ओ ह्री श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं।

पञ्चकल्याणक

पाइता छद।

सित कातिक छट्ठ अमदा। गरभागम आनन्दकन्दा।
शचि सेय सिवापद आई। हम पूजत मनवचकाई ॥१॥

ओ ह्री कातिकशुक्लपष्ठ्या गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ नि०।

सित सावन छट्ठ अमन्दा। जनमे त्रिभुवन के चन्दा।
पितु समुद्र महासुख पायो। हम पूजत विघन नशायो ॥२॥

ओ ह्री श्रावणशुक्लपष्ठ्या जन्ममगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ नि०।

तजि राजमती व्रत लीनो। सित सावन छट्ठ प्रवीनो।
शिवनारि तबै हरपाई। हम पूजे पद शिरनाई ॥३॥

ओ ह्री श्रावणशुक्लपष्ठ्या तप कल्याणकप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ।

सित आश्विन एकम चूरे। चारो घाती अति कूरे।
लहि केवल महिमा सारा। हम पूजे पद अष्टप्रकारा ॥४॥

ओ ह्री आश्विन शुक्ल प्रतिपदि केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ।

सितषाढ अष्टमी चूरे। चारो अघातिया कूरे।
शिव उर्ज्जयन्ततें पाई। हम पूजे ध्यान लगाई ॥५॥

ओ ह्री आपाढशुक्लाष्टम्या मोक्षमगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ।

जयमाला

दोहा

श्याम छवी तन चाप दश, उन्नत गुननिधिधाम ।
शख चिह्नपद मे निरखि, पुनि पुनि करो प्रनाम ॥१॥

पद्धरी छद (१६ मात्रा लघ्वन्त) ।

जै जै जै नेमि जिनिंद चन्द । पितु समुद देन आनन्दकन्द ॥
शिवमात कुमुदमनमोददाय । भविवृन्द चकोर सुखी कराय ।२
जयदेव अपूरव मारतड । तम कोन ब्रह्मसुत सहस खड ।
शिवतियमुखजलजविकाशनेश । नहिरहोसृष्टिमेतम अशेष ।३।
भविभीत कोक कीनो अशोक । शिवमग दरशायो शर्मथोक ॥
जै जै जै जै तुम गुनगंभीर। तुम आगम निपुन पुनीत धीर ।४।
तुम केवल जोति विराजमान। जै जे जै जे करुनानिधान ॥
तुम समवसरन मे तत्वभेद । दरशायो जाते नशत खेद ।५।
तित तुमको हरि आनदधार । पूजत भगतीजुत बहु प्रकार ॥
पुनि गद्यपद्यमय सुजस गाय । जै बल अनत गुनवंतराय ।६।
जय शिवशकर ब्रह्मा महेश । जय बुद्ध विधाता विष्णुवेष ॥
जय कुमतिमतगनको मृगेंद्र । जय मदनध्वातको रविजिनेंद्र ।७
जय कृपासिंधु अविरुद्ध बुद्ध । जय रिद्धसिद्ध दाता प्रबुद्ध ॥
जय जगजनमनरजन महान । जय भवसागरमह सुष्टुयान ।८।
तुव भगति करे ते धन्य जीव । ते पावै दिव-शिवपद सदीव ।
तुमरो गुनदेव विविधप्रकार । गावत नित किन्नरकी जु नार।९
वर भगतिमाहि लवलीन होय। नाचै ताथेइ थेइ थेइ बहोय ॥
तुम करुणासागर सृष्टिपाल । अब मोकोवेगि करो निहाल ।१०

मैं दुख अनत वसुकरमजोग । भोगे सदीव नहिं और रोग ॥
तुमको जगमें जान्यो दयाल । हो वीतराग गुनरतनमाल।११।
तातें शरना अब गही आय । प्रभु करो वेगि मेरी सहाय ॥
यह विघनकरम मम खडखड । मनवाछितकारज मडमड १२
ससारकष्ट चकचूर चूर । सहजानन्द मम उर पूर पूर ॥
निजपर प्रकाशबुधिदेइ देई। तजिके बिलब सुधि लेई लेई ।१३।
हम जाचत हैं यह बार बार । भवसागरतें मो तार तार ॥
नहिंसह्योजात यहजगत दु.ख । तातै विनवो हे सुगुनमुक्ख।१४।

घत्तानद ।

श्रीनेमिकुमारं जितमदमार, शीलागार, सुखकार ।
भवभयहरतार, शिवकरतार, दातार धर्माधार ॥१५॥

ओ ह्री श्रीनेमिनाथ जिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मालिनी (१५ वर्ण) ।

सुखधनजससिद्धी पुत्रपौत्रादि वृद्धी ॥
सकल मनसि सिद्धी होतु है ताहि रिद्धी ॥
जजत हरपधारी नेमि को जो अगारी ।
अनुक्रम अरिजारी सो वरे मोच्छनारी ॥१६॥

इत्याशीर्वाद । पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।

सोलहकारण पूजा

[कविवर द्यानतराय जी]

सोलह कारण भाय तीर्थंकर जे भये ।
हरपे इन्द्र अपार मेरुपै ले गये ।।
पूजा करि निज धन्य लख्यौ वहु चावसों ।
हमहू पोडश कारन भावें भावसो ।।

ओ ह्री दर्शनविशुद्धयादिपोडशकारणानि ! अत्र अवतरत अवतरत सवोषट् ।

ओ ह्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठ ।

ओ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

कंचन-झारी निरमल नीर पूजो जिनवर गुन-गभीर ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
दरशविशुद्धि भावना भाय सोलह, तीर्थंकर-पद-दाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।।

ओ ह्री दर्शनविशुद्धि १ विनयसम्पन्नता २ शीलव्रतेष्वनतीचार ३ अभीक्ष्णज्ञानोपयोग ४ संवेग ५ शक्तितस्त्याग ६ शक्तितस्तप ७ साधुसमाधि ८ वैयावृत्यकरण ९ अर्हद्भक्ति १० आचार्यभक्ति ११ बहुश्रुतभक्ति १२ प्रवचनभक्ति १३ आवश्यकापरिहाणि १४ मार्गप्रभावना १५ प्रवचनवात्सलय १६ इतिपोडशकारणेभ्यो नम जल ।।१।।

चंदन घसौ कपूर मिलाय पूजौ श्रीजिनवरके पाय ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ओ ह्री दर्शनविशुदध्यादिषोडशकारणेभ्य. ससारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ।

तदुल धवल सुगध अनूप पूजौ जिनवर तिहु जग-भूप ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
दरशविशुद्धि भावना भाय सोलह तीर्थंकर-पद-दाय ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हा ।।

ओ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।३।

फूल सुगन्ध मधुप-गुजार पूजौ जिनवर जग-आधार ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ओ ह्रा दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्य कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।४।

सद नेवज बहुविधि पकवान पूजौ श्रीजिनवर गुणखान ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ओ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्य क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।५।

दीपक-ज्योति तिमिर छयकार पूजू श्रीजिन केवलधार ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ओ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीनि स्वाहा ।६।

अगर कपूर गध शुभ खेय श्रीजिनवर आगे महकेय ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।। दरश०।।

ओ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूप ।७।

श्रीफल आदि बहुत फलसार पूजो जिन वाछित-दातार ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ओ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ।८।

ओ ह्री अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भावनायै नम अर्घं ॥४॥

भ्रात न तात न पुत्र कलत्र न, सयम सज्जन ए सब खोटो ।
मन्दिर सुन्दर काय सखा, सबको इसको हम अतर मोटो ॥
भाउके भाव धरी मन भेदन, नाहि सवेग पदारथ छोटो ।
'ज्ञान' कहे शिव-साधनको जैसो, साहको काम करे जु बणोटो।

ओ ह्री सवेग भावनायै नम अर्घ ॥५॥

पात्र चतुर्विध देख अनूपम, दान चतुर्विध भावसु दीजे ।
शक्ति-समान अभ्यागतको, अति आदरसे प्रणिपत्य करीजे ।
देवत जे नर दान सुपात्रहि, तास अनेकहि कारण सीजे ॥
बोलत'ज्ञान'देहि शुभ दान जु, भोग सुभूमि महासुख लीजे ।

ओ ह्री शक्तितस्त्याग भावनायै नम अर्घं ॥६॥

कर्म कठोर गिरावन को निज, शक्ति-सम्मान उपोषण कीजे ।
बारह भेद तपे तप सुन्दर, पाप जलाजलि काहे न दीजे ॥
भाव धरी तप घोर करो, नर,जन्म सदा फल काहे न लीजे ॥
'ज्ञान' कहे तप जे नर भावत, ताके अनेकहि पातक छीजे ।

ओ ह्री शक्तितस्तपोभावनायै नम अर्घं ॥७॥

साधुसमाधि करो नर भावक, पुण्य बडो उपजे अघ छीजे ॥
साधु की सगति धर्मको कारण, भक्ति करे परमारथ सीजे
साधुसमाधि करे भव छूटत, कीर्ति-छटा त्रैलोक मे गाजे ।
'ज्ञान' कहे यह साधु बडो, गिरिश्रृङ्ग गुफा बिच जाय विराजे

ओ ह्री साधुसमाधि भावनायै नम अर्घ ॥८॥

कर्म के योग व्यथा उदई मुनि, पु गव कुन्तसभेषज कीजे ।
पीत कफान लसास भगन्दर, तापको सूल महागद छीजे ॥

ध्यान धरी मद दूर करी, दोउ बेर करे पडकम्मन भारी ।
'ज्ञान'कहे मुनि सो धनवन्त जु, दर्शन ज्ञान चरित्र उधारी ॥

ओ ह्री आवश्यकापरिहाणि भावनायै नम अर्घं ॥१४॥

जिन-पूजा रचो परमारथसूं, जिन आगे नृत्य महोत्सव ठाणो।
गावत गीत बजावत ढोल, मृदगके नाद सुधाग बखाणो ॥
सग प्रतिष्ठा रचो जल-जातरा, सद्गुरुको साहमो कर आणो ।
'ज्ञान'कहे जिन मार्ग-प्रभावन, भाग्य-विशेषसुं जानंहिं जाणो ॥

ओ ह्री मार्ग प्रभावनायै नम अर्घं ॥१५॥

गौरव भाव धरो मनसे मुनि-पुङ्गवको नित वत्सल कीजे ।
शीलके धारक भव्यके तारक, तासु निरतर स्नेह धरीजे ॥
धेनु यथा निजबालकके, अपने जिय छोडि न और पतीजे ।
'ज्ञान'कहे भवि लोक सुनो, जिन वत्सल भाव धरे अघ छोजे ॥

ओ ह्री प्रवचन-वात्सल्य भावनायै नम अर्घं ॥१६॥

जाप—ओ ह्री दर्शनविशुद्ध्यै नम, ओ ह्री विनयसम्पन्नतायै नम, ओ ह्री शीलव्रताय नम, ओ ह्री अभीक्ष्णज्ञानोपयोगाय नम, ओ ह्री सवेगाय नम, ओ ह्री शक्तितस्त्यागाय नम, ओ ह्री शक्तितस्तपसे नम, ओ ह्री साधुसमाध्यै नम, ओ ह्री वैयावृत्यकरणाय नम, ओ ह्री अर्हद्भक्त्यै नम, ओ ह्री आचार्यभक्त्यै नम, ओ ह्री बहुश्रुतभक्त्यै नम, ओ ह्री प्रवचनभक्त्यै नम, ओ ह्री आवश्यकापरिहाण्यै नम, ओ ह्री मार्गप्रभावनायै नम, ओ ह्री प्रवचनवत्सलत्वाय नम ॥१६॥

जयमाला

षोडश कारण गुण करै, हरै चतुरगति-वास ।
पाप पुण्य सब नाशके, ज्ञान-भान परकाश ॥

चौपाई १६ मात्रा

दरशविशुद्धि धरे जो कोई, ताको आवागमन न होई।
विनय महाधारै जो प्राणी, शिव-वनिताकी सखी बखानी ॥
शील सदा दिढ जो नर पालै, सो औरनकी आपद टालै।
ज्ञानाभ्यास करै मनमाही, ताके मोह-महातम नाही ॥
जो सवेग-भाव विसतारै, सुरग-मुकति-पद आप निहारै।
दान देय मन हरष विशेखै, इह भव जस, परभव सुख देखै ॥
जो तप तपै खपे अभिलाषा, चूरे करम-शिखर गुरु भाषा।
साधु-समाधि सदा मन लावै, तिहु जगभोग भोगि शिव जावै ॥
निश-दिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भव-नीर तिरैया।
जो अरहत-भगति मन आनै, सो जन विषय कषाय न जानै ॥
जो आचरज-भगति करै है, सो निर्मल आचार धरै है।
बहुश्रुतवत-भगति जो करई, सो नर सपूरन श्रुत धरई ॥
प्रवचन-भगति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानद-दाता।
षट् आवश्य काल जो साधै, सो ही रत्न-त्रय आराधै ॥
धरम-प्रभाव करै जे ज्ञानी, तिन-शिव-मारग रीति पिछानी।
वत्सल अग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थंकर पदवी पावै ॥

दोहा

एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय।
देव-इन्द्र-नर-वद्य-पद, 'द्यानत' शिव-पद होय ॥

ओ ह्री दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्य पूर्णार्घ निर्व०।

सवया तेईसा

सुन्दर षोडशकारण भावना निर्मल चित्त सुधारक धारैं,
कर्म अनेक हने अति दुर्धर जन्म जरा भय मृत्यु निवारैं ॥
दुःख दरिद्र विपत्ति हरं भव-सागरको पर पार उतारैं,
'ज्ञान' कहे यही षोडशकारण कर्म निवारण सिद्ध सुधारैं ॥

इत्याशीर्वाद

पंचमेरु पूजा

[कविवर द्यानतराय जी]

[गीता छन्द]

तीर्थंकरोके न्हवन-जलतैं भये तीरथ शर्मदा,
तातै प्रदच्छन देत सुर-गन पच मेरुनकी सदा ।
दो जलधि ढाई द्वीपमे सब गनत-मूल विराजही,
पूजौं असी जिनधाम-प्रतिमा होहि सुख दुखभाजही ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ जिनप्रतिमा-समूह ! अत्रावतरावतर सवौषट् ।

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ जिनप्रतिमा-समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि-जिनचैत्यालयस्थ-जिनप्रतिमा-समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

चौपाई आचलीबद्ध

सीतल-मिष्ट-सुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रनाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥

ओं ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दिर-विद्युन्मालि-पञ्चमेरुसम्बन्धि-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जल निर्वपामीति स्वाहा ।१।

जल केशर करपूर मिलाय, गंधसौ पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पाँचो मेरु असी जिन धाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धि-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो चन्दन ।२।
अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचो० ॥
ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो अक्षतम् ।३।
बरन अनेक रहे महकाय, फूलसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचो० ॥
ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो पुष्प ।४।
मन वांछित बहु तुरत बनाय, चरुसौं पूजो श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचो० ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्य ।५।
तम-हर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसो पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाचो० ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो दीप ।६।
खेऊ अगर अमल अधिकाय, धूपसो पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाचो ॥
ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो धूप ।७।
सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय, फलसो पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचो० ॥
ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्य फलं ।८।

आठ दरवमय अरघ वनाय, 'द्यानत' पूजौ श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पांचो० ।।
ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्वन्धि जिनचैत्यालयस्थ-जिनविम्बेभ्यो अर्घ्यं ।९।

जयमाला

प्रथम सुदर्शन-स्वामि विजय अचल मदर कहा ।
विद्युन्माली नाम, पच मेरु जगमे प्रगट ।।

केसरी छन्द

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै, भद्रशाल वन भूपर छाजै ।
चैत्यालय चारो सुखकारी, मन वच तन वदना हमारी ।।
ऊपर पंच-शतकपर सोहै, नदन-वन देखत मन मोहै ।
चैत्यालय चारो सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ।।
साढे वासठ सहस ऊँचाई, वन सुमनस शोभै अधिकाई ।
चैत्यालय चारो सुखकारी, मन वच तन वदना हमारी ।।
ऊँचा जोजन सहस-छतीस, पाण्डुक-वन सोहै गिरि-सीसं ।
चैत्यालय चारो सुखकारी, गन वच तन वंदना हमारी ।।
चारो मेरु समान वखाने, भूपर भद्रसाल चहुं जाने ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वदना हमारी ।।
ऊँचे पांच शतक पर भाखे, चारो नंदनवन अभिलाखे ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वदना हमारी ।।
साढे पचपन सहस उतंगा, वन सोमनस चार वहुरगा ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ।।
उच्च अठाइस सहस वताये, पाडुक चारो वन शुभ गाये ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वदना हमारी ।।

सुर नर चारन बदन आवै, सो शोभा हम किह मुख गावै।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मन वच तन बंदना हमारी ॥

दोहा।

पच मेरुकी आरती, पढे सुनै जो कोय।
'द्यानत' फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय ॥

ओ ह्री पचमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्वेभ्यो पूर्णार्घं नि०

नन्दीश्वरद्वीप-पूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

सरव परव मे बड़ो अठाई परव है।
नदीश्वर सुर जाहि लेय वसु दरब है ॥
हमै सकति सो नाहि इहा करि थापना।
पूजे जिनगृह-प्रतिमा है हित आपना ॥

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर सवौषट्।

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिन प्रतिमा-समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिन प्रतिमा-समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

कंचन-मणि मय-भृ गार, तीरथ-नीर भरा।
तिहु धार दई निरवार, जामन मरन जरा ॥
नदीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पुज करो।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद-भाव-धरो ॥

नदीश्वर द्वीप महान चारो दिशि सोहे ।

वावन जिन मन्दिर जान सुर नर मन मोहे ॥

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिणदिक्षु द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल ।१।

भव-तप-हर शीतल वास, सो चंदन नाही ।

प्रभु यह गुन कीजै साच, आयो तुम ठाही ॥नदी०॥

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ।२।

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहै ।

सब जीते अक्ष-समाज, तुमसम, अरु को है ॥नदी०॥

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।३।

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊ फूलनसौ ।

लहु शील-लच्छमी एव, छूटो सूलनसो ॥ नन्दी० ॥

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।४।

नेवज इद्रिय-बलकार, सो तुमने चूरा ।

चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥नन्दी०॥

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीतिस्वाहा ।५।

दीपककी ज्योति-प्रकाश, तुम तन मांहि लसै ।

टूटे करमनकी राश, ज्ञान-कणी दरसै ॥ नन्दी० ॥

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।६।

कृष्णागरु-धूप सुवास, दश-दिशि नारि वरैं ।
अति हरष-भाव परकाश, मानो नृत्य करैं ।। नन्दी० ।।

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।७।

बहुविधि फल ले तिहुँ काल, आनँद राचत है ।
तुम शिव-फल देहु दयाल, तुहि हम जाचत है ।। नन्दी० ।।

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।८।

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हो ।
'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत भूमि समरपतु हो ।। नन्दी०।।

ओ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।९।

जयमाला

दाहा ।

कार्तिक फागुन साढके अत आठ दिन माँहि ।
नदीश्वर सुर जात है, हम पूजें इह ठाँहि ।।१।।
एकसौ त्रेसठ कोडि जोजन महा ।
लाख चौरासिया एक दिशमे लहा ।।
आठमो द्वीप नन्दीश्वर भास्वर ।
भौन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकर ।।२।।
चार दिशि चार अजनगिरी राजही ।
सहज चौरासिआ एक दिश छाजही ।।
ढोल सम गोल ऊपर तले सुन्दर ।।भौन० ।। ३ ।।

दशलक्षणधर्म-पूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

अडिल्ल

उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव है।
सत्य शौच सयम तप त्याग उपाव है।
आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं,
चहुँगति-दुखतें काढ़ि मुकति करतार है ॥

ओ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्म ! अत्र अवतर अवतर सवौषट्।

ओ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।

ओ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा

हेमाचलकी धार, मुनि-चित सम शीतल सुरभि
भव-आताप निवार, दस लच्छन पूजौं सदा।

ओ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-सत्य-शोचसयम-तपस्त्यागा ब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय जल निर्वपामीति स्वाहा

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशो वि
भव आताप निवार, दस लच्छन पूजौ

ओ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय चन्दन निर्व०

अमल अखडित सार, तंदुल चन्द्र समान शु
भव-आताप निवार, दस लच्छन पूजौं सद

ओ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय अक्षत निर्व०

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरध-लोक
भव-आताप निवार, दस--लच्छन पूजौं सदा

ओ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय पुष्प निर्वपामीति

तैं करम पूरव किये खोटे, सहै क्यो नहिं जीयरा।
अति क्रोध-अगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा॥
ओ ह्री उत्तम-क्षमा-धर्माङ्गाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

मान महाविषरूप, करहि नीच गति-जगत मे।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा॥
उत्तम मार्दव-गुन मन माना, मान करन को कौन ठिकाना।
वस्यो निगोद माहितै आया, दमरी रूकन भाग बिकाया॥
रूकन बिकाया भाग-वशतै, देव इकइंद्री भया।
उत्तम मुआ चांडाल हूवा, भूप कीड़ो मे गया॥
जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करै जल–बुदबुदा।
करि विनय बहु-गुन बड़े जनकी, ज्ञान का पावै उदा॥
ओ ह्री उत्तममार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

कपट न कीजै कोय, चोरनके पुर ना बसै।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु सपदा॥
उत्तम आर्जव-रीति बखानी, रचक दगा बहुत दुखदानी।
मनमे हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तनसौं करिये॥
करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निरमल आरसी।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट-प्रीति अगारसी॥
नहि लहै लछमी अधिक छल करि, कर्म-बध-विशेषता।
भय त्यागि दूध बिलाव पोवै, आपदा नहि देखता॥
ओ ह्री उत्तमार्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामाति स्वाहा॥३॥

कठिन वचन मत बोल, पर निंदा अरु झूठ तज।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जग मे सुखी॥

तिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग कीच में।
इक घरी मत बिसरो करो नित, आव जम-मुख बीच में॥
ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

तप चाहें सुरराय, करम-शिखर को वज्र है।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम॥

उत्तम तप सब माँहि बखाना, करम-शैल को वज्र समाना।
बस्यो अनादि-निगोद-मँझारा, भू-विकलत्रय-पशु-तन धारा॥
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता।
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता॥
अति महा दुर्लभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरैं।
नर-भव अनूपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरैं॥
ॐ ह्रीं उत्तम तप धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

दान चार परकार, चार संघ को दीजिए।
धन बिजुली उनहार, नर-भव लाहो लीजिए॥

उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा।
निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान संभारै॥
दोनों संभारे कूप-जलसम, दरब घर में परिनया।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया॥
धनि साध शास्त्र अभय-दिवैया, त्याग राग विरोध को।
बिन दान श्रावक साधु दोनों, लहैं नाहीं बोध को॥
ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराज जी।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए॥

उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिन्ता दुख ही मानो।
फाँस तनक-सी तन में सालै, चाह लँगोटी की दुख भालै॥
भालै न समता सुख कभी नर, बिना मुनि-मुद्रा धरै।
धनि नगन पर तन-नगन ठाड़े, सुर-असुर पायनि परै॥
घरमाहिं तिसना जो घटावे, रुचि नाहिं संसार सौं।
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर उपगार सौं॥
ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९॥

शील-बाड़ नौ राख, ब्रह्म-भाव अन्तर लखो।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नर-भव सदा॥
उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनो, माता बहिन सुता पहिचानो।
सहैं बान-वरषा बहु सूरे, टिकै न नैन-बान लखि कूरे॥
कूरे तिया के अशुचि तन में, काम-रोगी रति करैं।
बहु मृतक सड़हिं मसान माहीं, काग ज्यों चोंचैं भरैं॥
संसार में विष-बेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरम दश पैंडि चढ़िकैं, शिव महल में पग धरा॥
ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१०॥

समुच्चय-जयमाला

दोहा

दश लच्छन वंदौं सदा, मन वांछित फलदाय।
कहौं आरती भारती, हम पर होहु सहाय॥

बेसरी छन्द

उत्तम छिमा जहाँ मन होइ, अंतर-बाहिर शत्रु न कोई।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नानाभेद ज्ञान सब भासै॥

उत्तम आर्जव कपट मिटावे, दुरगति त्यागि सुगति उपजावे।
उत्तम सत्य-वचन मुख बोले, सो प्रानी ससार न डोलै ॥
उत्तम शौच लोभ-परिहारी, सतोषी गुण-रत्न भडारी।
उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नर-भव सफल करै ले साता ॥
उत्तम तप निरवाछित पालै, सो नर करम-शत्रु को टालै।
उत्तम त्याग करे जो कोई, भोगभूमि-सुर शिवसुख होई ॥
उत्तम आकिंचन व्रत धारे, परम समाधि दशा विस्तारे।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावैं,नर-सुर सहित मुकति-फल पावै ॥

दोहा

करै करमकी निरजरा, भव पींजरा विनाश।
अजर अमर पद को लहैं, 'द्यानत' सुखकी राश ॥

ओ ह्री उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, सयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य दश-लक्षण-धर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय-पूजा

चहुंगति-फनि-विष-हरन-मणि दुख-पावक-जल-धार।
शिव-सुख-सुधा-सरोवरी, सम्यक-त्रयी निहार ॥

ओ ह्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र अवतर अवतर सवौषट्।
ओ ह्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।
ओ ह्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक (सोरठा छन्द)

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजूँ ॥१॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशनाय जलं निर्व०।

चंदन-केसर गारि, परिमल-महा सुरंग-मय।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजूं ॥२॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्व०।

तंदुल अमल चितार, वासमती-सुखदासके।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजूं ॥३॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान निर्व०।

महकैं फूल अपार, अलि गुंजै ज्यों थुति करैं।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजूं ॥४॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व०।

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगंधयुत।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजूं ॥५॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०।

दीप रतनमय सार, जोत प्रकाशै जगत में।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजूं ॥६॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व०।

धूप सुवास विथार, चंदन अगर कपूरकी।
जनम-रोग निरवार सम्यक् रत्न-त्रय भजूं ॥७॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०।

फल शोभा अधिकार, लौंग छुहारे जायफल।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजूं ॥८॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०।

आठ दरब निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजूं ॥९॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व०।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥५॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप-ज्योति तमहार, घट पट परकाशै महा ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥६॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥७॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥८॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥९॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप निहचै लखै, तत्त्व-प्रीति व्योहार ।
रहित दोष पच्चीस है, सहित अष्ट गुन सार ॥१॥

सम्यक् दरशन-रतन गहीजै, जिन-वचमें सन्देह न कीजै ।
इह भवविभव-चाह दुखदानी, पर-भव भोग चहै मत प्रानी ॥
प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरम गुरु प्रभु परखिये ।

पर-दोष ढकिये, धरम डिगते को सुथिर कर, हरखिये ॥
चहुं संघको वात्सल्य कीजै, धरमकी परभावना।
गुन आठसों गुन आठ लहिकैं, इहां फेर न आवना॥
ओं ह्रीं अष्टांगसहित पंचविंशति दोषरहित सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं।

सम्यग्ज्ञान पूजा

दोहा

पंच भेद जाके प्रकट, ज्ञेय-प्रकाशन-भान।
मोह-तपन-हर चंद्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।
ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा

नीर सुगंध अपार तृषा हरै मल छय करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥१॥
ओं ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय जल निर्वपामीति स्वाहा।

जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ-भेद पूजौं सदा ॥२॥
ओं ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय चदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अछत अनूप निहार, दारिद नासै सुख भरै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥३॥
ओं ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥४॥
ओं ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ॥५॥
ओं ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दीप-जोति तम-हार, घट-पट परकाशै महा ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ॥६॥
ओं ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ॥७॥
ओं ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीफल आदि विथार निहचै सुर-शिव फल करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ॥८॥
ओं ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ॥९॥
ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप जानै नियत, ग्रन्थ पठन व्योहार ।
संशय विभ्रम मोह बिन, अष्ट अंग गुनकार ॥

सम्यक् ज्ञान-रतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया ।
अच्छर शुद्ध अर्थ पहिचानो, अच्छर अरथ उभय संग जानो ॥
जानो सुकाल-पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।
तप रीति गहि बहु मौन देकै, विनय गुण चित लाइये ॥

ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान-दर्पण देखना।
इस ज्ञान ही सों भरत सीझा, और सब पटपेखना॥
ओ ह्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्-चारित्र पूजा

दोहा

विषय-रोग औषध महा, दव-कषाय-जल-धार।
तीर्थंकर जाको धरैं सम्यक्चारित सार॥

ओ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र! अत्र अवतर अवतर सवौषट्
ओ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।
ओ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै।
सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा॥१॥
ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय जल निर्वपामीति स्वाहा।

जल केशर घनसार, ताप हरै शीतल करै।
सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजो सदा॥२॥
ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै।
सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजौ सदा॥३॥
ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय अक्षतान निर्व०।

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा॥४॥

ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय पुष्प निर्व० ।

नैवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।

सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥५॥

ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप-जोति तम-हार, घट पट परकाशै महा ।

सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥६॥

ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जडता हरै ।

सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥७॥

ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर शिव फल करै ।

सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥८॥

ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय फल निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।

सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥९॥

ओ ह्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप थिर नियत नय, तप सजम व्यौहार ।

स्व-पर-दया दोनो लिये, तेरहविध दुखहार ॥

चौपाई मिश्रित गीताछन्द

सम्यकचारित रतन सँभालौ, पाँच पाप तजिके व्रत पालौ ।

पंचसमिति त्रय गुपति गहीजे, नरभव सफलकरहु तनछीजै ॥

छीजे सदा तनको जतन यह, एक संजम पालिये ।

बहु रुल्यो नरक-निगोद माहीं, विष-कषायनि टालिये ॥
शुभ करम जोग सुघाट आयो, पार हो दिन जात है।
'द्यानत' धरमकी नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है ॥२॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय महार्घ्यं निर्व० स्वाहा।

समुच्चय-जयमाला

दोहा

सम्यकदरशन-ज्ञान-व्रत, इन बिन मुकति न होय।
अन्ध पगु अरु आलसी, जुदे जलै दव-लोय ॥१॥

चौपाई १६ मात्रा

जापै ध्यान सुथिर बन आवै, ताके करम-बंध कट जावैं।
तासो शिव-तिय प्रीति बढावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥
ताको चहु गति के दुख नाहीं, सो न परै भव-सागर माहीं।
जनम-जरा-मृत दोष मिटावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥
सोई दश लच्छनको साधै, सो सोलह कारण आराधै।
सो परमातम पद उपजावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥
सोई शक्र-चक्रिपद लेई, तीन लोकके सुख विलसेई।
सो रागादिक भाव बहावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥
सोई लोकालोक निहारै, परमानंद दशा विसतारै।
आप तिरै औरन तिरवावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥

दोहा—एक स्वरूप-प्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय।
तीन भेद व्योहार सब, 'द्यानत' को सुखदाय ॥७॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्राय महार्घ्यंनिर्व०।

———

स्वयंभू स्तोत्र भाषा

चौपाई

राजविषै जुगलनि सुख कियो, राजत्याग भवि शिवपद लियो।
स्वयंबोध स्वयभू भगवान, वदौं आदिनाथ गुणखान ॥१॥
इन्द्र क्षीरसागर जल लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय।
मदनविनाशक सुखकरतार, वदौंअजित अजित-पदकार ॥२॥
शुक्लध्यानकरि करमविनाशि, घाति अघाति सकलदुखराशि।
लह्यो मुकतिपद सुख अविकार, वदौं संभव भव दुख टार ॥३॥
माता पश्चिम रयनमझार, सुपने देखे सोलह सार।
भूप पूछि फल सुनि हरषाय, वदौं अभिनदन मनलाय ॥४॥
सब कुवाद वादो सरदार, जीते स्यादवाद धुनि धार।
जैनधरम परकाशक स्वाम, सुमतिदेवपद करहुँ प्रणाम ॥५॥
गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर शोभा अधिकाय।
बरसे रतन पंचदश मास, नमो पदमप्रभु सुख की राश ॥६॥
इन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र त्रिकाल, बानी सुनि सुनि होहिं खुशाल।
द्वादश सभा ज्ञानदातार, नमो सुपारसनाथ निहार ॥७॥
सुगुन छियालीस हैं तुम माहिं, दोष अठारह कोऊ नाहिं।
मोहमहातम नाशक दीप, नमो चद्रप्रभु राख समीप ॥८॥
द्वादश विध तप करम विनाश, तेरह विध चारित्र प्रकाश।
निज अनिच्छ भवि इच्छकदान, वंदौं पुष्पदंत मन आन ॥९॥
भविसुखदाय सुरगतै आय, दशविधि धरम कह्यो जिनराय।
आप समान सबनि सुख देह, वदौं शीतल धर्मसनेह ॥१०॥

सब जीवन की वदी छोर, रागद्वेष द्वै वधन तोर।
राजुल तज शिवतियसो मिले,नेमिनाथ वदौं सुखनिले ।।२२।।
दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फनधार।
गयो कमठ शठ मुखकरश्याम,नमो मेरुसम पारसस्वाम ।२३।
भवसागरतैं जीव अपार, धरम पोत मे धरे निहार।
डूबत काढ़े दया विचार, वर्द्धमान वदौं बहुबार ।।२४।।

दोहा

चौवीसो पदकमलजुग, वदौं मनवचकाय ।
'द्यानत' पढ़ै सुने सदा, सो प्रभु क्यो न सहाय ।।

समुच्चय-महार्घ

प्रभूजी अष्ट द्रव्यजु ल्यायो भावसो,
प्रभूजी था का हरष हरष गुण गाऊ महाराज ।
यो मन हरख्यो प्रभू थांकी पूजा जी रे कारणे ।।
प्रभू जो थाँकी तो पूजा भवि जन नित करै,
जाका अशुभ कर्म कट जाय महाराज ।
यो मन हरख्यो प्रभू थाकी पूजा जी रे कारणे ।।१।।
प्रभू जी थांकी तो पूजा भवि जीव जो करे,
सो तो सुरग मुकतिपद पावे महाराज ।
यो मन हरख्यो प्रभू थांकी पूजा जी रे कारणे ।।२।।
प्रभूजी इन्द्र धरणेंद्रजी सब मिलि गाय,
प्रभू का गुणां को पार न पाइया ।

जिन चैत्यालय महाराज,
सब चैत्यालय जिनराज ।
यो मन हरख्यो प्रभू थांकी पूजा जी रे कारणे ॥९॥
प्रभूजी अष्ट दरव जु ल्याओ बनाय,
पूजा रचाऊं श्रीभगवान की महाराज ॥
यो मन हरख्यो प्रभू थाकी पूजा जी रे कारणे ॥१०॥

ओ ह्री भावपूजा भाववदना त्रिकालपूजा त्रिकालवदना करे करावै भावना भावै श्रीअरहतजी सिद्धजी आचार्यजी उपाध्यायजी सर्वसाधुजी पचपरमेष्ठिभ्यो नम । प्रथमानुयोग-करणानुयोग-चरणानुयोग-द्रव्यानुयोगेभ्यो नम. । दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणे-भ्यो नम. । उत्तम क्षमादि दशलाक्षणिक धर्मेभ्यो नम । सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्— चारित्रेभ्यो नम । जलके विषै थलके विषै आकाशके विषै गुफाके विषै पहाडके विषै नगर नगरी विषै ऊर्ध्वलोक मध्यलोक पाताल लोक विषै विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालय जिनविम्वेभ्यो नमः । विदेहक्षेत्रे विद्यमान वीस तीर्थंकरेभ्यो नम । पाच भरत पाच ऐरावत दशक्षेत्र सम्वन्धी तीस चौवीसी के सातसौ वीस जिनराजेभ्यो नम । नदीश्वर द्वीपसम्वन्धि बावन जिन चैत्यालयेभ्यो नम । पचमेरु सम्वन्धि अस्सी जिन-चैत्यालयेभ्यो नम । सम्मेदशिखर कैलाश चपापुर पावापुर गिरनार सोनागिर मथुरा आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नम । जैनवद्री मूलवद्री देवगढ चन्देरी पपौरा हस्तिनापुर अयोध्या राजगृही तारगा चमत्कार जी श्रीमहावीरजी पद्मपुरी तिजारा आदि अतिशयक्षेत्रेभ्यो नम । श्री चारण ऋद्धिधारी सप्त परमर्षिभ्यो नम. ।

ओ ह्रीं श्रीमंतं भगवन्त कृपावन्त श्रीवृषभादि महावीर पर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकर-परमदेव आद्यानां आद्ये जम्बू द्वीपे भरतक्षेत्रे

आर्यखण्डे ... ... नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे .... मासे शुभे ... पक्षे शुभ ... तिथौ ... ... वासरे मुनि आर्यिकाणां श्रावकश्राविकाणां क्षुल्लकक्षुल्लिकानां सकल कर्म क्षयार्थं (जलधारा) अनर्घपदप्राप्तये महार्घं सम्पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्। (यहां पर कायोत्सर्ग पूर्वक नौ बार णमोकारमंत्र जपना चाहिये।)

नोट–शान्ति पाठ तथा विसर्जन आदि के लिए देखें पृष्ठ–९५-१०० तक

क्षमावाणी पूजा

छप्पयछंद––अंग क्षमा जिन धर्म तनो दृढ़ मूल बखानो।
सम्यक रतन संभाल हृदय में निश्चय जानो॥
तज मिथ्या विष मूल और चित निर्मल ठानो।
जिनधर्मी सों प्रीति करो सब पातक भानो॥
रत्नत्रय गह भविक जन, जिन आज्ञा सम चालिए।
निश्चय कर आराधना, कर्म राशि को जालिए॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र रूप रत्नत्रयाय नमः अत्रावतरावतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अथाष्टकम्

क्षमा गहो उर जीवडा, जिनवर वचन गहाय॥टेक॥
नीर सुगन्ध सुहावनो, पद्म द्रह को लाय।
जन्म रोग निरवारिये, सम्यक् रत्न लहाय॥क्षमा०॥१॥

प्रत्येक अग के पीछे नम बोलना है ।

ओ ह्री १ निशकितागाय नम॰ २ निकाक्षितागाय नम. ३ निर्विचिकित्सागाय नम. ४ निर्मूढतायै नम ५ उपगूहनागाय नम. ६ स्थितिकरणागाय नम ७ वात्सल्यागाय नम ८ प्रभावनागाय नमः ९ ओ ह्री व्यजन व्यजिताय १० अर्थ समग्राय ११ तदुभय समग्राय १२ कालाध्ययनाय १३ उपध्यानोपन्हिताय १४ विनयलब्धिसहिताय १५ गुरुवादापन्हवाय १६ वहु मानोन्मादाय १७ ओ ह्री अहिंसा व्रताय १८ सत्य व्रताय १९ अचौर्यव्रताय २० ब्रह्मचर्यव्रताय २१ अपरिग्रहव्रताय २२ मनोगुप्तये २३ वचन गुप्तये २४ कायगुप्तये २५ ईर्यासमितये २६ भाषा समितये २७ एषणा समितये २८ आदान निक्षेपण समितये २९ प्रतिष्ठापना समितये नम जल ।

केसर चन्दन लीजिये, संग कपूर घसाय ।
अलि पकति आवत घनी, बास सुगन्ध सुहाय ॥क्षमा० २॥

ओ ह्री अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टाग सम्यग्ज्ञान, त्रयोदश विध सम्यक्चारित्रेभ्यो नम चन्दन निर्वपामि०॥२॥

शालि अखडित लीजिए, कचन थाल भराय ।
जिनपद पूजो भावसो, अक्षयपद को पाय ॥क्षमा० ॥३॥

ओ ह्री अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टाग सम्यग्ज्ञान, त्रयोदशविध सम्यक्चारित्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामि० ॥३॥

पारिजात अरु केतकी, पहुप सुगन्ध गुलाब ।
श्रीजिन चरण सरोजकू, पूज हरष चित चाव ॥क्षमा० ४॥

ओ ह्री अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टाग सम्यग्ज्ञान, त्रयोदश विध सम्यक्चारित्रेभ्यो नम पुष्प निर्वपामि० ॥४॥

शक्कर घृत सुरभी तनों, व्यंजन षट्रस स्वाद ।
जिनके निकट चढ़ाय कर, हिरदे धरि आह्लाद ॥क्षमा० ५॥

ओ ह्री अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टाग सम्यग्ज्ञान त्रयोदशविध सम्यक्चारित्रेभ्यो नम. नैवेद्य निर्वपामि० ॥५॥

हाटकमय दीपक रचो, वाति कपूर सुधार ।
शोधक घृतकर पूजिये, मोह तिमिर निरवार ॥क्षमा० ॥६

ओ ह्री अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टांग सम्यग्ज्ञान, त्रयोदशविध सम्यक्चारित्रेभ्यो नम दीप निर्वपामि० ॥६॥

कृष्णागर करपूर हो, अथवा दश विध जान ।
जिन चरणां ढिग खेइये, अष्ट करम की हान ॥क्षमा०७॥

ओ ह्री अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टाग सम्यग्ज्ञान, त्रयोदशविध सम्यक् चारित्रेभ्यो नम धूप निर्वपामि० ॥७॥

केला अम्ब अनार हो, नारिकेल ले दाख ।
अग्र धरो जिन पद तने, मोक्ष होय जिन भाख ॥क्षमा०८॥

ओ ह्री अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टाग सम्यग्ज्ञान, त्रयोदशविध सम्यक्चारित्रेभ्यो नम फल निर्वपामि० ॥८॥

जल फल आदि मिलाइके, अरघ करो हरषाय ।
दु ख जलांजलि दीजिए, श्रीजिन होय सहाय ॥क्षमा० ९॥

ओ ह्रीं अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टाग सम्यग्ज्ञान त्रयोदशविध चारित्रेभ्यो नम अर्घ्य निर्वपामि० ॥९॥

जयमाला

दोहा—उनतिस अग की आरती, सुनो भविक चित लाय।
मन वच तन सरधा करो, उत्तम नर भव पाय ॥१॥

चौपाई ।

जैनधर्म मे शंक न आनै, सो नि.शकित गुण चित ठानै ।
जप तप कर फल वांछे नाहीं, नि.कांक्षित गुण हो जिस माहीं।२

परको देखि गिलान न आने, सो तीजा सम्यक् गुण ठाने ।
आन देवको रंच न माने सो निर्मूढता गुण पहिचाने ॥३॥
परको औगुण देख जु ढाके, सो उपगूहन श्रीजिन भाखे ।
जैन धर्म तें डिगता देखे, थापे बहुरि थिति कर लेखे ॥४॥
जिनधर्मी सो प्रीति निवहिये, गऊ बच्छावत् वच्छल कहिये ।
ज्यों त्यों जैन उद्योत बढ़ावे, सो प्रभावना अंग कहावे ॥५॥
अष्ट अंग यह पाले जोई, सम्यग्दृष्टि कहिये सोई ।
अब गुण आठ ज्ञान के कहिये, भाखे श्रीजिन मन में गहिये ॥६
व्यंजन अक्षर सहित पढ़ीजे, व्यंजन व्यंजित अंग कहीजे ।
अर्थ सहित शुध शब्द उचारे, दूजा अर्थ समग्रह धारे ॥७॥
तदुभय तीजा अंग लखीजे, अक्षर अर्थ सहित जु पढ़ीजे ।
चौथा कालाध्ययन विचारें काल समय लखि सुमरण धारें ।८
पंचम अंग उपधान बतावें, पाठ सहित तब बहु फल पावें ।
षष्टम विनय सुलब्धि सुनीजे, वानी विनय युक्त पढ़ लीजे ।६
जापे पढ़े न लोपे जाई, सप्तमअंग गुरुवाद कहाई ।
गुरुकीबहुतविनयजु करीजे, सो आटम अंग धर सुख लीजे ।१०
यह आठों अंग ज्ञान बढ़ावें, ज्ञाता मन वच तन कर ध्यावें ।
अब आगे चारित्र सुनीजे, तेरह विध धर शिव सुख लीजे ११
छहों कायकी रक्षा कर है, सोई अहिंसाव्रत चित धर है ।
हितमितसत्य वचन मुख कहिये, सो सतवादी केवल लहिये १२
मन वच काय न चोरी करिये, सोई अचौर्यव्रत चित धरिये ।
मन्मथ भय मन रंच न आने, सो मुनि ब्रह्मचर्य व्रत ठाने । १३

परिग्रह देख न मूर्छित होई, पच महाव्रत धारक सोई।
ये पाँचों महाव्रत सु खरे हैं, सब तीर्थंकर इनको करे हैं।१४
मनमें विकलप रच न होई, मनोगुप्ति मुनि कहिये सोई।
वचन अलीक रच नहिं भाखें,वचनगुप्तिसो मुनिवर राखें।१५
कायोत्सर्ग परीषह सहि है, ता मुनि कायगुप्ति जिन कहि है।
पंच समिति अब सुनिए भाई,अर्थ सहित भाषे जिनराई।१६
हाथ चार जब भूमि निहारे, तब मुनि ईर्य्या मग पद धारे।
मिष्ट वचन मुख बोलें सोई,भाषा समिति तास मुनि होई।१७
भोजन छयालिस दूषण टारे, सो मुनि एषण शुद्धि विचारे।
देखके पोथी ले अरु धरि हैं,सो आदान निक्षेपन वरि है।१८
मल मूत्र एकान्त जु डारें, परतिष्ठापन समिति सभारे।
यह सब अग उनतीस कहे हैं, श्रीजिन भाखे गणेश गहे हैं।१९
आठ आठ तेरह विध जानो, दर्शन ज्ञान चारित्र सुठानो।
तातें शिवपुर पहुँचो जाई, रत्नत्रय की यह विधि भाई।२०
रत्नत्रय पूरण जब होई, क्षमा क्षमा करियो सब कोई।
चैत माघ भादो त्रय वारा, क्षमा क्षमा हम उरमे धारा।२१
दोहा—यह क्षमावणी आरती, पढ़ें सुने जो कोय।
कहे 'मल्ल' सरधा करो, मुक्ति श्रीफल होय ।।२२
ओं ह्री अष्टाग सम्यग्दर्शन, अष्टाग सम्यग्ज्ञान, त्रयोदशविध सम्यकचारित्रेभ्यो महार्घ्यं निर्वपा० ।।१०।।
सोरठा—दोष न गहिये कोय, गुण गण गहिये भावसो।
भूल चूक जो होय, अर्थ विचारि जु शोधिये ।।
इत्याशीर्वादः।

———

श्री निर्वाण क्षेत्र पूजा

दोहा — वन्दौं श्री भगवान् को, भाव भगति सिर नाय।
पूजा श्री निर्वाण की, सिद्धक्षेत्र सुखदाय ॥१॥
द्वीप अढ़ाई के विषै, सिद्धक्षेत्र जो जान।
तिनिको मैं वन्दन करों, अर भव होइ नशाय ॥२॥

अथ स्थापना (अडिल्ल छन्द)

परम पूज्य उत्कृष्ट मोक्ष मंगल मही,
आदि अनादि संसार भाँति मुनिवर लही।
तिनिके चरन धर क्षेत्र जजौं शिवदायही।

शीतल उज्ज्वल निर्मल नीर, पूजौं सिद्धक्षेत्र गम्भीर।
जहाँ निर्वाण पूजौं मन वच तन धरि ध्यान ॥
अब मैं शरण गही तुम आन, भवदधिपार उतारन जान ॥जलं०
ॐ ह्रीं भारत वर्षस्य आर्य खंड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥
चंदन घिसौं कपूर मिलाय, भव आताप दुर्गति मिट जाय।
जहाँ निर्वाण पूजौं मन वच तन धरि ध्यान ॥

अब मैं शरण गही तुम आन, भवदधि पार उतारन जान ।ल०

ओं ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खंड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्रेभ्यो भवाताप-विनाशनाय चंदन निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

अमल अखंडित अक्षत धोय, पूजों सिद्ध क्षेत्र सुख होय।
लहों निर्वाण पूजों मन वच तन धरि ध्यान॥
अब मैं शरण गही तुम आन, भवदधि पार उतारन जान॥ल०

ओं ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खंड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपद-प्राप्ताय अक्षत निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

पुष्प सुगंध मधुप झंकार, पूजो सिद्ध क्षेत्र मझार।
लहों निर्वाण पूजो मन वच तन धरि ध्यान॥
अब मैं शरण गही तुम आन, भवदधि पार उतारन जान॥ल०

ओं ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खंड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्रेभ्य काम-बाण विध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

वर नैवेद्य मिष्ट अधिकाय, पूजो सिद्ध क्षेत्र समभाय।
लहो निर्वाण पूजों मन वच तन धरि ध्यान॥
अब मैं शरण गही तुम आन, भवदधि पार उतारन जान ॥ल०

ओं ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खंड सबधी सिद्ध क्षेत्रेभ्य. क्षुधा वेदनीय रोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

दीप रत्नमय तेज सुहाय। पूजों सिद्ध क्षेत्र समझाय।
लहों निर्वाण पूजों मन वच तन धरि ध्यान॥
अब मैं शरण गही तुम आन। भवदधि पार उतारन जान ।ल०

ओं ह्रीं भरतक्षेत्र के आर्य खंड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्रेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

तिन के चरण जजो मैं मन वच काय कै।

भवदधि उतरो पार शरण तुम आय कै॥

ओ ह्रीं कैलाश पर्वत सेती श्री ऋषभदेव तीर्थंकर दश हजार मुनि सहित मुक्ति पधारे और वहां तें और मुक्ति पधारे तिनि को अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

चंपापुर तें मुक्ति भये जिनराजजी।

वासपूज्य महाराज करम क्षयकारजी॥

तिनि के चरण जजो मैं मन वच कायकै।

भवदधि उतरो पार शरण तुम आय कै।

ओं ह्रीं चंपापुर सेती श्री वासपूज्य तीर्थंकर हजार मुनि सहित मुक्ति पधारे और वहां ते और मुनि मुक्ति पधारे तिनि [illegible] अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

श्री गिरनार शिखर जग मे विख्यात जी।

सिद्ध वधू के नाथ भये नेमिनाथजी॥

तिनि के चरण जजो मैं मन वच काय कै॥

भवदधि उतरो पार शरण तुम आय कै॥

वरदत्तादि वरग मुनीन्द्र सुनामजी ।

सायरदत्त महान महा गुणधामजी ॥

तारवर नगरतें मुक्ति भये सुखदायजी ।

तीन कोड़ि अरु लाख पचास सुगाय जी ॥

ओ ह्री तारवरनगर मेती वरदत्तादि साढे तीन कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनिको अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

श्री गिरिनार शिखर जग मे विख्यात है ।

कोटि बहत्तर अधिके अरु सौ सात हैं ॥

संवु प्रद्युम्न अनिरुद्ध मुक्ति को पाय कै ।

तिनके चरण जजो मै मन वच काय कै ॥

ओ ह्री श्री गिरिनार शिखर सेती सवुकुमार प्रद्युम्नकुमार अनिरुद्धकुमारादि वहत्तर कोडि सात सौ मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

रामचंद्र के सुत दोय जिन दीक्षा धरी ।

लाडनरिंद आदि मुनि सब कर्मन हरी ॥

पावागिरि के शिखर ध्यान धरिके सही

पांच कोडि मुनि सहित परम पदवी लही ॥

ओ ह्री पावागिरि शिखर सेती लाडनरिंद आदि पाच कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

पांडव तीन बड़े राजा तुम जानियो ।

आठ कोडि मुनि चरम शरीरी मानियो ॥

श्री शत्रुजय शिखर मुक्ति वर पाय के ।

तिनके चरग जजों मै मन वच काय के ॥

इन्द्रजीत अरु कुंभकरण व्रत धारि के।

मुक्ति गये वसु कर्म जीति सुख कारिके ॥

ओ ह्री दक्षिण दिशा मे चूलगिरि उतग शिखर सेती इन्द्रजीत कुंभकरण मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५॥

अचला नदी के तीर व पावाशिखरजी।

समतभद्र मुनि चार वड़ी है ऋद्धिजी ॥

तहाँ तें परम धाम के सुख को पाय के।

तिनके चरण जजो मैं मन वच काय के ॥

ओ ह्री अचला नदी के तोर पावागिरि शिखर सेती समत-भद्रादि चार मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घ महार्घं निर्वपामोति स्वाहा ॥१६॥

फल होड़ी बड़गांव अनूप जहाँ वसे।

पच्छिम दिसि मे द्रोण महा पर्वत लसे ॥

गुरुदत्तादि मुनीश्वर शिव को पाय के।

तिनि के चरण जजो मैं मन वच काय के ॥

ओ ह्री फलहोडी वडगाव को पच्छिम दिशा मे द्रोणगिरि पर्वत सेती गुरुदत्तादि मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥१७॥

व्याल महाव्याल मुनीश्वर दोय हैं।

नागकुमार मिलाय तीन ऋषि होय हैं ॥

श्री अष्टापद शिखर तें मुक्ति मे जाय के।

तिनके चरण जजो मैं मन वच काय के ॥

अचलापुर की दिशि ईशान महा बसै ।
तहाँ मेढ़गिरि शिखर महा पर्वत लसै ॥
तीन कोडि अरु लाख पचास महामुनी ।
मुक्ति गये धरि ध्यान करम अरि तिन हनी ॥

वंशस्थल वन पश्चिम कुंथ पहार है ।
कुलभूषण देशभूषण मुनि सुखकार है ॥
तहाँ तैं शुक्ल ध्यान धरि शिव मे जाय के ।
तिनि के चरण नमों मैं मन वच काय के ॥

जसरथ राजा के सुत पंच शतक कहे ।
देश कलिंग मझार महा मुनि ते भये ॥
शुक्ल ध्यान तैं मुकति रमनि सुख पाय के ।
तिनिके चरण नमों मैं मन वच काय के ॥

ओं ह्रीं कलिंग देश सेती जसरथ राजा का पांच सौ पुत्र मुनि होय मुक्ति पधारे तिनि का अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१॥

कोटि शिला एक दक्षिण दिशि में है सही ।
निश्चै सिद्ध क्षेत्र है श्री जिनवर कही ॥

कोटि मुनीश्वर मुक्ति गये सुख पाय के।

तिन के चरण जजों मै मन वच काय के॥

ओ ह्रीं दक्षिण दिशि मे कोटि शिला सेती कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥२२॥

समवशरण श्री पार्श्व जिनेश्वर देव को।

करें सुरासुर सेव परम पद लेव को॥

रेसिंदीगिर उत्तम थान सुपाय के।

वरदत्तादि पाँच मुनि मुक्ति सुजाय के॥

ओ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ स्वामी के समवशरण पामि रेसिंदीगिर शिखर सेती वरदत्तादि पाच मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घं महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥२३॥

पोदनपुर को राज त्याग मुनि जे भये।

बाहुबलि स्वामी तहाँ तें सिद्ध भये॥

तिन के चरण जजों मै मन वच काय के।

भवदधि उतरों पार शरण तुम आय के॥

ओ ह्रीं पोदनपुर का राजत्याग बाहुबलि जी मुनि हो मुक्ति पधारे तिनि को अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥२४॥

श्री तीर्थंकर चतुर वीस भगवान हैं।

गर्भ जन्म तप ज्ञान भये निरवान हैं॥

तिनि के चरण जजों मैं मन वच काय के।

भवदधि उतरो पार शरण तुम आय के॥

ओ ह्रीं पंचकल्याणकधारी चौबीस तीर्थंकर भगवान तिनको अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥२५॥

पाटल गुलाव जुही चमेली मालती वेला घने।
जिस सुरभितें कलहस नाचत फूल गुथि माला वने ॥
जहा सुभग ऋषि मण्डल विराजै पूजि मन वच तन सदा।
तिस मनोवांछित मिलत सव सुख स्वप्न मे दुख नहिं कदा ॥

ओ ह्री सर्वोपद्रव-विनाशन समर्थाय यन्त्र-सम्वन्धि-परम-देवाय पुष्प ॥४॥

अर्द्ध चन्द्र समान फेनी मोदकादिक ले घने।
घृत पक्व मिश्रित रस सु पूरे लख क्षुधा डायनि हने ॥
जहाँ सुभग ऋषिमण्डल विराजै पूजि मन वच तन सदा।
तिस मनोवाछित मिलत सव सुख स्वप्न मे दुख नहिं कदा ॥

ओ ह्रीं सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय यन्त्र-सम्वन्धि-परम देवाय नैवेद्यं ॥५॥

मणि दीप ज्योति जगाय सुन्दर वा कपूर अनूपक।
हाटक सुथाली माहि धरिके वारि जिनपद भूपक ॥
जहाँ सुभग ऋषिमंडल विराजै पूजि मन वच तन सदा।
तिस मनोवांछित मिलत सव सुख स्वप्न मे दुख नहिं कदा ॥

ओ ह्री सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय यन्त्र-सम्वन्धि-परमदेवाय दीप ॥६॥

चन्दन सु कृष्णागरु कपूर मँगाय अग्नि जराइये।
सो धूप-धूम्र अकाश लागी मनहुँ कर्म उडाइये ॥
जहां सुभग ऋषिमण्डल विराजै पूजि मन वच तन सदा।
तिस मनोवाछित मिलत सव सुख स्वप्न मे दुख नहिं कदा।

ओ ह्री सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय यन्त्र-सम्वन्धि-परम देवाय धूप ॥७॥

जल शुभ गधादिक वर द्रव्य मँगायके।
पूजहुँ दोऊ करजोर शीश निज नायके ।।

ओ ह्री सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय अप्टवर्ग कवर्गादि दे शा षासाहा हल्व्यूँ परमयन्त्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।।

कामिनी मोहिनी छन्द ।

परम उत्कृष्ट परमेष्ठी पद पाच को।
नमत शत इन्द्र खगवृन्द पद साच को ।।
तिमिर अघनाश करण को तुम अर्क हो।
अर्घ लेय पूज्य पद देत बुद्धि तर्क हो।

ओ ह्री सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय पच-परमेष्ठि-परम देवाय अर्घ ।।

सुन्दरी छन्द

सुभग सम्यग् दर्शन ज्ञान जू। कह चारित्र सुधारक मान जू।
अर्घ सुन्दर द्रव्य सु आठ ले। चरण पूजहु साज सु ठाठले ।।

ओ ह्री सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र-रूपरत्नत्रयाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवनवासी देव व्यन्तर ज्योतिषी कल्पेन्द्र जू।
जिनगृह जिनेश्वर देव राजै रत्न के प्रतिविम्ब जू ।।
तोरण ध्वजा घटा विराजै चवर ढरत नवीन जू।
वर अर्घ ले तिन चरण पूजो हर्ष हिय अति लीन जू ।।

ओ ह्री सर्वोपद्रव विनाशन समर्थेभ्यो भवनेन्द्र व्यतरेन्द्र ज्योतिषीन्द्र कल्पेन्द्र चतु प्रकार देवगृहेपु श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय अष्टादशदोष-रहिताय छियालीस-महागुणयुक्ताय अरहन्त परमेष्ठिने अर्घ ।

सोरठा

दश दिश दस दिग्पाल, दिशा नाम सो नामवर ।
तिनगृह श्रीजिन आल, पूजो मै वन्दौं सदा ॥

ओ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो दशदिग्पालेभ्यो जिनभक्तियुक्तेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

ऋषि मडल शुभयन्त्र के, देवी देव चितारि ।
अर्घ सहित पूजहुँ चरन, दुख दारिद्र निवारि ॥

ओ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो ऋषिमडल-सम्बन्धिदेवीदेवेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(इति अर्घावलि)

जयमाला

दोहा

चौबीसो जिन चरन नमि, गणधर नाऊं भाल ।
शारद पद पकज नमू, गाऊ शुभ जयमाल ॥

जय आदीश्वर जिन आदिदेव, शत इन्द्र जजैं मैं करहुँ सेव । जय अजित जिनेश्वर जे अजीत, जे जीत भये भव तें अतीत ॥ जय सम्भव जिन भवकूप माँहि, डूबत राखहु तुम शर्ण आहि । जय अभिनन्दन आनन्द देत, ज्यो कमलो पर रवि करत हेत ॥ जय सुमति सुमति दाता

जिनन्द- जै कुमति तिमिर नाशन दिनन्द । जय पद्मालकृत पद्मदेव, दिन रयन करहुँ तव चरन सेव ।। जय श्री सुपार्श्व भवपाश नाश, भवि जीवन कू दियो मुक्तिवास । जय चन्द जिनेश दया निधान, गुण सागर नागर सुख प्रमान ।। जय पुष्पदन्त जिनवर जगीश, शत इन्द्र नमत नित आतमशीश । जय शीतल वच शीतल जिनन्द, भवताप नशावन जगत चन्द ।। जय जय श्रेयास जिन अति उदार, भवि कठ मांहि मुक्ता सुहार । जय वासुपूज्य वासव खगेश, तुव स्तुति करि नमि हैं हमेश ।। जय विमल जिनेश्वर विमलदेव, मल रहित विराजत करहु सेव । जय जिन अनन्त के गुण अनन्त, कथनी कथ गणधर नहे न अत ।। जय धर्म धुरन्धर धर्मधीर, जय धर्म चक्र शुचि न्याय वीर । जय शान्ति जिनेश्वर शान्तभाव, भव वन भटकत शुभ मग लखाव ।। जय कुंथु कुंथुवा जीव पाल, सेवक पर रक्षा करि कृपाल । जय अरहनाथ अरि कर्म शैल, तपवज्र खड लहि मुक्ति गैल ।। जय मल्लि जिनेश्वर कर्म आठ, मल डारे पायो मुक्ति ठाठ । जय मुनि सुव्रत सुव्रत धरन्त, तुम सुव्रत व्रत पालन महन्त ।। जय नम्मि नमत सुर वृन्द पाय, पद पकज निरखत शीश नाय । जय नेमि जिनेन्द्र दयानिधान, फैलायो जग मे तत्वज्ञान ।। जय पारस जिन आलस निवारि, उपसर्ग रुद्र कृत जीत धारि । जय महावीर महा धीरधार, भवकूप थकी

लेय। वर अर्घ अनूपम करत देव, जिनराज चरण आगे चढेव॥ फिर मुखतें स्तुति करते उचार, हो करुणानिधि संसार तार। मै दुख सहे ससार ईश, तुमते छानी नाही जगीश॥ जे इह विध मौखिक स्तुति उचार, तिन नशत शीघ्र संसार भार। इह विधि जो जन पूजन कराय, ऋषि मडल यन्त्र सु चित्त लाय॥ जे ऋषि-मडल पूजन करन्त, ते रोग शोक संकट हरन्त। जे राजा रण कुल वृद्धि जान, जल दुर्ग सुजग केहरि बखान॥ जे विपत घोर अरु कहि ससान, भय दूर करै यह सकल जान। जे राजभ्रष्ट ते राज पाय, पद भ्रष्ट थकी पद शुद्ध धाय॥ धन अर्थी धन पावै महान, या मैं सशय कछु नाहि जान। भार्या अर्थी भार्या लहन्त, सुत अर्थी सुत पावै तुरन्त॥ जे रूपा सोना ताम्र पत्र लिख तापर यन्त्र महा पवित्र। ता पूजै भागे सकल रोग, जे वात पित्त ज्वर नाशि शोग॥ तिन गृह ते भूत पिशाच जान, ते भाग जाहि सशय न आन। जे ऋषि मडल पूजा करन्त, ते सुख पावत कहि लहै न अन्त॥ जब ऐसो मैं मन माहि जान, तब भाव सहित पूजा सुठान। वसुविधि के सुन्दर द्रव्य ल्याय, जिनराज चरण आगे चढाय॥ फिर करत आरती शुद्ध भाव, जिनराज सभी लख हर्ष आव। तुम देवन के हो देव देव, इक अरज चित्त मे धारि लेव॥ हे दीन दयाल दया कराय, जो मै दुखिया इह जग भ्रमाय। जे इस भवचन मे वास लीन, जे

काल अनादि गमाय दीन ।। मै भ्रमत चतुर्गति विपिन माहि, दुख सहे सुक्ख को लेश नाहि । ये कर्म महारिपु जोर कीन, जे मनमाने ते दु ख दीन ।। ये काहू को नहि डर धराय, इनतै भयभीत भयो अघाय । यह एक जन्म की बात जान, मै कह न सकत हू देवमान ।। जब तुम अनन्त परजाय जान, दरशायो ससृति पथ विधान । उपकारी तुम बिन और नाहि, दीखत मोको इस जगत माँहि ।। तुम सब लायक ज्ञायक जिनन्द, रत्नत्रय सम्पति द्यो अमन्द । यह अरज करूं मै श्री जिनेश, भव भव सेवा तुम पद हमेश ।। भव भव में श्रावक कुल महान्, भव भव मे प्रकटित तत्वज्ञान । भव भव मे व्रत हो अनागार, तिस पालन तै हो भवाब्धि पार ।। ये योग सदा मुझको लहान, हे दीनबन्धु करुणा-निधान । "दौलत आसेरी" मित्र दोय, तुम शरण गही हरषित सुहोय ।।

नन्द छन्द घत्ता

जो पूजै ध्यावै, भक्ति बढ़ावै, ऋषि मंडल शुभ यत्र तनी ।
या भव सुख पावै सुजस लहावै परभव स्वर्ग सुलक्ष धनी ।।

ओ ह्री सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय रोग-शोक-सर्व-सकट हराय सर्वशान्ति-पुष्टि-कराय, श्रीवृषभादि चौबीस तीर्थकर, अष्ट वर्ग, अरहतादि पचपद, दर्शन ज्ञान चारित्र, चतुर्णिकाय देव, चार प्रकार अवधिधारक श्रमण, अष्ट ऋद्धि संयुक्त ऋषि, बीस चार सूर, तीन ह्री, अर्हतबिम्ब, दशदिग्पाल यन्त्र सम्बन्धि परमदेवाय जयमाला-पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।

आशीर्वाद

ऋषि मंडल शुभ यंत्र को जो पूजे मन लाय ।
ऋद्धि सिद्धि ता घर बसै, विघन सघन मिट जाय ।।
विघन सघन मिट जाय, सदा सुख सो नर पावै ।
ऋषि मंडल शुभ यंत्र तनी, जो पूज रचावै ।।
भाव भक्ति युत होय, सदा जो प्राणी ध्यावै ।
या भव में सुख भोग, स्वर्ग की सम्पत्ति पावै ।।
या पूजा परभाव मिटे, भव भ्रमण निरन्तर ।
यातै निश्चय मानि करो, नित भाव भक्तिधर ।।

इत्याशीर्वाद । पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

सलूना पर्व पूजा

श्री अकम्पनाचार्यादि सप्त-शत-मुनि पूजा

(चाल जोगीरासा)

पूज्य अकम्पन साधु-शिरोमणि सात-शतक मुनि ज्ञानी ।
आ हस्तिनापुर के कानन मे हुए अचल दृढ़ ध्यानी ।।
दुखद सहा उपसर्ग भयानक सुन मानव घबराये ।
आत्म-साधना के साधक वे, तनिक नहीं अकुलाये ।।
योगिराज श्री विष्णु त्याग तप, वत्सलता-वश आये ।
किया दूर उपसर्ग, जगत-जन मुग्ध हुए हर्षाये ।।

तंदुल अखंडित शुद्ध आशा के नवीन सुहावने।
नत पाद पद्मोमे चढाऊँ दीनता क्षयता हने॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूँ पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दे॥

ओ ह्री श्रीअकम्पनाचार्यादि सप्तशतमुनिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्वपामीति स्वाहा।३।

ले विविध विमल विचार सुन्दर सरस सुमन मनोहरे।
नत पाद-पद्मोमे चढाऊँ काम की बाधा हरे॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूँ पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ओ ह्री श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्य· कामबाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।४।

शुभ भक्ति घृतमे विनय के पकवान पावन मै बना।
नत पाद-पद्मोमे चढ़ा मेटूं क्षुधाकी यातना॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करू पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ओ ह्री श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्य· क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।५।

उत्तम कपूर विवेक का ले आत्म-दीपक मे जला।
कर आरती गुरु की हटाऊँ मोह-तमकी यह बला॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करू पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ओं ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशत-मुनिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।६।

ले त्याग-तपकी यह सुगन्धित धूप मैं खेऊं अहो ।
गुरुचरण-करुणा से करमका कष्ट यह मुझको न हो ।।
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करु पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें ।।

ओं ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।७।

शुचि-साधना के मधुरतम प्रिय सरस फल लेकर यहां ।
नत पाद-पद्मोमे चढाऊं मुक्ति मैं पाऊं यहां ।।
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करू पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें ।।

ओं ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।८।

-यह आठ द्रव्य अनूप श्रद्धा स्नेह से पुलकित हृदय ।
नत पाद-पद्मोमे चढाऊं भव-पार मैं होऊं अभय ।।
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करू पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें ।।

ओं ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।९।

जयमाला

सोरठा

पूज्य अकम्पन आदि सात शतक साधक सुधी ।
यह उनकी जयमाल वे मुझको निज भक्ति दें ।।

पद्धडी छन्द

वे जीव दया पाले महान, वे पूर्ण अहिंसक ज्ञानवान।
उनके न रोष उनके न राग, वे करें साधना मोह त्याग ॥
अप्रिय असत्य बोलें न वैन, मन वचन कायमे भेद है न।
वे महासत्य धारक ललाम, है उनके चरणो मे प्रणाम ॥
वे लें न कभी तृणजल, अदत्त, उनके न धनादिक मे ममत्त।
वे व्रत अचौर्य दृढ़ धरे सार, है उनको सादर नमस्कार ॥
वे करे विषय की नहीं चाह, उनके न हृदय मे काम दाह।
वे शील सदा पाले महान, सब मग्न रहे निज आत्मध्यान ॥
सब छोड़ वसन भूषण निवास, माया ममता स्नेह आस।
वे धरे दिगम्बर वेष शान्त, होते न कभी विचलित न भ्रात ॥
नित रहें साधना मे सुलीन, वे सहें परीषह नित नवीन।
वे करें तत्व पर नित विचार, है उनको सादर नमस्कार ॥
पचेंद्रिय दमन करें महान, वे सतत बढावें आत्म ज्ञान।
संसार देह सब भोग त्याग, वे शिव-पथ साधें सतत जाग ॥
"कुमरेश" साधु वे हैं महान, उनसे पाये जग नित्य त्राण।
मै करूं वदना बार बार, वे करें भवार्णव मुझे पार ॥

मुनिवर गुण-धारक पर-उपकारक, भव दुखकारक सुख-कारी।
वे करम नशायें सुगुण दिलायें, मुक्ति मिलायें भय-हारी ॥

ओं ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्यो महार्घं निर्व० ।

सोरठा

श्रद्धा भक्ति समेत जो जन यह पूजा करे।
वह पाये निज ज्ञान, उसे न व्यापे जगत दुख ॥

इत्याशीर्वाद

श्री विष्णुकुमार महामुनि पूजा

(लावनी छन्द)

श्री योगी विष्णुकुमार बाल वैरागी।
पाई वह पावन ऋद्धि विक्रिया जागी ॥
सुन मुनियो पर उपसर्ग स्वय अकुलाये।
हस्तिनापुर वे वात्सल्य-भरे हिय आये ॥
कर दिया दूर सब कष्ट साधना-बल से।
पा गये शान्ति सब साधु अग्निके झुलसे ॥
जन जन ने जय-जयकार किया मन भाया।
मुनियो को दे आहार स्वय भी पाया ॥
हैं वे मेरे आदर्श सर्वदा स्वामी।
मैं उनकी पूजा करू बनू अनुगामी ॥
वे दे मुझमे यह शक्ति भक्ति प्रभु पाऊ।
मैं कर आतम कल्याण मुक्त हो जाऊ ॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुने अत्र अवतर अवतर सवोषट् इत्याह्वाननम।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ प्रतिष्ठापनम्।

अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल जोगोरासा)

श्रद्धा की वापी से निर्मल, भावभक्ति जल लाऊं।
जनम मरण मिट जायें मेरे इससे विनत चढ़ाऊं ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये।
यह वात्सल्य हृदय मे मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।१।

मलयागिरि धीरज से सुरभित समता चन्दन लाऊं।
भव-भवको आताप न हो यह इससे विनत चढ़ाऊं ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति रक्षा-हित आये।
यह वात्सल्य हृदयमे मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ओ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये ससारतापविनाशनाय चन्दन नि० ।२।

चन्द्रकिरण सम आशाओ के अक्षत सरस नवीने।
अक्षय पद मिल जाये मुझको गुरु सन्मुख धर दीने ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये अक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्व० ।३।

उर उपवनसे चाह सुमन चुन विविध मनोहर लाऊँ।
व्यथित करे नहिं काम वासना इससे विनत चढ़ाऊं ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये।
यह वात्सल्य हृदय में मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये कामबाणविनाशनाय पुष्प नि० ।४।

सोरठा

श्रद्धा भक्ति समेत जो जन यह पूजा करे।
वह पाये निज ज्ञान, उसे न व्यापे जगत दुख ॥

इत्याशीर्वाद

श्री विष्णुकुमार महामुनि पूजा

(लावनी छन्द)

श्री योगी विष्णुकुमार बाल वैरागी।
पाई वह पावन ऋद्धि विक्रिया जागी ॥
सुन मुनियो पर उपसर्ग स्वय अकुलाये।
हस्तिनापुर वे वात्सल्य-भरे हिय आये ॥
कर दिया दूर सब कष्ट साधना-बल से।
पा गये शान्ति सब साधु अग्निके झुलसे ॥
जन जन ने जय-जयकार किया मन भाया।
मुनियो को दे आहार स्वय भी पाया ॥
हैं वे मेरे आदर्श सर्वदा स्वामी।
मै उनकी पूजा करू बनू अनुगामी ॥
वे दे मुझमे यह शक्ति भक्ति प्रभु पाऊ।
मैं कर आतम कल्याण मुक्त हो जाऊ ॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुने अत्र अवतर अवतर सवोषट् इत्याह्वाननम।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ प्रतिष्ठापनम्।

अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल जोगीरासा)

श्रद्धा की वापी से निर्मल, भावभक्ति जल लाऊ ।
जनम मरण मिट जायें मेरे इससे विनत चढाऊं ।।
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदय मे मेरे अभिनव ज्योति जगाये ।।

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।१।

मलयागिरि धीरज से सुरभित समता चन्दन लाऊ ।
भव-भवकी आताप न हो यह इससे विनत चढ़ाऊ ।।
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूँ यति रक्षा-हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ।।

ओ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये ससारतापविनाशनाय चन्दन नि० ।२।

चन्द्रकिरण सम आशाओ के अक्षत सरस नवीने ।
अक्षय पद मिल जाये मुझको गुरु सन्मुख धर दीने ।।
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूँ यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमे मेरे अभिनव ज्योति जगाये ।।

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये अक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्व० ।३।

उर उपवनसे चाह सुमन चुन विविध मनोहर लाऊँ ।
व्यथित करे नहि काम वासना इससे विनत चढाऊं ।।
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदय मे मेरे अभिनव ज्योति जगाये ।।

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये कामबाणविनाशनाय पुष्प नि० ।४।

नव नव व्रत के मधुर रसीले मैं पकवान बनाऊं।
क्षुधा न बाधा यह दे पाये इससे विनत चढाऊं॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति रक्षा हित आये।
यह वात्सल्य हृदय मे मेरे अभिनव ज्योति जगाये॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य नि० ।५।

मैं मन का मणिमय दीपक ले ज्ञान-वातिका जारूं।
मोह-तिमिर मिट जाये मेरा गुरु सन्मुख उजियारूं॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये।
यह वात्सल्य हृदय मे मेरे अभिनव ज्योति जगाये॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये मोहतिमिरविनाशनाय दीप नि० ।६।

ले विराग की धूप सुगन्धित त्याग धूपायन खेऊँ।
कर्म आठ का ठाठ जलाऊं गुरु के पद नित सेऊं॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये।
यह वात्सल्य हृदय मे मेरे अभिनव ज्योति जगाये॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये अष्टकर्मदहनाय धूप निर्व० ।७।

पूजा सेवा दान और स्वाध्याय विमल फल लाऊ।
मोक्ष विमल फल मिले इसी से विनत गुरू पद ध्याऊ।
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये।
यह वात्सल्य हृदय मे मेरे अभिनव ज्योति जगाये॥

ओ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये मोक्षफलप्राप्तये फल निर्व० ।८।

यह उत्तम वसु द्रव्य सजोये हर्षित भक्ति बढाऊं।
मैं अनर्घपद को पाऊं गुरुपद पर बलि बलि जाऊं॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति-रक्षा हित आये।
यह वात्सल्य हृदय में मेरे अभिनव ज्योति जगाये॥

ओं ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्व० ।९।

जयमाला

दोहा

श्रावण-शुक्ला पूर्णिमा यति रक्षा दिन जान।
रक्षक विष्णु मुनीश की यह गुणमाल महान॥

पद्धडी छन्द

जय योगिराज श्रीविष्णु धीर, आकर तुम हर दो साधु-पीर।
हस्तिनापुर वे आये तुरन्त, कर दिया विपतका शीघ्र अन्त॥
वे ऋद्धि सिद्धि-साधक महान्, वे दयावान वे ज्ञानवान।
धर लिया स्वयं वामन सरूप, चल दिये विप्र बनकर अनूप॥
पहुंचे बलि नृप के राजद्वार, वे तेज-पुञ्ज धर्मावतार।
आशीष दिया आनन्दरूप, हो गया मुदित सुन शब्द भूप॥
बोला वर मांगो विप्रराज, दूंगा मनवांछित द्रव्य आज।
पग तीन भूमि याची दयाल, बस इतना ही तुम दो नृपाल॥
नृप हँसा समझ उनको अजान, बोला यह क्या, लो और दान।
इससे कुछ इच्छा नहीं शेष, बोले वे ये ही दो नरेश॥
संकल्प किया दे भूमि दान, ली वह मन मे अति मोद मान।
प्रगटाई अपनी ऋद्धि सिद्धि, हो गई देह की विपुल वृद्धि॥

दो पग मे नापा जग समस्त, हो गया भूप बलि अस्त-व्यस्त।
इक पग को दो अब भूमिदान, बोले बलि से करुणा-निधान ॥
नत मस्तक बलि ने कहा अन्य, है भूमि न मुझ पर हे अनन्य।
रख ले पग मुझ पर एक नाथ, मेरी हो जाये पूर्ण बात ॥
कहकर तथास्तु पग दिया आप, सह सका न बलि वह भार-ताप
बोला तुरन्त ही कर विलाप, करदे अब मुझको क्षमा आप ॥
मैं हूँ दोषी मै हूँ अजान, मैने अपराध किया महान्।
ये दुखित किये सब साधु-सन्त, अब करो क्षमा हे दयावन्त ॥
तब की मुनिवर ने दया-दृष्टि, हो उठी गगन से महावृष्टि।
पा गये दग्ध वे साधु-त्राण, जन-जन के पुलकित हुए प्राण ॥
घर घर मे छाया मोद-हास, उत्सव ने पाया नव प्रकाश।
पीडित मुनियो का पूर्णमान, रख मधुर दिया आहार दान ॥
युग युग तक इसको रहे याद, कर सूत्र बंधाया साह्लाद।
बन गया पर्व पावन महान, रक्षाबन्धन सुन्दर निधान ॥
वे विष्णु मुनीश्वर परम सन्त, उनकी गुण-गरिमाका न अन्त।
वे करें शक्ति मुझको प्रदान, 'कुमरेश' प्राप्त हो आत्मज्ञान ॥

घत्ता

श्री मुनि विज्ञानी आतम-ध्यानी।
मुक्ति-निशानी सुख-दानी।
भव-ताप विनाशे सुगुण प्रकाशे।
उनकी करुणा कल्यानी ॥

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

विष्णुकुमार मुनीशको, जो पूजे धर प्रीत ।
वह पावे 'कुमरेश' शिव, और जगत मे जीत ॥

श्री रविव्रत पूजा

अडिल्ल छन्द ।

यह भविजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही ।
करहु भव्यजन सर्व, सुमन देकें सही ॥
पूजो पार्श्व जिनेन्द्र, त्रियोग लगायके ।
मिटै सकल सन्ताप, मिलै निधि आयके ॥
मतिसागर इक सेठ, सुग्रन्थन मे कही ।
उनने भी यह पूजा कर आनन्द लही ॥
तातें रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये ।
सुख सम्पति संतान, अतुल निधि लीजिये ॥
प्रणमो पार्श्व जिनेश को, हाथ जोड़ सिर नाय ।
परभव सुख के कारने, पूजा करूं बनाय ॥
रवीवार व्रत के दिना, येही पूजन ठान ।
ता फल सम्पति को लहैं, निश्चय लीजे मान ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

उज्जल जल भरकें अतिलायो, रतन कटोरन माहीं।
धार देत अति हर्ष बढावत, जन्म जरा मिट जाहीं ।।
पारसनाथ जिनेश्वर पूजो, रविव्रत के दिन भाई।
सुख सम्पत्ति बहु होय तुरतही, आनन्द मगल दाई ।।१।।
ओ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामत्युविनाशनाय जलम्।
मलयागिर केशर अतिसुन्दर, कुकुम रङ्ग बनाई।
धार देत जिन चरनन आगे, भव आताप नशाई ।।पारस०
ओ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दन।२।
मोतीसम अति उज्ज्वल तदुल, लावो नीर पखारो।
अक्षयपद के हेतु भावसों, श्री जिनवर ढिग धारो ।। पारस०
ओ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम्।३।
बेला अरु मचकुंद चमेली, पारिजात के ल्यावो।
चुनचुन श्रीजिन अग्र चढाऊ,मनवाछित फल पावो।।पारस०
ओ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्पम्।४।
बावर फैंनी गुजिया आदिक, घृत मे लेत पकाई।
कंचन थार मनोहर भरके, चरनन देत चढाई ।। पारस०
ओ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम्।५।
मणिमय दीप रतनमय लेकर, जगमग जोति जगाई।
जिनके आगे आरति करके, मोहतिमिर नश जाई ।।पारस०
ओ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहन्धकारविनाशनाय दीपम्।६।
चूरन कर मलयागिर चदन, धूप दशाग बनाई।
तट पावक मे खेय भाव सों, कर्मनाश हो जाई ।।पारस०
ओ ह्रीं श्रीपार्श्वनाजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपम्।७।

श्रीफल आदि बदाम सुपारी, भांति भांति के लावो।
श्रीजिन चरन चढ़ाय हरषकर, तातें शिव फल पावो ॥पारस०
ओ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलम् ।८।
जल गंधादिक अष्ट द्रव्य ले, अर्घ बनावो भाई।
नाचत गावत हर्षभाव सो, कंचन थार भराई ॥ पारस०
ओ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् ।९।

गीतिका छन्द।

मन वचन काय त्रिशुद्ध करके, पार्श्वनाथ सु पूजिये।
जल आदि अर्घ बनाय भविजन, भक्तियत सु हूजिये ॥
पूज्य पारसनाथ जिनवर, सकल सुखदातार जी।
जे करत हैं नर नारि पूजा, लहत सौख्य अपार जी ॥
ओ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

यह जग मे विख्यात हैं पारसनाथ महान।
तिन गुण की जयमालिका, भाषा करू बखान ॥
जय जय प्रणमो श्री पार्श्व देव,
इन्द्रादिक तिनकी करत सेव।
जय जय सु बनारस जन्म लीन,
तिहुं लोक विषै उद्योत कीन ॥
जय जिनके पितु श्री विश्वसेन,
तिनके घर भये सुख-चैन देन।
जय वामा देवी मात जान,
तिनके उपजे पारस महान ॥

जय तीन लोक आनन्द देन,
भविजन के दाता भये ऐन।
जय जिनने प्रभु का शरण लीन,
तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन ॥
जय नाग नागिनी भये अधीन,
प्रभु चरणन लाग रहे प्रवीन।
तज देह देवगति गये जाय,
धरणेन्द्र पद्मावति पद लहाय ॥
जय अञ्जन चोर अधम अजान,
चोरी तज प्रभु को धरो ध्यान।
जय मृत्यु भये वह स्वर्ग जाय।
ऋद्धी अनेक उनने सो पाय ॥
जय मतिसागर इक सेठ जान,
तिन अशुभकर्म आयो महान।
तिनके सुत थे परदेश माहि,
उनसे मिलने की आश नांहि ॥
जय रविव्रत पूजन करी सेठ,
ता फल कर सब से भई भेंट।
जिन जिन ने प्रभु का शरण लीन,
तिन ऋद्धि सिद्धि पाई नवीन ॥
जय रविव्रत पूजा करहिं जेय,
ते सौख्य अनन्तानन्त लेय।

धरणेन्द्र पद्मावति हुये सहाय,
प्रभुभक्त जान तत्काल आय ॥
पूजा विधान इहिविधि रचाय,
मन वचन काय तीनो लगाय ।
जो भक्तिभाव जयमाल गाय,
सोही सुखसम्पति अतुल पाय ॥
वाजत मृदंग वीनादि सार,
गावत नाचत नाना प्रकार ।
तन नन नन नन नन ताल देत,
सन नन नन नन सुर भर सो लेत ॥
ता थेई थेई थेई पग धरत जाय,
छम छम छम छम घुघरू वजाय ।
जे करहि निरत इहि भात भात,
ते लहहि सुक्ख शिवपुर सुजान ॥

रविव्रत पूजा पार्श्व की, करै भविक जन जोय ।
सुख सम्पति इह भव लहै, आगे सुर पद होय ॥
ओ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र, पूज भवि मन धरैं ।
भव भव के आताप, सकल छिन में टरैं ॥
होय सुरेन्द्र नरेन्द्र, आदि पदवी लहे ।
सुख सम्पति सन्तान, अटल लक्ष्मी रहे ॥

फेर सर्व विधि पाय, भक्ति प्रभु अनुसरें।
नानाविध सुख भोग, बहुरि शिवतिय वरे ॥

इत्याशीर्वाद।

रविव्रत जाप्य मन्त्र

ओ ह्रीं नमो भगवते चिंतामणि—पार्श्वनाथाय सप्तफणमण्डिताय श्रीधरणेन्द्र पद्मावती—सहिताय मम ऋद्धि सिद्धि वृद्धि सौख्य कुरु कुरु स्वाहा।

नवग्रह अरिष्टनिवारक विधान

प्रणम्याद्यन्ततीर्थेश, धर्मतीर्थप्रवर्तक,
भव्यविघ्नोपशांत्यर्थं, ग्रहार्चा वर्ण्यते मया।
मार्तण्डेन्दुकुजसौम्य सूरसूर्यकृतातका,
राहुश्च केतुसंयुक्तो, ग्रहाः शांतिकरा नव ॥

दोहा

आदि अन्त जिनवर नमो, धर्म प्रकाशनहार।
भव्य विघ्न उपशांति को, ग्रहपूजा चित धार ॥
काल दोष परभावसों, विकलप छूटे नाहिं।
जिन-पूजामें ग्रहनकी पूजा मिथ्या नाहिं ॥
इस ही जम्बू द्वीप में, रवि-शशि मिथुन प्रमान।
ग्रह नक्षत्र तारा सहित, ज्योतिष चक्र प्रमान ॥
तिनही के अनुसार सो, कर्म-चक्र की चाल।
सुख दुख जानै जीवको, जिन-वच नेत्रविशाल ॥

ज्ञान प्रश्न-व्याकरण मे, प्रश्न-अंग है आठ।
भद्रबाहु मुख जनित जो, सुनत कियो मुख पाठ ॥
अवधि धार मुनिराज जी कहे पूर्वकृत कर्म।
उनके वच अनुसार सौं, हरे हृदय का भर्म ॥

समुच्चय पूजा।

दोहा

अर्क चन्द्र कुज सोम्य गुरु, शुक्र शनिश्चर राहु।
केतु ग्रहारिष्ट नाशने, श्री जिन-पूज रचाहु ॥

ओ ह्री सर्वग्रहारिष्टनिवारका. श्री चतुर्विशतिजिना अत्र अवतरत अवतरत सवौपट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठः स्थापन। अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् सन्निधिकरण।

गीता छन्द।

क्षीरसिंधु समान उज्ज्वल, नीर निर्मल लीजिये।
चौबीस श्रीजिनराज आगे, धार त्रय शुभ दीजिये ॥
रवि सोम भूमिज सौम्य गुरु कवि, शनितसो पूतकेतवे।
पूजिये चौबीस जिन, ग्रहारिष्ट-नाशन हेतवे ॥

ओ ह्री सर्वग्रहारिष्ट-निवारक-श्रीचतुर्विशति-तीर्थंकरेभ्य पचकल्याणकप्राप्तेभ्यो जल निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखण्ड कुमकुम हिम सुमिश्रित, घिसौं मनकरि चावसौं।
चौबीस श्री जिनराज अघहर, चरण चरचों भावसौं ॥रवि०

ओ ह्री सर्वग्रहारिष्ट-निवारक-श्रीचतुर्विशति - तीर्थंकरेभ्यः पचकल्याणकप्राप्तेभ्य चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

अक्षत अखण्डित सालि तन्दुल, पुंज मुक्ताफल समं ।
चौबीस श्रीजिनचरण पूजत,नाश ह्वै नवग्रह भ्रमं ।।रवि०।।

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारक-श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य: पञ्चकल्याणकप्राप्तेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।३।

कुन्द कमल गुलाब केतकि, मालती जाही जुही ।
कामबाण विनाश कारण, पूजि जिनमाला गुही ।।रवि०।।

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारक-श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य: पञ्चकल्याणकप्राप्तेभ्य पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।४।

फेनी सुहारी पुवा पापर लेय मोदक घेवरं ।
शतछिद्रआदिक विविध व्यंजन, क्षुधाहर बहु सुखकरं ।।रवि०।।

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारक-श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य: पञ्चकल्याणकप्राप्तेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।५।

मणिदीप जगमग ज्योति तमहर प्रभु आगे लाइये ।
अज्ञाननाशक जिनप्रकाशक, मोहतिमिर नशाइये ।।रवि०।।

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारक-श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य: पञ्चकल्याणकप्राप्तेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।६।

कृष्णा अगर घनसार मिश्रित, लौंग चन्दन लेइये ।
ग्रहरिष्ट नाशन हेत भविजन, धूप जिनपद खेइये ।।रवि०।।

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारक-श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य: पञ्चकल्याणकप्राप्तेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।७।

बादाम पिस्ता सेब श्रीफल, मोच नींबू सदफलं ।
चौबीस श्रीजिनराज पूजत, मनोवाञ्छित शुभ फलं ।।रवि०।।

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्ट निवारक-श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य: पञ्चकल्याणकप्राप्तेभ्य फलं निर्वपामीति स्वाहा ।८।

जल गंध सुमन अखण्ड तन्दुल, चरु सुदीप सुधूपकं ।
फल द्रव्य दूध दही सुमिश्रित, अर्घं देय अनूपकं ॥रवि०॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारक-श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य पंचकल्याणकप्राप्तेभ्य अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्घं

अडिल्ल—सलिल गंधते फूल सुगन्धित लीजिए ।
तन्दुल ले चरु दीपक धूप खेवीजिये ॥
फल ले अर्घं बनाय प्रभू पद पूजिये ॥
रवि अरिष्ट को दोष तुरत तहं धूजिये ।

ॐ ह्रीं रवि अरिष्ट निवारक श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय अर्घं ॥१॥

जल चन्दन बहु फूल सु तन्दुल लीजिये ।
दुग्ध शर्करा राशि हित सु व्यंजन कीजिये ॥
दीप धूप फल अर्घ बनाय धरीजिये ।
शीस जिनेन्द्र को नवाय अरिष्ट हरीजिये ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्ट निवारक चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय अर्घं ॥२॥

सुरभित जल श्रीखण्ड कुसुम तन्दुल भले ।
व्यजन दीपक धूप सदा फल नो रले ॥
वासु पूज्य जिनराय अर्घं शुभ दीजिये ।
मंगल ग्रह को रिष्ट नाश कर लीजिये ॥

ॐ ह्रीं भौमारिष्ट निवारक वासुपूज्य-जिनाय नमः अर्घं ॥३॥

शुभ सलिल चन्दन सुमन अक्षत क्षुधाहर चरु लीजिये ।
मणिदीप धूप सुफल सहित वसु दरब अर्घं जु दीजिये ।

विमलनाथ अनन्तनाथ सु धर्मनाथ जु शांतये ।
कुन्थु अरह जु नमि जिन महावीर आठ जिन यजे ।।
ॐ ह्री सोम ग्रहारिष्ट निवारक अष्ट जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं ।।४।।

जल चन्दन फूल तन्दुल मूल चरु दीपक ले धूप फल ।
वसु विधि से अर्चे वसुविधि चर्चे कीजे अविचल मुक्ति धरं ।।
ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन सुमति सुपारसनाथ वर ।
शीतलनाथ श्रेयांस जिनेश्वर पूजत सुर गुरु दोष हर ।।
ॐ ह्री सुर गुरु दोष निवारक वसु जिनवरेभ्यो अर्घ ।।५।।

जल चन्दन ले पुष्प और अक्षत घने ।
चरु दीपक बहु धूप सु फल अति सोहने ।।
गीत नृत्य गुण गाय अर्घ पूरन करें ।
पुष्पदन्त जिन पूज शुक्र दूषण हरें ।।
ओ ह्री शुक्रारिष्ट निवारक पुष्पदन्त जिनाय अर्घ ।।६।।

प्राणी नीरादिक वसु द्रव्य ले ।
मन वच काय लगाय ।।
अष्ट कर्म को नाश ह्वै अष्ट महा गुण पाय हो ।
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये ।।
ए जी रवि सुत सहज दुख जाय ।
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये ।।
ओ ह्री शनि अरिष्ट नाशक मुनिसुव्रत जिनेन्द्राय अर्घं ।।७।।

जल गन्ध पुष्प अखण्ड अक्षय चरु मनोहर लीजिए ।
दीप धूप फलोघ सुन्दर अर्घ जिन पद दीजिए

जब राहु गोचर रासि मे दुख देइ दुष्ट सुभावसों ॥
तब नेमि जिनके भाव सेति चरण पूजूं चायसों ।
ओं ह्रीं राहु अरिष्ट नाशक नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं ॥८॥

जल चन्दन सुमन सु लाय तन्दुल अघ हारो ।
चरु दीप धूप फल लाय अर्घ करों भारी ॥
मैं पूजो मल्लि जिनेश पारस सुखकारी ।
ग्रह केतु अरिष्ट निवार मन सुख हितकारी ॥
ओं ह्रीं केतु अरिष्ट निवारक मल्लि पार्श्व जिनाभ्याम् अर्घं ॥९॥

रवि शशि मंगल सौम गुरु भृगु शनि राहु सुकेतु ।
इनको रिष्ट निवार करे अर्चे जिन सुख हेतु ॥
ॐ ह्रीं सर्व ग्रहारिष्ट निवारक चतुर्विंशति जिनेभ्यो अर्घं ॥१०॥

जयमाला

दोहा

श्रीजिनवर पूजा किये, ग्रह अरिष्ट मिट जांय ।
पंच ज्योतिषी देव सब, मिल सेवें प्रभु पाय ॥

पद्धरी छन्द

जय २ जिन आदि महन्त देव,जयअजित जिनेश्वर करहु सेव ।
जय २ संभव भव भय निवार,जय २ अभिनन्दन जगत तार ॥
जय सुमति सुमति दायक विशेष,जय पद्मप्रभ लख पदम लेष
जय २ सुपार्श्व हर कर्म पास, जय जय चंद्रप्रभ सुख निवास ॥
जय पुष्पदन्त कर कर्म अंत, जय शीतल जिन शीतल करन्त
जय श्रेय करन श्रेयान्स देव, जय वासुपूज्य पूजत सुमेव ॥

जय विमल विमल कर जगतजीव,जय२ अनत सुख अतिसदीव
जय धर्मधुरन्धर धर्मनाथ, जय शान्ति जिनेश्वर मुक्ति साथ ॥
जय कुथुनाथ शिव-सुख निधान,जय अरह जिनेश्वर मुक्ति खान
जय मल्लिनाथ पद पद्म भास,जय मुनिसुव्रत सुव्रत प्रकाश।
जय जय नमिदेव दयाल सन्त,जय नेमिनाथ प्रभु गुण अनन्त।
जय पारसप्रभु संकट निवार, जय वर्द्धमान आनन्दकार ॥
नवग्रह अरिष्ट जब होय आय, तब पूजे श्रीजिनदेव पाय।
मन वच तन सब सुखसिधु होय,ग्रहशात रीति यह कही जोय॥

ओ ह्री सर्वग्रहारिष्टनिवारक-श्रीचतुर्विशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्यः पचकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसों जिनदेव प्रभु, ग्रह सम्बन्ध विचार।
जो पूजे प्रत्येक को, वे पावें सुख सार ॥

इत्याशीर्वाद

सर्वग्रह शान्ति मन्त्र

ओ ह्रा ह्री ह्रूं ह्रौ ह्र असिआउसा सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा।
(प्रात इस मन्त्र की माला फेरने मे सर्वग्रहो की शान्ति होती है।)

अथ नवग्रहशाति स्तोत्र

जगद्गुरुं नमस्कृत्य, श्रुत्वा सद्गुरुभाषितं।
ग्रहशांति प्रवक्ष्यामि, लोकाना सुखहेतवे ॥
जिनेन्द्राः खेचरा ज्ञेया, पूजनीया विधिक्रमात्।
पुष्पैर्विलेपनैर्धूपैर्नैवेद्यैस्तुष्टिहेतवे।

पद्मप्रभस्य मार्तण्डश्चन्द्रश्चन्द्रप्रभस्य च।
वासुपूज्यस्य भूपुत्रो, बुधश्चाष्टजिनेशिना ॥
विमलानन्तधर्मेश-शांतिकुन्थ्वरहन्नमि।
वर्द्धमानजिनेन्द्राणा, पादपद्मं बुधो नमेत् ॥
ऋषभाजितसुपार्श्वा साभिनन्दनशीतलौ।
सुमतिः सम्भवस्वामी, श्रेयांसेषु बृहस्पतिः ॥
सुविधि कथितः शुक्रे, सुव्रतश्च शनैश्चरे।
नेमिनाथो भवेद्राहोः, केतुः श्रीमल्लिपार्श्वयोः ॥
जन्मलग्नं च राशि च, यदि पीडयन्ति खेचरा·।
तदा सपूजयेद् धीमान्-खेचरान् सह तान् जिनान् ॥
भद्रबाहुगुरुर्वाग्मी, पंचमः श्रुतकेवली।
विद्याप्रसादतः पूर्वं ग्रहशांतिविधिः कृता ॥
य. पठेत् प्रातरुत्थाय, शुचिर्भूत्वा समाहितः।
विपत्तितो भवेच्छांतिः क्षेमं तस्य पदे पदे ॥

प्रात काल इस स्तोत्र का पाठ करने से क्रूरग्रह अपना असर नही करते। किसी ग्रह के असर होने पर २७ दिन तक प्रति दिन २१ बार पाठ करने से अवश्य शान्ति होगी।

--- --

नव ग्रहो के जाप्य

ॐ ह्री क्ली श्री श्री सूर्यग्रह अरिष्टनिवारक श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय नम शाति कुरु कुरु स्वाहा ॥१॥ ७००० जाप्य।

ॐ ह्री क्रो श्री क्ली चन्द्रारिष्टनिवारक श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नम. शाति कुरु कुरु स्वाहा ॥२॥ ११००० जाप्य।

ॐ आ क्रो ह्री श्री क्ली भौमारिष्टनिवारक श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नम शाति कुरु कुरु स्वाहा ॥३॥ १०००० जाप्य।

ॐ ह्री क्रों आ श्रीबुधग्रहारिष्टनिवारक श्री विमल अनत धर्म शाति कुन्थु अरह नमि वर्धमान अष्ट जिनेन्द्रेभ्यो नम शाति कुरुत कुरुत स्वाहा ॥४॥ ८००० जाप्य।

ॐ आ क्रो ह्री श्री क्ली ऐ गुरु अरिष्ट निवारक ऋषभ अजित सभव अभिनन्दन सुमति सुपारस शीतल श्रेयास अष्ट जिनेन्द्रेभ्यो नम शाति कुरुत कुरुत स्वाहा ॥५॥ १९००० जाप्य।

ॐ ह्री श्री क्ली ह्री शुक्र अरिष्टनिवारक श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्राय नम शाति कुरु कुरु स्वाहा ॥६॥ ११००० जाप्य।

ॐ ह्री क्रो ह्र श्री शनि ग्रह अरिष्टनिवारक श्री मुनिसुव्रत-नाथ जिनेन्द्राय नम शाति कुरु कुरु स्वाहा ॥७॥ २३००० जाप्य।

ॐ ह्री क्ली ह्रू राहु ग्रहारिष्टनिवारक श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नम शाति कुरु कुरु स्वाहा ॥८॥ १८००० जाप्य।

ॐ ह्रो क्ली ऐ केतु अरिष्टनिवारक श्री मल्लिनाथ पार्श्व-नाथ जिनेन्द्राभ्या नम शाति कुरुतम् २ स्वाहा ॥९॥ ७००० जाप्य।

अभिषेक पूजन विधान के बाद इन जाप्यो को जपना चाहिए। फिर शाति विसर्जन करे।

श्री कलिकुण्ड पार्श्वनाथ जिन पूजा भाषा

(मंगल पाठ) ॐ नमः सिद्धेभ्यः

मगल मूर्ति परम पद, पंच धरो नित ध्यान ।
हरो अमगल विश्व का, मंगलमय भगवान ॥१॥
मगल जिनवर पदनमो, मंगल अर्हंत देव ।
मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दो स्वयमेव ॥२॥
मंगल आचार्य मुनि, मगल गुरु उवझाय ।
सर्व साधु मगल करो, वन्दो मन वच काय ॥३॥
मगल सरस्वती मात का, मगल जिनवर धर्म ।
मंगल मय मंगल करो, हरो असाता कर्म ॥४॥
या विधि मंगल से सदा, जग मे मंगल होत ।
मगल नाथूराम यह, भव सागर दृढ पोत ॥५॥

॥ इति मगलपाठ ॥

श्री कलिकुण्ड पार्श्वनाथ जिन पूजा (भाषा)

अडिल्ल छद-ह्रूं कार अक्षरात्मक देव जो ध्यावते ।
देव मनुष पशु कृत सो व्याधि नशावते ॥
कांसी तांबे पत्र पै शुद्ध लिखावते ।
केशर चन्दन ता पर गध रचावते ॥

दोहा-ऐसे अनुपम यंत्र को, मन वच काय मझार ।
जे भवि पूजें प्रीति धर, हों भवदधि से पार ॥१॥

।। यंत्र स्थापना ।। चाल जोगीरासा ।।

है महिमा को थान शुद्धवर यत्र कलिकुण्ड जानो ।
डाकिनि शाकिनि अगनि चोर भय नाशत सव दुख खानो ।।
नव ग्रहों का सव दुख नाशो रवि शनि आदि पिछानो ।
तिनका मै स्थापन करहूँ त्रिविधि योग मन लानो ।।

ॐ ह्री श्री क्ली ऐं अर्हं कलिकुण्ड दण्ड श्री पार्श्वनाथ धरणेन्द्र पद्मावती सेवित अतुलवल-वीर्य-पराक्रम युक्त सर्वविघ्न-विनाशक, अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।।

।। अथाष्टक ।।

छंदत्रिभगी—गंगाको नीर अति ही शीरं गध गहीर मेल सही।
भर कंचन झारी आनद धारी धार करो मन प्रीति लही ।।
कलिकुण्ड सुयंत्रं पढ कर मत्र ध्यावत जे भवि जन ज्ञानी ।
सव विपति विनाशै, सुख परकाशैं, होवै मगल सुखदानी ।।

ॐ ह्री श्री क्ली ऐं अर्हं कलिकुण्ड दड श्री पार्श्वनाथाय धरणेद्र पद्मावती सेविताय अतुल वलवीर्यं पराक्रमाय सर्वं विघ्न विनाशनाय ह्म्ल्व्यूं भ्म्ल्व्यूं म्म्ल्व्यूं रम्ल्व्यूं घ्म्ल्व्यूं झ्म्ल्व्यूं स्म्ल्व्यूं रम्ल्व्यूं जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।। १।।

क्षीरोदधिनन्दन मलया चन्दन केशर और कर्पूर घसो ।
भर सुवरण कलशा मन अति हुलसा भय वा ताप का दुःख नशो । कलिकुण्ड सु० ।। चदन ।।२।।

नोट—प्रत्येक द्रव्य चढाते समय पूरा मत्र पढिये ।

शशि सम उजियारो तंदुल प्यारो अणि इक सारो जुग लेवो।
हो गंध मनोहर रतन थार भर पुञ्ज सुधर मद तज देवो
॥ कलिकुण्ड० ॥ अक्षत ॥ ३ ॥

बहु फूल सुवासं मधुकर राशं करके आसं आवत हैं।
सुरतरु के लावो पुण्य बढावो काम व्यथा नश जावत है॥
कलिकुण्ड० ॥ पुष्प ॥ ४ ॥

पकवान बनाये बहु घृत लाये खाड पगाये मिष्ट करे।
मन आनन्द धारैं मंत्र उचारैं क्षुधा रोग तत्काल टरे॥
कलिकुण्ड० ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥

रतनन की जोतं अति उद्योत तम क्षय होत ज्ञान बढ़ै।
अति ही सुख पावै पाप नशावै जो मन लावै पाठ पढ़ै॥
कलिकुण्ड० ॥ दीप ॥ ६ ॥

चंदन कर्पूरं अगर गुगूर लौंगादिक दश गंध मिला।
वर धूप बनाकर अगनि माहि धर, दुष्ट कर्म तत्काल जला॥
कलिकुण्ड० ॥ धूपं ॥ ७ ॥

खर्जूर मगायो श्रीफल लावो दाख अनार बदाम खरे।
पुंगीफल प्यारे मन सुखकारे अन्तराय विधि दूर करे॥
कलिकुण्ड० ॥ फलं ॥ ८ ॥

जल गंध सुधारा तंदुल प्यारा पुष्प चरु ले दीप भली।
वर धूप सुरङ्गी फल ले अभङ्गी करो अर्घ उर हर्ष रली॥
कलिकुण्ड० ॥ अर्घं ॥ ॥९॥

जयमाला ।

सर्वज्ञ परम गुण सागर हैं, तिन पद के हरि सब चाकर हैं।
सब विघ्न विनाशक सुखकर हैं।। कलिकुन्डसुयंत्र नमूं वर हैं
नित ध्यान करैं जो जन मन ला, वर पूज रचैं कर यंत्र भला। सब विघ्न० ॥२॥
तिनके धर ऋद्धि अनेक भरैं। मन वांछित कारज सर्व सरैं सब विघ्न० ॥३॥
सूर वंदित हैं तिनके चरण, उर धर्म बढे अघ को हरण ॥ सब विघ्न० ॥४॥
भय चोर अगनि जल साप मही, सब व्याधि नशैं छिन मे जु सही ॥ सब विघ्न० ॥५।
सब बन्ध खुलैं छिन माहि लखो, अरि मित्र होय गुरु सांच अखो ॥ सब विघ्न० ॥६॥
अतिसार संग्रहणी रोग नसैं, बंझा नारी लह पुत्र हसैं ॥ सब विघ्न० ॥७॥
सब दूर अमंगल होय जान, सुख सपत दिन दिन बढत मान ॥ सब विघ्न० ॥८॥
इस यंत्र की जे पूजा करत, सुर नर सुख लह हो मुकति कत ॥ सब विघ्न० ॥९॥

ॐ ह्री श्री क्ली ऐं अर्हं कलिकुण्डदड श्रीपार्श्वनाथाय धरणेंद्र पद्मावति-सेविताय अतुल-बलवीर्य-पराक्रमाय सर्व-विघ्न-विनाशकाय महार्घं निर्वं० ॥

जाप्य मंत्र ।

ॐ ह्री श्री क्ली ऐं अर्हं श्रीपार्श्वनाथाय धरणेंद्रपद्मावती सेविताय ममेप्सित कार्य कुरु कुरु स्वाहा ॥

जयमाल।

नागेंद्र प्रभु के चरण नमते मुकुट प्रभा महा बढी ।
बढो पुण्य अपार सब दुख कार अघ प्रकृति घटी ॥
ध्याये श्री कलिकुण्ड दण्ड प्रचण्ड पारसनाथ जी ।
तिनकी सुनो जयमाल भविजन कहूँ नवाके माथ जी॥ १॥

त्रोटक छन्द

विधि घाति हनो वर ज्ञान लहो, सब ही पदार्थ को भेद कहो।
नित यन्त्र नमू कलिकुण्ड सार, सब विघ्न विनाशन सुक्खकार २
कुमती वसु मान विनाशत हैं, मुकती का मारग भाषत हैं।
नित यंत्र० ॥३॥
दुर्गति मारग का नाश करें, एकांत मिथ्यात विवाद हरें ।
नित यंत्र० ॥४॥
निराकुल निर्मल शील धरें, निर्मल मुक्त लक्ष्मी को वरें ।
नित यंत्र० ॥५॥
नहीं क्रोध मान छल लोभ पाप, अष्टादश दोष विमुक्त आप ।
नित यंत्र० ॥६॥
हैं अजर अमर गुण के भंडार, सब विघ्न विनाशक परम सार ॥ नित यंत्र० ॥७॥

नागेंद्र नरेंद्र सुरेंद्र आय, नमि है आनन्दित चित्त लाय।

नित यत्र० ॥८॥

दिनेंद्र मुनेंद्र निशेन्द्र आय, पूजत नित मनमे हर्ष धार ॥

नित यत्र० ॥९॥

(घत्ता छन्द)

सब पाप निवारण, संकट टारण, कलिकुण्ड पारस परचंड।
जग मे यश पावैं, सपति आवैं, लहै मुकत जो सुख है अखण्ड।
प्रति दिन जो बन्दैं, मन आनन्दैं हो बलवन्त पाप सब दूर ॥
सबविघ्न विनाश लहैं सुख सपति दुष्टकर्म होवें चकचूर ॥ अर्घ ॥
श्री पारस स्वामी अन्तर्यामी, ध्यान लगायो वन मांही।
चर कमठ जु आयो क्रोध बढायो परिषह कीनी अधिकाई ॥
जिन मेरु समाना अचल महाना लख नागेंद्र ने पूज कियो।
सुर फण मंडप कीनो सुरबल हीनो है प्रभु को निज शीस नयो

॥महार्घं॥

सोरठा

पूजन ये सुखकार, जे भवि करि है प्रीतिधर।
विधि बलवंत अपार, हन कर शिव सुखको लहै ॥

॥ इत्याशीर्वाद ॥ पुष्पाजंलि क्षिपेत् ॥

नोट:—इस पूजा की तीन जाप है जो
नीचे लिखी हैं—

(जाप्य मंत्र १)

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्ड श्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती-महिताय अतुल-बलवीर्य-पराक्रमाय ममात्मविद्या रक्ष रक्ष पर विद्यां छिंद छिंद भिंद भिंद स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रः स्फ्रां स्फ्रः हूं फट् स्वाहा ॥१॥

(जाप्य मंत्र २)

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्र-पद्मावती-महिताय ममेप्सित कार्यं कुरु कुरु स्वाहा ॥२॥

(जाप्य मंत्र ३)

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्ड-दण्ड-स्वामिन्नतुल-बलवीर्यं पराक्रमाय ममात्म-विद्या रक्ष रक्ष पर-विद्या छिंद छिंद भिंद भिंद स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रः हूं फट् स्वाहा ॥३॥

श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ पूजन

स्थापना

हे पार्श्वनाथ करुणानिधान महिमा महान मंगलकारी ।
शिव भर्तारी, सुख भंडारी सर्वज्ञ सुखारी त्रिपुरारी ॥
तुम धर्मसेत, करुणानिकेत आनन्द हेत अतिशय धारी ।
तुम चिदानन्द आनन्द कन्द दुख—द्वन्द फन्द संकटहारी ॥
आवाहन करके आज तुम्हे अपने मन मे पधराऊंगा ।
अपने उर के सिंहासन पर गद-गद हो तुम्हें बिठाऊँगा ॥

मेरा निर्मल मन टेर रहा है नाथ हृदय मे आ जाओ।
मेरे सूने मन मन्दिर मे पारस भगवान समा जाओ॥

ओं ह्री श्री अहिच्छत्र-पार्श्वनाथ-जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर सवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

भव वन मे भटक रहा हू मैं भर सकी न तृष्णा की खाई।
भव सागर के अथाह दुख मे सुख की जल विन्दु नहीं पाई॥
जिस भांति आपने तृष्णा पर, जय पाकर तृषा बुझाई है।
अपनी अतृप्ति पर, अब तुमसे जय पाने की सुधि आई है॥

ओं ह्री श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।१।

क्रोधित हो क्रूर कमठ ने जब नभ से ज्वाला बरसाई थी।
उस आत्मध्यान की मुद्रा मे आकुलता तनिक न आई थी॥
विघ्नो पर बैर-विरोधो पर मै साम्यभाव धर जय पाऊँ।
मन की आकुलता मिट जाये ऐसी शीतलता पा जाऊ॥

ओं ह्री श्री अहिच्छत्र-पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय संसार ताप-विनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।२।

तुमने कर्मो पर जय पाकर मोती सा जीवन पाया है।
यह निर्मलता मै भी पाऊ मेरे मन यही समाया है॥
यह मेरा अस्तव्यस्त जीवन इसमे सुख कही न पाता हूँ।
मै भी अक्षय पद पाने को शुभ अक्षत तुम्हे चढाता हू॥

ओं ह्री श्री अहिच्छत्र-पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्ताय अक्षत निर्वपामीति स्वाहा।३।

अध्यात्मवाद के पुष्पो से जीवन फुलवारी महकाई ।
जितना जितना उपसर्ग सहा उतनी उतनी दृढता आई ।।
मैं इन पुष्पों से वञ्चित हू अब इनको पाने आया हू ।
चरणो पर अर्पित करने को कुछ पुष्प संजोकर लाया हू ।।

ओ ह्री श्री अहिच्छत्र-पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय काम वाण विनाश-
नाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।४।

जय पाकर चपल इन्द्रियो पर अन्तर की क्षुधा मिटा डाली ।
अपरिग्रह की आलोक शक्ति अपने अन्दर ही प्रगटा ली ।।
भटकाती फिरती क्षुधा मुझे मै तृप्त नहीं हो पाया हूं ।
इच्छाओ पर जय पाने को मैं शरण तुम्हारी आया हूं ।।

ओ ह्री श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विनाश-
नाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।५।

अपने अज्ञान अधेरे मे वह कमठ फिरा मारा मारा ।
व्यन्तर विमानधारी था पर तप के उजियारे से हारा ।।
मैं अधकार में भटक रहा उजियारा पाने आया हूं ।
जो ज्योति आप में दर्शित है वह ज्योति जगाने आया हू ।।

ओ ह्री श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाश-
नाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।६।

तुमने तपके दावानल में कर्मों की धूप जलाई है ।
जो सिद्ध-शिला तक आ पहुची वह निर्मल गध उड़ाई है ।।
मैं कर्म बन्धनो में जकड़ा भव बन्धन से घबराया हूं ।
वसु–कर्म दहन के लिये तुम्हे मैं धूप चढाने आया हू ।।

ओ ह्री श्री अहिच्छत्र-पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय
धूप निर्वपामीति स्वाहा ।७।

तुम महा तपस्वी शान्ति मूर्ति उपसर्ग तुम्हे न डिगा पाये।
तप के फल ने पद्मावति के इन्द्रो के आसन कम्पाये ॥
ऐसे उत्तम फल की आशा मै मन मे उमडी पाता हू।
ऐसा शिव सुख फल पाने को, फल की शुभ भेंट चढाता हू ॥

ओ ह्री श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्ताय फलम् निर्वपामीति स्वाहा ।८।

संघर्षो मे उपसर्गों मे तुमने समता का भाव धरा।
आदर्श तुम्हारा अमृत-बन भक्तो के जीवन मे बिखरा ॥
मै अष्ट द्रव्य से पूजा का शुभ थाल सजा कर लाया हू।
जो पदवी तुमने पाई है मै भी उस पर ललचाया हू ॥

ओ ह्री श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ताय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।६।

पचकल्याणक

वैशाख कृष्ण दुतिया के दिन तुम वामा के उर मे आये।
श्री अश्वसेन नृप के घर मे, आनन्द भरे मगल छाये ॥

ओ ह्री वैशाख-कृष्ण-द्वितीयाया गर्भ मगल मडिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेद्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।१।

जब पौष कृष्ण एकादशि को, धरती पर नया प्रसून खिला।
भूले भटके भ्रमते जग को, आत्मोन्नति का आलोक मिला ॥

ओ ह्री पौष कृष्ण एकादश्या जन्म मंगल मण्डिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्थपामीति स्वाहा ।२।

एकादशि पौष कृष्ण के दिन, तुमने संसार अथिर पाया।
दीक्षा लेकर आध्यात्मिक पथ, तुमने तप द्वारा अपनाया॥

ओं ह्रीं पौष कृष्ण एकादशी दीक्षा मंगल मण्डिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

अहिच्छत्र धरा पर जी भर कर, की क्रूर कमठ ने मनमानी।
तब कृष्णा चैत्र चतुर्थी को, पद प्राप्त किया केवल ज्ञानी॥
यह वन्दनीय हो गई धरा, दश भव का वैरी पछताया।
देवो ने जय जयकारों से, सारा भूमण्डल गुञ्जाया॥

ओं ह्रीं श्री चैत्र कृष्णा चतुर्थी दिवस श्री अहिच्छत्रतीर्थे ज्ञान साम्राज्य प्राप्ताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावण शुक्ला सप्तमि के दिन, सम्मेदशिखर ने यश पाया।
'सुवरण गिर'भद्र कूट से जब, शिव मुक्ति रमा को परिणाया।

ओं ह्रीं श्रावण शुक्ला सप्तम्यां सम्मेद शिखरस्य सुवरण भद्र कूटात् मोक्ष मंगल मण्डिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(१)

सुरनर किन्नर गणधर फणधर योगीजन ध्यान लगाते हैं।
भगवान तुम्हारी महिमा का, यशगान मुनीश्वर गाते हैं॥

(२)

जो ध्यान तुम्हारा ध्याते हैं दुख उनके पास न आते हैं।
जो शरण तुम्हारी रहते हैं उनके संकट कट जाते हैं॥

(३)

तुम कर्मदली, तुम महाबली इन्द्रिय सुख पर जय पाई है।
मै भी तुम जैसा बन जाऊँ मन मे यह आज समाई है ॥

(४)

तुमने शरीर औ आत्मा के अतर स्वभाव को जाना है।
नश्वर शरीर का मोह तजा निश्चय स्वरूप पहिचाना है॥

(५)

तुम द्रव्य मोह, औ भाव मोह इन दोनो से न्यारे न्यारे।
जो पुद्गल के निमित्त कारण वे राग द्वेष तुम से हारे ॥

(६)

तुम पर निर्जन बन मे बरसे ओले-शोले पत्थर पानी।
आलोक तपस्या के आगे चल सकी न शठ की मनमानी ॥

(७)

यह सहन शक्तियो का बल है जो तप के द्वारा आया था।
जिसने स्वर्गों मे देवो के सिंहासन को कम्पाया था ॥

(८)

'अहि' का स्वरूप धर कर तत्क्षण धरणेन्द्र स्वर्ग से आया था।
ध्यानस्थ आप के ऊपर प्रभु फण-मण्डप बन कर छाया था ॥

(९)

उपसर्ग कमठ का नष्ट किया मस्तक पर फण-मण्डप रचकर।
पद्मादेवी ने उठा लिया तुम को सिर के सिंहासन पर ॥

(१०)

तप के प्रभाव से देवो ने व्यंतर की माया विनशाई।
पर प्रभो आपकी मुद्रा मे तिल मात्र न आकुलता आई ॥

(११)

उपसर्गों का आतंक तुम्हें हे प्रभु तिल भर न डिगा पाया।
अपनी विडम्बना पर वैरी असफल हो मन में पछताया॥

(१२)

शठ कमठ, वैर के वशीभूत भौतिक बल पर बौराया था।
अध्यात्म आत्मबल का गौरव यह मूरख समझ न पाया था॥

(१३)

दश भव तक जिसने वैर किया पीड़ायें देकर मन मानी।
फिर हार मानकर चरणों में झुक गया स्वयम् यह अभिमानी॥

(१४)

यह वैर महा दुख दायी है यह वैर न वैर मिटाता है।
यह वैर निरन्तर प्राणी को भव सागर में भटकाता है॥

(१५)

जिनको भव सुखकी चाह नहीं दुखसे न जरा भय खाते हैं।
वे सर्व-सिद्धियों को पाकर भव सागर से तिर जाते हैं॥

(१६)

जिसने भी शुद्ध मनोबल से ये कठिन परीषह झेली हैं।
सब ऋद्धि-सिद्धियां नत होकर उनके चरणों पर खेली हैं॥

(१७)

जो निर्विकल्प चैतन्य रूप शिव का स्वरूप तुमने पाया।
ऐसा पवित्र पद पाने को मेरा अन्तर मन ललचाया॥

(१८)

कार्माण वर्गणायें मिलकर भव वन में भ्रमण कराती हैं।
जो शरण तुम्हारी आते हैं ये उनके पास न आती हैं॥

(१६)

तुमने सब बैर विरोधो पर समदर्शी बन जय पाई है।
मैं भी ऐसी समता पाऊँ यह मेरे हृदय समाई है॥

(२०)

अपने समान ही तुम सब का जीवन विशाल कर देते हो।
तुम हो तिखाल वाले बाबा जग को निहाल कर देते हो॥

(२१)

तुम हो त्रिकाल दर्शी तुमने तीर्थंकर का पद पाया है।
तुम हो महान अतिशय धारी तुम में आनन्द समाया है॥

(२२)

चिन्मूरति आप अनंत गुणी रागादि न तुमको छू पाये।
इस पर भी हर शरणागत पर मनमाने सुख साधन आये॥

(२३)

तुम रागद्वेष से दूर दूर इनसे न तुम्हारा नाता है।
स्वयमेव वृक्ष के नीचे जग शीतल छाया पा जाता है॥

(२४)

अपनी सुगन्ध क्या फूल कहीं घर घर आकर बिखराते हैं।
सूरज की किरणो को छूकर सुमन स्वयम् खिल जाते हैं॥

(२५)

भौतिक पारस मणि तो केवल लोहे को स्वर्ण बनाती है।
हे पार्श्व प्रभो तुमको छूकर आत्मा कुन्दन बन जाती है॥

(२६)

तुम सर्व शक्ति धारी हो प्रभु ऐसा बल मैं भी पाऊंगा।
यदि यह बल मुझको भी दे दो फिर कुछ न मांगने आऊंगा॥

(२७)

कह रहा भक्ति के वशीभूत हे दया सिन्धु स्वीकारो तुम।
जैसे तुम जग से पार हुये मुझ को भी पार उतारो तुम ॥

(२८)

जिसने भी शरण तुम्हारी ली वह खाली हाथ न आया है।
अपनी अपनी आशाओं का सबने वांछित फल पाया है।

(२९)

बहुमूल्य सम्पदायें सारी ध्याने वालों ने पाई हैं।
पारस के भक्तों पर निधियां स्वयमेव सिमट कर आई हैं॥

(३०)

जो मन से पूजा करते हैं पूजा उनको फल देती है।
प्रभु-पूजा भक्त पुजारी के, सारे संकट हर लेती है॥

(३१)

जो पथ तुमने अपनाया है वह सीधा शिव को जाता है।
जो इस पथ का अनुयायी है वह परम मोक्ष पद पाता है॥

ओं ह्रीं श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

पार्श्वनाथ भगवान को जो पूजे धर ध्यान।
उसे लोक परलोक के मिलें सकल वरदान॥

इत्याशीर्वाद। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्



तत्त्वार्थसूत्र

(आचार्य उमास्वामि-विरचित)

त्रैकाल्य द्रव्य-षट्क नव-पद-सहित जीव-षट् काय-लेश्याः।
पचान्ये चास्तिकाया व्रत-समिति-गति-ज्ञानचारित्र-भेदा ॥
इत्येतन्मोक्षमूल त्रिभुवन-महितै प्रोक्तमर्हद्भिरीशै ।
प्रत्येति श्रद्धधाति स्पृशति च मतिमान् य स वै शुद्धदृष्टि॥१॥

सिद्धे जयप्पसिद्धे चउविहाराहणाफल पत्ते ।
वदित्ता अरहंते वोच्छ आराहणा कमसो ॥२॥
उज्भोवणमुज्झवण णिव्वाहण साहण च णिच्छरण ।
दसण-णाण-चरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ॥३॥
मोक्षमार्गस्य नेतार भेत्तार कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातार विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्ष-मार्ग ॥१॥ तत्त्वार्थ-श्रद्धान सम्यग्दर्शनम् ॥२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥ जीवाजीवास्रव-बन्ध-सवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्त्वम् ॥४॥ नाम-स्थापना-द्रव्य-भावतस्तन्न्यास ॥५॥ प्रमाण-नयैरधिगम ॥६॥ निर्देश-स्वामित्व-साधनाधिकरण स्थिति विधानत ॥७॥ सत्संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-कालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि ज्ञानम् ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षम् ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृति सज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥१३॥ तदिन्द्रियानिन्द्रिय निमित्तम् ॥१४॥ अवग्रहेहावाय-धारणा

॥१५॥ बहु-बहुविध-क्षिप्रानिःसृतानुक्त-ध्रुवाणा सेतराणाम् ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यञ्जनास्यावगहः ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुत मति-पूर्वं द्वयनेक-द्वादश-भेदम् ॥२०॥ भवप्रत्ययो-ऽवधिर्देव नारकाणाम् ॥२१॥ क्षयोपशम-निमित्त षड्विकल्प शेषाणाम् ॥२२॥ ऋजु-विपुलमती मन पर्ययः ॥२३॥ विशुद्धयप्रतिपाताभ्या तद्विशेष ॥२४॥ विशुद्धि-क्षेत्र-स्वामि-विषयेभ्योऽवधि-मन पर्यययो ।'२५॥ मति-श्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्व-पर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनन्त-भागे मनः पर्ययस्य ॥२८॥सर्व-द्रव्य-पर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना-चतुर्भ्य ॥३०॥ मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्य दृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैगम-सग्रह-व्यवहारर्जु-सूत्र-शब्द-समभिरूढेवभूता नया ॥३३॥

इति तत्वार्थाधिगमे-मोक्षशास्त्रे प्रथमोध्याय ॥१॥

औपशमिक क्षायिको भावो मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्व-मौदयिक-पारिणामिकौ च ॥१॥ द्वि-नवाष्टादशैकविंश-ति-त्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥ सम्यक्त्व-चारित्रे ॥३॥ ज्ञान दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणि च ॥४॥ ज्ञानाज्ञान दर्शन-लब्धयश्चतुस्त्रित्रि-पञ्च-भेदा सम्यक्त्व-चारित्र-सयमा सयमाश्च ॥५॥ गति-कषाय-लिंग-मिथ्यादर्शनाज्ञानासयता सिद्ध-लेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैक-षड्भेदाः ॥६॥ जीव-भव्या भव्यत्वानि च ॥७॥ उपयोगो लक्षणम् ॥८॥ स द्विविधोऽष्ट-चतुर्भेद ॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्कामनस्काः

॥११॥ संसारिणस्त्रस-स्थावरा ॥१२॥ पृथिव्यप्तेजो-वायु वनस्पतय स्थावरा ॥१३॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥१५॥ द्विविधानि ॥१६॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम ॥१७॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ।१८। स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षु-श्रोत्राणि ॥१९॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-शब्दास्तदर्था ॥२०॥श्रुतमनिन्द्रियस्य॥२१॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥ कृमि-पिपीलिका-भ्रमर-मनुष्यादीनामेकैक-वृद्धानि ॥२३॥ संज्ञिन समनस्का ॥२४॥ विग्रहगतौ कर्म योग ॥२५॥ अनुश्रेणि गति ॥२६॥ अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥ विग्रहवती च संसारिण प्राक् चतुर्भ्य ॥२८॥ एक-समयाऽविग्रहा॥२९॥एक द्वौ त्रीन्वानाहारक ॥३०॥सम्मूर्छन-गर्भोपपादा जन्म ॥३१॥सचित्त-शीत-संवृता सेतरा मिश्रा-श्चैकशस्तद्योनय ॥३२॥जरायुजाण्डज-पोताना गर्भ ॥३३॥ देव-नारकाणामुपपाद ॥३४॥ शेषाणा सम्मूर्च्छनम् ॥३५॥ औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि।३६। परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुण प्राक् तैजसात् ॥३८॥अनन्त-गुणे परे ॥३९॥ अप्रतीघाते ॥४०॥ अनादि-सम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्य ॥४३॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भ-सम्मूर्च्छनजमाद्यम् ॥४५॥औपपादिक वैक्रियिकम्॥४६॥ लब्धिप्रत्यय च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभ विशुद्ध-मव्याघाति-चाहारक प्रमत्तसंयतस्यैव।४९।नारक-सम्मूर्च्छिनो

नावगाह ॥१६॥ तन्मध्ये योजन पुष्करम् ॥१७॥ तद्द्विगुण-द्विगुणा ह्लदा पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्य श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-वुद्धि-लक्ष्म्य पल्योपमस्थितयः ससामानिक-परिषत्का ॥१९॥ गङ्गा-सिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता-सीता-सीतोदा-नारी-नर-कान्ता-सुवर्ण-रूप्यकूला-रक्ता-रक्तोदा सरितस्तन्मध्यगा ॥२०॥ द्वयोर्द्वयो पूर्वा पूर्वगा ॥२१॥शेषास्त्वपरगा ॥२२॥ चतुर्दश-नदी-सहस्र-परिवृता गगा-सिन्ध्वादयो नद्य ॥२३॥ भरत पड्विशति-पच-योजन-शत-विस्तार षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥ तद्द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर-वर्षा विदेहान्ता ॥२५॥ उत्तरा दक्षिण-तुल्या ॥२६॥ भरतैरावतयोर्वृद्धि-ह्रासौ पट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥२७॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिता ॥२८॥ एक-द्वि-त्रि-पल्योपम-स्थितयो हैमवतक-हारिवर्षक-दैवकुरवका ॥२९॥ तथोत्तरा ॥३०॥ विदेहेषु-सख्येय-काला ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवति-शत-भाग ॥३२॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्या ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावत-विदेहा कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्य ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्योनिजाना च ॥३९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्याय ॥३॥

तुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥ विजयादिषु द्वि-चरमा ॥२६॥ औपपादिक——मनुष्येभ्य शेपास्तिर्यग्योनय ॥२७॥ स्थितिरसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीपशेषाणा सागरोपम-त्रिपल्योप-मार्द्ध-हीन-मिता ॥२८॥ सौधर्मैशानयो सागरोपमेऽधिके ॥२९॥ सानत्कुमार-माहेन्द्रयो सप्त ॥३०॥ त्रि-सप्त-नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभिरधिकानि तु ॥३१॥ आर-णाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥३३॥ परत परतः पूर्वा पूर्वाऽनन्तरा ॥३४॥ नारकाणा च द्वितीयादिषु ॥३५॥ दश-वर्ष-सहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६॥ भवनेषु च ॥३७॥ व्यन्तराणा च ॥३८॥ परा पल्योपममधिकम् ॥३९॥ ज्योतिष्काणा च ॥४०॥ तदष्ट-भागोऽपरा ॥४१॥ लौका-न्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥४२॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्याय ॥४॥

अजीव-काया धर्माधर्माकाश-पुद्गलाः ॥१॥ द्रव्याणि ॥२॥ जीवाश्च ॥३॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥ रूपिण पुद्गला ॥५॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥ असख्येया प्रदेशा धर्माधर्मैक-जीवानाम् ॥८॥ आकाशस्यानन्ता ॥९॥ सख्येयासख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१०॥ नाणो ॥१३॥ लोकाकाशेऽवगाह ॥१२॥ धर्माधर्मयो कृत्स्ने ॥११॥ एकप्रदेशादिषु भाज्य पुद्गलानाम् ॥१४॥ असख्येय-भागादिषु जीवानाम् ॥१५॥

अधिकरण जीवाजीवा ।७। आद्य सरम्भ-समारम्भारम्भयोग कृत-कारितानुमत-कपाय-विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकश ।८। निर्वतना-निक्षेप-सयोग-निसर्गा द्वि-चतुर्द्वि-त्रिभेदा परम् ॥९॥ तत्प्रदोष-निह्नव-मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञान-दर्शनावरणयो ॥१०॥ दु ख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-परिदेवनान्यात्म-परोभय-स्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥ भूत-व्रत्यनुकम्पादान-सरागसयमादि-योग क्षांति शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥ केवलि-श्रुत-सघ-धर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥१३॥ कपायोदयात्तीव्र-परिणामश्चारित्रमोहस्य ॥१४॥ बह्वारम्भ-परिग्रहत्व नारकस्यायुप ॥१५॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥१६॥ अल्पारम्भ-परिग्रहत्व मानुपस्य ॥१७॥ स्वभाव-मार्दव च ॥ १८॥ नि शील-व्रतित्व च सर्वेपाम् ॥१९॥ सरागसयम-सयमासयमाकामनिर्जरा-बालतपासि दैवस्य ॥२०॥ सम्यक्त्व च ॥२१॥ योगवक्रता विसवादन चाशुभस्य नाम्न ॥२२॥ तद्विपरीत शुभस्य ॥२३॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता-शील-व्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोगसवेगौ शक्तितस्त्याग-तपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्य-करणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन--भक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गभावना प्रवचन-वत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥२४॥ परात्म-निन्दा-प्रशसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥२७॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पष्ठोऽध्याय ॥६॥

भेदा ॥२६॥ स्तेनप्रयोग-तदाहृतादान-विरुद्धराज्यातिक्रम-
हीनाधिकमानोन्मान-प्रतिरूपक व्यवहारा ॥२७॥ परवि
वाहकरणेत्वरिका - परिगृहीतापरिगृहीता-गमनानङ्गक्रीडा-
कामतीव्राभिनिवेशा ॥२८॥ क्षेत्रवास्तु-हिरण्यसुवर्ण-धन-
धान्य-दासीदास-कुप्यप्रमाणातिक्रमा ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्ति-
र्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्रवृद्धि-स्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥ आनयन-प्रे-
ष्यप्रयोग- शब्द-रूपानुपात-पुद्गलक्षेपा ॥३१॥ कन्दर्प-कौ-
त्कुच्य - मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि
॥३२॥ योग-दुःप्रणिधानानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥
अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादान-संस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्य
नुपस्थानानि ॥३४॥ सचित्त-सम्बन्ध-सम्मिश्राभिषव-दुःपक्वा
हारा ॥३५॥ सचित्त-निक्षेपापिधान-परव्यपदेश-मात्सर्य-
कालातिक्रमा ॥३६॥ जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखा-
नुबन्ध-निदानानि ॥३७॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम्
॥३८॥ विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-विशेषात्तद्विशेषः ॥३९॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्याय ॥७॥

मिथ्यादर्शनाविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्धहेतव ॥१॥
सकषायत्वाज्जीव कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्ध.
॥२॥ प्रकृति-स्थित्यनुभाग-प्रदेशास्तद्विधय ॥३॥ आद्यो
ज्ञान - दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम - गोत्रान्तराया
॥४॥ पञ्च-नव-द्व्यष्टाविंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद् द्वि-पञ्च
भेदा यथाक्रमम् ॥५॥ मति-श्रुतावधि-मन पर्यय-केवलानाम्-

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च केवलम् ॥१॥ बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्रमोक्षो मोक्ष ॥२॥ औपशमिकादि-भव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्य ॥४॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद् बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥ ६ ॥ आविद्धकुलालचक्रवद्-व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥८॥ क्षेत्र-काल-गति-लिङ्ग-तीर्थ-चारित्र प्रत्येकबुद्धबोधित - ज्ञानावगाहनान्तर - सङ्ख्याल्पबहुत्वत साध्या ॥९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्याय ॥१०॥

अक्षर-मात्र पद-स्वर-हीन, व्यंजन-संधि-विवर्जित-रेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्य, को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥१॥

दशाध्याये परिच्छिन्ने, तत्त्वार्थे पठिते सति ।
फल स्यादुपवासस्य, भाषित मुनिपुंगवै ॥२॥

तत्त्वार्थ-सूत्र-कर्तार, गृद्ध्रपिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणीन्द्र - सजातमुमास्वामि-मुनीश्वरम् ॥३॥

पढम चउक्के पढम पचमे जाणि पुग्गल तच्च ।
छह सत्तमे हि आस्सव अट्ठमे बधणायव्वा ॥४॥

णवमे सवर णिज्जर दहमे मोक्ख वियाणे हि ।
छह सत्त तच्च भणिय दह सुत्तेण मुणि देहिं ॥५॥

ज सक्कइ त कीरइ ज पण सक्कइ तहेव सद्दहण ।
सद्दहमाणो जीवो, पावइ अजरामर ठाण ॥६॥
तवयरण वयधरण, सजमसरण च जीव-दया-करणम् ।
अन्ते समाहिमरण, चउविह दुक्ख णिवारेई ॥७॥
अरहत भासियत्थ गणहरदेवेहि गथियं सव्व ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवय सिरसा ॥८॥
गुरवो पातु वो नित्य ज्ञान-दर्शन-नायका ।
चारित्रार्णाव-गभीरा मोक्ष-मार्गोपदेशक ॥९॥
कोटिशत द्वादशचैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानिचैव ।
पचाशदष्टौ च सहस्रसख्यामेतद् श्रुतं पंचपदं नमामि ।१०।

इति तत्वार्थसूत्रापरनाम-तत्वार्थाधिगम-मोक्षशास्त्र समाप्तम् ।

भक्तामर स्तोत्र

परिचय

यह सुप्रसिद्ध स्तोत्र है । क्रुद्ध नृपति द्वारा आचार्य मानतुङ्ग को बलपूर्वक पकडवा कर ४८ तालो के अन्दर बन्द करवा दिया गया था । उस समय धर्म की रक्षा और प्रभावना हेतु आचार्य श्री ने भगवान आदिनाथ की इस स्तुति की रचना की थी जिससे ४८ ताले स्वय टूट गये थे और राजा ने क्षमा मागकर उनके प्रति बडी भक्ति प्रदर्शित की थी । भक्तामर का प्रति दिन पाठ समस्त विघ्न बाधाओं का नाशक और सब प्रकार मगलकारक माना जाता है । इसका प्रत्येक श्लोक मत्र मानकर उसकी आराधना भी की जाती है । इसकी अधिक जानकारी के लिए हमारे यहाँ से प्रकाशित 'भक्तामर स्तोत्र' देखे ।

भक्तामरस्तोत्रम्

[श्री मानतुङ्गाचार्य]

भक्तामर-प्रणत-मौलि-मणि-प्रभाणा-
मुद्योतक दलित-पाप-तमो-वितानम् ।
सम्यक्-प्रणम्य जिन-पाद-युग युगादा-
वालम्बन भव-जले पतता जनानाम् ॥१॥
य सस्तुत सकल-वाङ्मय-तत्त्व-बोधा-
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभि सुर-लोकनाथै. ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्त-हरैरुदारै.
स्तोष्ये किलाहमपि त प्रथम जिनेन्द्रम् ॥२॥
बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ
स्तोतु समुद्यत-मतिर्विगत-त्रपोऽहम् ।
बाल विहाय जल-सस्थितमिन्दु-बिम्ब-
मन्य क इच्छति जन सहसा ग्रहीतुम् ॥३॥
वक्तुं गुणान्गुण-समुद्र शशाङ्क-कान्तान्
कस्ते क्षम सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-नक्र-चक्र
को वा तरीतुमलमम्बुनिधि भुजाभ्याम् ॥४॥
सोऽह तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश
कर्तुं स्तव विगत-शक्तिरपि प्रवृत्त. ।
प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्र
नाभ्येति किं निज-शिशो.परिपालनार्थम् ॥५॥

अल्प-श्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्
यत्कोकिलः किल मधौ मधुर विरौति
तच्चारु-चाम्र-कलिका-निकरैक-हेतु ॥ ६ ॥
त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्त-लोकमलि-नीलमशेषमाशु
सूर्यांशु-भिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥ ७ ॥
मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनु-धियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सता नलिनी-दलेषु
मुक्ता-फलद्युतिमुपैति ननूद-बिन्दूः ॥ ८ ॥
आस्तां तव स्तवनमस्त-समस्त-दोष
त्वत्सङ्कथापि जगता दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥ ९ ॥
नात्यद्भुतं भुवन-भूषण भूत-नाथ
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्त
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥ १० ॥
दृष्ट्वा भवन्तमनिमेष-विलोकनीयं
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षु ।

पीत्वा पय शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिन्धो
क्षार जल जल-निधेरसितु क ग्च्छेत् ॥ ११॥
यै शान्त-राग-रुचिभि परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललाम-भूत
तावन्त एव खलु तेऽप्यणव पृथिव्या
यत्ते समानमपर न ही रूपमस्ति ॥ १२॥
वक्त्र क्व ते सुर-नरोरग-नेत्र-हारि
नि.शेष-निर्जित-जगत्त्रितयोपमानम् ।
विम्व कलङ्क-मलिन क्व निशाकरस्य
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश कल्पम् ॥१३॥
सम्पूर्ण-मण्डल-शशाङ्क-कला-कलाप-
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवन तव लङ्घयन्ति ।
ये सश्रितास्त्रिजगदीश्वर-नाथमेक
कस्तान्निवारयति सचरतो यथेष्टम् ॥ १४ ॥
चित्र किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि-
र्नीत मनागपि मनो न विकार-मार्गम् ।
कल्पान्त-काल-मरुता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रि-शिखर चलित कदाचित् ॥१५॥
निर्धूम-वर्तिरपवर्जित-तैल-पूर
कृत्स्न जगत्त्रयमिद प्रकटी-करोषि ।
गम्यो न जातु मरुता चलिताचलानां
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥१६॥

नास्त कदाचिदुपयासि न राहु-गम्य.
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभाव
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र लोके ॥१७॥
नित्योदय दलित-मोह-महान्धकार
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति
विद्योतयज्जगदपूर्व-शशाङ्क-विम्बम् ॥१८॥
किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा
युष्मन्मुखेन्दु-दलितेषु तम.सु नाथ ।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके
कार्यं कियज्जलधरैर्जल-भार-नम्रै: ॥१९॥
ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाश
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेज.स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्व
नैवं तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥
मन्ये वर हरि-हरादय एव दृष्टा
दृष्टेषु येषु हृदय त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्य
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥
स्त्रीणा शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपम जननी प्रसूता ।

सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र-रश्मि
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥
त्वामामनन्ति मुनय परम पुमास-
मादित्य-वर्णममल तमस पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्यु
नान्य शिव शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्था. ॥२३॥
त्वामव्यय विभुमचिन्त्यमसख्यमाद्य
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वर विदित-योगमनेकमेक
ज्ञान-स्वरूपममल प्रवदन्ति सन्त ॥२४॥
बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्
त्व शङ्करोऽसि भुवन-त्रय-शङ्करत्वात् ।
धातासि धीर शिव-मार्ग-विधेर्विधानात्
व्यक्त त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥
तुभ्य नमस्त्रिभुवनार्ति-हराय नाथ
तुभ्य नम क्षिति-तलामल-भूषणाय ।
तुभ्य नमस्त्रिजगत परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधि-शोषणाय ॥२६॥
को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-
स्त्वं सश्रितो निरवकाशतया मुनीश ।
दोषैरुपात्तविविधाश्रय-जात-गर्वै
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥

उच्चैरशोक-तरु-सश्रितमुन्मयूख-

माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।

स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त-तमो-वितानं

बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ॥२८॥

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे

विभ्राजते तव वपु. कनकावदातम् ।

बिम्बं वियद्विलसदंशुलता-वितानं

तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्र-रश्मे. ॥२९॥

कुन्दावदात-चल-चामर-चारु-शोभ

विभ्राजते तव वपु कलधौत-कान्तम् ।

उद्यच्छशाक-शुचि-निर्झर-वारि-धार-

मुच्चैस्तट सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥

छत्र-त्रयं तव विभाति शशाक-कान्त-

मुच्चैः स्थित स्थगित-भानु-कर-प्रतापम् ।

मुक्ता-फल-प्रकर-जाल-विवृद्धशोभ

प्रख्यापयत्त्रिजगत परमेश्वरत्वम् ॥३१॥

गम्भीर-तार-रव-पूरित-दिग्विभाग-

स्त्रैलोक्य-लोक-शुभ-सङ्गम-भूति-दक्षः ।

सद्धर्मराज-जय-घोषण-घोषकः सन्

खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥

मन्दार-सुन्दर-नमेरु-सुपरिजात-

सन्तानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टि-रुद्धा ।

गन्धोद-बिन्दु-शुभ-मन्द-मरु-प्रपाता
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥३३॥
शुम्भत्प्रभा-वलय-भूरि-विभा विभोस्ते
लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ति ।
प्रोद्यद्दिवाकर-निरन्तर-भूरि-संख्या
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम-सौम्याम् ॥३४॥
स्वर्गापवर्ग-गम-मार्ग-विमार्गणेष्ट
सद्धर्म-तत्व-कथनैक-पटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्य-ध्वनिर्भवति ते विशदार्थ-सर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः-प्रयोज्यः ॥३५॥
उन्निद्र-हेम-नव-पंकज-पुञ्ज-कान्ती
पर्युल्लसन्नख-मयूख-शिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्त.
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥
इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र
धर्मोपदेशन-विधौ-न तथा परस्य ।
यादृक्प्रभा दिनकृत. प्रहतान्धकारा
तादृक्कुतो ग्रह-गणस्य विकाशिनोऽपि ॥३७॥
श्च्योतन्मदाविल-विलोल-कपोल-मूल-
मत्त-भ्रमद्-भ्रमर-नाद-विवृद्ध-कोपम् ।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३८॥

भिन्नेभ-कुम्भ-गलदुज्ज्वल-शोणिताक्त-
मुक्ता-फल-प्रकर-भूषित-भूमि-भागः ।
बद्ध-क्रमः क्रम-गत हरिणाधिपोऽपि
नाक्रामति क्रम-युगाचल-संश्रितं ते ॥३९॥
कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पं
दावानल ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव संमुखमापतन्तं
त्वन्नाम-कीर्तन-जल शमयत्यशेषम् ॥४०॥
रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कण्ठ-नीलं
क्रोधोद्धत फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।
आक्रामति क्रम-युगेण • निरस्त-शंक-
स्त्वन्नाम-नाग-दमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥
वल्गत्तुरङ्ग-गज-गर्जित-भीमनाद-
माजौ बल बलवतामपि भूपतीनाम् ।
उद्यद्दिवाकर-मयूख-शिखापविद्धं
त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥४२॥
कुन्ताग्र-भिन्न-गज-शोणित-वारिवाह-
वेगावतार-तरणातुर-योध-भीमे ।
युद्धे जय विजित-दुर्जय-जेय-पक्षा-
स्त्वत्पाद-पकज-वनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥
अम्भोनिधौ क्षुभित-भीषण-नक्र-चक्र-
पाठीन-पीठ-भय-दोल्वण-वाडवाग्नौ ।

भक्तामर—महिमा

श्री भक्तामर का पाठ, करो नित प्रात, भक्ति मन लाई।
सब सकट जायें नशाई॥

जो ज्ञान- मान—मतवारे थे, मुनि मानतु ग से हारे थे।
उन चतुराई से नृपति लिया, बहकाई॥ सब सकट०॥ १॥

मुनि जी को नृपति बुलाया था, सैनिक जा हुक्म सुनाया था।
मुनि वीतराग को आज्ञा नही सुहाई॥ सब सकट॥ २।

उपसर्ग घोर तव आया था, बलपूर्वक पकड मगाया था।
हथकडी वेडियो से तन दिया बधाई॥ सब मकट०॥ ३॥

मुनि काराग्रह भिजवाये थे, अडतालिस ताले लगाये थे।
क्रोधित नृप बाहर पहरा दिया बिठाई॥ सब सकट०॥ ४॥

मुनि शान्तभाव अपनाया था, श्री आदि नाथ को ध्याया था।
हो ध्यान—मग्न भक्तामर दिया बनाई॥ सब सकट०॥ ५॥

सब बन्धन टूट गये मुनि के, ताले सब स्वय खुले उनके।
काराग्रह से आ बाहर दिये दिखाई॥ सब सकट०॥ ६॥

राजा नत होकर आया था, अपराध क्षमा करवाया था।
मुनि के चरणो मे अनुपम भक्ति दिखाई॥ सब सकट०॥ ७॥

जो पाठ भक्ति से करता है, नित ऋषभ-चरण चित धरता है।
जो ऋद्धि-मन्त्र का विधिवत जाप कराई॥ सब सकट॥ ८॥

भय विघ्न उपद्रव टलते हैं विपदा के दिवस बदलते है।
सब मन वाञ्छित हो पूर्ण, शान्ति छा जाई॥ सब सकट॥ ९॥

जो वीतराग आराधन है, आतम उन्नति का साधन है।
उससे प्राणी का भव वन्धन कट जाई॥ सब सकट॥ १०॥

"कौशल" सुभक्ति को पहिचानो, संसार-दृष्टि बन्धन जानो।
लो भक्तामर से आत्म-ज्योति प्रकटाई॥ सब सकट॥ ११॥

महावीराष्टक-स्तोत्रम्

[कविवर भागचन्द]

शिखरिणी छन्द

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचित
समं भान्ति ध्रौव्य व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन परो भानुरिव यो
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥१॥

अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द-रहितं
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥२॥

नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट-मणि-भा जाल जटिलं
लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृताम्।
भवज्ज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥३॥

यदर्चा-भावेन प्रमुदित-मना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुण-गण-समृद्धः सुख-निधिः।
लभन्ते सद्भक्ताः शिव-सुख समाजं किमुतदा
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥४॥

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत-तनुर्ज्ञान-निवहो
विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः।

अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोद्भुत-गतिर्
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥५॥
यदीया वाग्गङ्गा विविध-नय-कल्लोल-विमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनता या स्नपयति ।
इदानीमप्येषा बुध-जन-मरालै परिचिता
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥६॥
अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन-जयी काम-सुभट
कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशम-पद-राज्याय स जिन
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥७॥
महामोहातंक-प्रशमन-पराकस्मिक-भिषक्
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमा मंगलकर ।
शरण्य साधूनां भव-भयभृतामुत्तमगुणो
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥८॥
महावीराष्टक स्तोत्र भक्त्या 'भागेन्दु' ना कृतम् ।
य. पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमा गतिम् ॥९॥

चौबीसवें तीर्थंकर महावीर के विषय मे महत्वपूर्ण बातें

नाम—वर्द्धमान [सन्मति, वीर, अतिवीर, महावीर] ।
जन्मस्थान—क्षत्रिय कुण्डग्राम [कुडलपुर-वैशाली] विहार ।
पिता—सिद्धार्थ । माता—त्रिशला [प्रियकारिणी] ।
वश—ज्ञातृ वशीय क्षत्रिय । गोत्र—काश्यप । चिन्ह—सिंह
जन्म-तिथि—चैत्र शुक्ला १३ ई० पू० ५९९ ।
दीक्षातिथि—मगसिर वदी १० ई० पू० ५७० ।

तप-काल—१२ वर्ष, ५ मास, १५ दिन।

कैवल्य प्राप्ति—वैशाख शुक्ल १० ई० पू० ५५७।

स्थान—विहार प्रान्त, जृम्भक गाव के पास ऋजुकूला नदी-तट

उपदेश काल—२९ वर्ष ५ मास, २० दिन।

निर्वाण-तिथि—कार्तिक कृष्ण ३० ई० पू० ५२७।

निर्वाण भूमि—पावापुरी (विहार)। आयु—लगभग ७२ वर्ष।

पुरुरवा से लेकर भगवान महावीर के ३४ भव

१ पुरुरवा भील	२ पहले स्वर्ग मे देव	३ भरत पुत्र मारीचि
४ पाँचवें स्वर्ग मे देव	५ जटिल ब्राह्मण	६ पहले स्वर्ग मे देव
७ पुष्यमित्र ब्राह्मण	८ पहले स्वर्ग-देव	९ अग्नि सम-ब्राह्मण
१० तीसरे स्वर्ग-देव	११ अग्नि मित्र-ब्राह्मण	१२ चौथे स्वर्ग मे देव
१३ भारद्वाज ब्राह्मण	१४ चौथे स्वर्ग-देव	१५ मनुष्य
१६ स्थावर ब्राह्मण	१७ चौथे स्वर्ग मे देव	१८ विश्वनदी
१९ दशवें स्वर्ग देव	२० त्रिपृष्ठ अर्धचक्री	२१ सातवे नरक मे
२२ सिंह	२३ पहले नरक मे	२४ सिंह
२५ पहले स्वर्ग-देव	२६ विद्याधर	२७ सातवे स्वर्ग मे देव
२८ हरिषेण राजा	२९ दशवे स्वर्ग मे देव	३० चक्रवर्ती प्रियमित्र
३१ १२वे स्वर्ग-देव	३२ राजा नदन	३३ सोलहवें स्वर्ग मे इन्द्र

३४ तीर्थंकर महावीर। इनके मध्य असख्यात वर्षों तक नरको, त्रस स्थावर योनियो, इतर निगोद मे जो भव ग्रहण किये उनकी गिनती नही हो सकती॥

मंगलाष्टक स्तोत्र भाषा

संघसहित श्रीकुदकुंद गुरु, वंदनहेत गये गिरनार।
वाद पर्यो तहं संशयमतिसों, साक्षी वदी अंबिकाकार ।।
'सत्य पंथ निरग्रंथ दिगंबर,' कही सुरी तहँ प्रगट पुकार।
सो गुरु देव वसौ उर मेरे, विघनहरण मंगल करतार ।१।।
स्वामी समंतभद्र मुनिवरसों, शिवकोटी हठ कियो अपार।
वंदन करो शंभुपिंडीको, तब गुरु रच्यो स्वयंभू सार ।।
वंदन करत पिंडिका फाटी,प्रगट भये जिनचंद्र उदार ।। सो०
श्रीअकलंकदेव मुनिवरसों, वाद रच्यो जहँ बौद्ध विचार।
तारादेवी घट में थापी, पटके ओट करत उच्चार ।।
जीत्यो स्यादवादबल मुनिवर,बौद्धबोध तारा-मदटार।। सो०
श्रीमत विद्यानंदि जबै, श्रीदेवागमथुति सुनी सुधार।
अर्थहेत पहुंच्यो जिनमंदिर, मिल्यो अर्थ तहँ सुखदातार ।।
तब व्रत परमदिगम्बरको धर,परमतको कीनो परिहार।। सो०
श्रीमत मानतुंग मुनिवर पर भूप कोप जब कियो गंवार।
बंद कियो तालों में तबही, भक्तामर गुरु रच्यो उदार ।।
चक्रेश्वरी प्रगट तब ह्वै कैं, बंधनकाट कियो जयकार ।।सो०
श्रीमत वादिराज मुनिवरसौं,कह्यो कुष्टि भूपति जिहँ वार।
श्रावक सेठ कह्यो तिह अवसर, मेरे गुरु कंचन तनधार।।
तबही एकीभाव रच्यो गुरु,तन सुवरणदुति भयो अपार ।।सो०
श्रीमत कुमुदचन्द्र मुनिवरसों,वाद पर्यो जह सभा मझार।
तब ही श्रीकल्यानधाम थुति, श्री गुरु रचना रची अपार ।।
तब प्रतिमा श्रीपार्श्वनाथकी,प्रगट भई त्रिभुवन जयकार ।सो०

श्रीमत अभयचन्द्र गुरुसों जब दिल्लीपति इमि कही पुकार।
कै तुम मोहि दिखावहु अतिशय कै पकरों मेरो मत लार॥
तव गुरु प्रगट अलौकिक अतिशय तुरत हर्यो ताको मदभार।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघनहरण मंगल करतार॥

दोहा—विघन हरण मंगल करण वांछित फलदातार।
'वृन्दावन' अष्टक रच्यो, करौ कंठ सुखकार॥

भक्तामर स्तोत्र (भाषा)

[अनुवादक श्री पं० हेमराज जी]

आदिपुरुष आदीश जिन, आदि सुविधि करतार।
धरम-धुरंधर परमगुरु नमो आदि अवतार॥

सुर-नत-मुकुट रतन-छवि करैं
अंतर पाप-तिमिर सब हरैं।
जिनपद वंदो मन वच काय
भव-जल-पतित उधरन-सहाय॥१॥

श्रुत-पारग इंद्रादिक देव,
जाकी थुति कीनी कर सेव।
शब्द मनोहर अरथ विशाल,
तिस प्रभु की वरनों गुन-माल॥२॥

विबुध-वंद्य-पद मैं मति-हीन,
हो निलज्ज थुति-मनसा कीन।

जल-प्रतिबिंब वृद्ध को गहै,
शशि-मंडल बालक ही चहै ॥३॥
गुन-समुद्र तुम गुन अविकार,
कहत न सुर-गुरु पावै पार।
प्रलय-पवन-उद्धत जल-जन्तु,
जलधि तिरै को भुज बलवन्तु ॥४॥
सो मैं शक्ति-हीन थुति करूँ,
भक्ति-भाव-वश कछु नहि डरूँ।
ज्यों मृगि निज-सुत पालन हेतु,
मृगपति सन्मुख जाय अचेत ॥५॥
मैं शठ सुधी हँसन को धाम,
मुझ तव भक्ति बुलावै राम।
ज्यों पिक अंब-कली परभाव,
मधु-ऋतु मधुर करै आराव ॥६॥
तुम जस जंपत जन छिनमांहि,
जनम जनम के पाप नशांहि।
ज्यों रवि उगै फटै तत्काल,
अलिवत नील निशा-तम-जाल ॥७॥
तव प्रभावतैं कहूँ विचार,
होसी यह थुति जन-मन-हार।
ज्यों जल-कमल पत्रपै परै,
मुक्ताफल की द्युति विस्तरै ॥८॥

तुम गुन-महिमा हत-दुख-दोष,
सो तो दूर रहो सुख-पोष।
पाप-विनाशक है तुम नाम,
कमल-विकाशी ज्यो रवि-धाम ॥९॥

नहिं अचभ जो होहिं तुरन्त,
तुमसे तुम गुण वरणत सन्त।
जो अधीन को आप समान,
करै न सो निदित धनवान ॥१०॥

इकटक जन तुमको अविलोय,
अवर-विषै रति करै न सोय।
को करि क्षीर-जलधि जल पान,
क्षार नीर पीवै मतिमान ॥११॥

प्रभु तुम वीतराग गुण-लीन,
जिन परमाणु देह तुन कीन।
है तितने ही ते परमाणु,
यातै तुम सम रूप न आनु ॥१२॥

कहँ तुम मुख अनुपम अविकार,
सुर-नर-नाग-नयन-मनहार।
कहाँ चन्द्र-मंडल-सकलक,
दिन मे ढाक-पत्र सम रक ॥१३॥

पूरन चन्द्र-ज्योति छबिवत,
तम गन तीन जगत लघत।

एक नाथ त्रिभुवन आधार,
तिन विचरत को करै निवार ॥१४॥
जो सुर-तिय विभ्रम आरम्भ,
मन न डिग्यो तुम तौ न अचंभ।
अचल चलावै प्रलय समीर,
मेरु-शिखर डगमगै न धीर ॥१५॥
धूमरहित बाती गत नेह,
परकाशै त्रिभुवन-घर एह।
बात-गम्य नाहीं परचण्ड,
अपर दीप तुम बलो अखड ॥१६॥
छिपहु न लुपहु राहुकी छांहि,
जग परकाशक हो छिनमाहि।
घन अनवर्त दाह विनिवार,
रवितै अधिक धरो गुणसार ॥१७॥
सदा उदित विदलित मनमोह,
विघटित मेघ राहु अविरोह।
तुम मुख-कमल अपूरव चन्द,
जगत-विकाशी जोति अमद ॥१८॥
निश-दिन शशि रवि को नहिं काम,
तुम मुख-चन्द हरै तम-धाम।
जो स्वभावतैं उपजै नाज,
सजल मेघ तैं कौनहु काज ॥१९॥

जो सुबोध सोहै तुम माहिं,
हरि हर आदिक में सो नाहिं।
जो द्युति महा-रतन में होय,
काच-खंड पावै नहिं सोय ॥२०॥

नाराच छन्द

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया।
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया॥
कछू न तोहि देखके जहां तुही विशेखिया।
मनोग चित्त-चोर और भूल हू न पेखिया॥२१॥

अनेक पुत्रवंतिनी नितंबिनी सपूत हैं।
न तो समान पुत्र और माततैं प्रसूत हैं॥
दिशा धरंत तारिका अनेक कोटि को गिनै।
दिनेश तेजवंत एक पूर्व ही दिशा जनै॥२२॥

पुरान हो पुमान हो पुनीत पुण्यवान हो।
कहें मुनीश अंधकार-नाश को सुभान हो॥
महंत तोहि जानके न होय वश्य कालके।
न और मोहि मोखपंथ देय तोहि टालके॥२३॥

अनन्त नित्य चित्तकी अगम्य रम्य आदि हो।
असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो॥
महेश कामकेतु योग ईश योग ज्ञान हो।
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो॥२४॥

तुही जिनेश बुद्ध है सुबुद्धिके प्रमानतैं ।
तुही जिनेश शंकरो जगत्त्रये विधानतैं ।।
तुही विधात है सही सुमोखपंथ धारतैं ।
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थ के विचारतैं ।।२५।।
नमो करूँ जिनेश तोहि आपदा निवार हो ।
नमो करूँ सुभूरि-भूमि -लोकके सिंगार हो ।।
नमो करूँ भवाब्धि-नीर-राशि-शोष-हेतु हो ।
नमो करूँ महेश तोहि मोखपथ देतु हो ।२६।।

चौपई (१५ मात्रा)

तुम जिन पूरन ,गुन-गन भरे,
दोष गर्वकरि तुम परिहरे ।
और देव-गण आश्रय पाय,
स्वप्न न देखे तुम फिर आय ।।२७।।
तरु अशोक-तर किरन उदार,
तुम तन शोभित है अविकार ।
मेघ निकट ज्यों तेज फुरत,
दिनकर दिपै तिमिर निहनत ।।२८।।
सिंहासन मणि-किरण-विचित्र,
तापर कंचन-वरन पवित्र ।
तुम तन शोभित किरन विथार,
ज्यों उदयाचल रवि तम-हार ।।२९।।

कु द-पुहुप-सित-चमर ढुरंत,
कनक-वरन तुम तन शोभत।
ज्यों सुमेरु-तट निर्मल कांति,
झरना झरैं नीर उमगांति ॥३०॥
ऊँचे रहैं सूर दुति लोप,
तीन छत्र तुम दिपैं अगोप।
तीन लोक की प्रभुता कहैं,
मोती-झालरसों छवि लहैं ॥३१॥
दुंदुभि-शब्द गहर गंभीर,
चहुँ दिशि होय तुम्हारे धीर।
त्रिभुवन-जन शिव-संगम करै,
मानूँ जय जय रव उच्चरैं॥३२॥
मंद पवन गंधोदक इष्ट,
विविध कल्पतरु पुहुप-सुवृष्ट।
देव करैं विकसित दल सार,
मानो द्विज-पंकति अवतार ॥३३॥
तुम तन-भामंडल जिनचन्द,
सब दुतिवंत करत है मन्द।
कोटि शंख रवि तेज छिपाय,
शशि निर्मल निशि करे अछाय ॥३४॥
स्वर्ग-मोख-मारग-संकेत,
परम-धरम उपदेशन हेत।

दिव्य वचन तुम खिरें अगाध,
सब भाषा-गर्भित हित साध ॥३५॥

दोहा

विकसित-सुवरन-कमल-दुति, नख-दुति मिलि चमकाहिं।
तुम पद पदवी जहं धरो, तहं सुर कमल रचाहिं ॥३६॥

ऐसी महिमा तुम विषै, और धरै नहिं कोय।
सूरज मे जो जोत है, नहिं तारा-गण होय ॥३७॥

षट्पद

मद-अवलिप्त-कपोल-मूल अलि-कुल झकारें।
तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोध उद्धत अति धारें ॥
काल-वरन विकराल, कालवत सनमुख आवै।
ऐरावत सो प्रवल सकल जन भय उपजावै ॥
देखि गयद न भय करै तुम पद-महिमा लीन।
विपति-रहित सपति-सहित वरतै भयत अदीन ॥३८॥

अति मद-मत्त-गयद कुंभ-थल नखन विदारै।
मोती रक्त समेत डारि भूतल सिंगारै ॥
बाकी दाढ विशाल वदन मे रसना लोलै।
भीम भयानक रूप देख जन थरहर डोलै ॥
ऐसे मृग-पति पग-तलै जो नर आयो होय।
शरण गये तुम चरण की बाधा करै न सोय ॥३९॥

प्रलय-पवनकर उठी आग जो तास पटतर ।
वमै फुलिंग शिखा उतग परजलै निरतर ॥
जगत समस्त निगल्ल भस्म करहैगी मानो ।
तडतडाट दव-अनल जोर चहुँ-दिशा उठानो ॥
सो इक छिन मे उपशमै नाम-नीर तुम लेत ।
होय सरोवर परिनमै विकसित कमल समेत ।४०॥

कोकिल-कंठ-समान श्याम-तन क्रोध जलन्ता ।
रक्त-नयन फुकार मार विष-कण उगलता ॥
फण को ऊचा करे वेग ही सन्मुख धाया ।
तव जन होय निशक देख फणपतिको आया ॥
जो चापै निज पगतलै व्यापै विप न लगार ।
नाग-दमनि तुम नामकी है जिनके आधार ॥४१॥

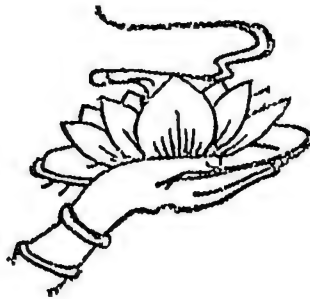
जिस रन-मांहि भयानक रव कर रहे तुरगम ।
घनसे गज गरजाहिं मत्त मानो गिरि जंगम ॥
अति कोलाहल मांहि बात जहँ नांहि सुनीजै ।
राजनको परचड, देख बल धीरज छीजै ॥
नाथ तिहारे नामतै सो छिनमांहि पलाय ।
ज्यो दिनकर परकाशतै अन्धकार विनशाय ॥४२॥

मारै जहां गयद कुभ हथियार विदारै ।
उमगै रुधिर प्रवाह वेग जलसम विस्तारै ॥

होय तिरन असमर्थ महाजोधा बलपूरे ।
तिस रनमे जिन तोर भक्त जे हैं नर सूरे ।।
दुर्जय अरिकुल जीतके जय पावे निकलक ।
तुम पद पकज मन बसै ते नर सदा निशक ।।४३।।
नक्र चक्र मगरादि मच्छकरि भय उपजावै ।
जामै बड़वा अग्नि दाहतै नीर जलावै ।।
पार न पावै जास थाह नहि लहिये जाकी ।
गरजै अतिगभीर, लहरकी गिनति न ताकी ।।
सुखसो तिरै समुद्रको, जे तुम गुन सुमराहि ।
लोल कलोलनके शिखर, पार यान ले जाहि ।।४४।।
महा जलोदर रोग, भार पीडित नर जे हैं ।
वात पित्त कफ कुष्ट, आदि जो रोग गहै हैं ।।
सोचत रहैं उदास, नाहि जीवनकी आशा ।
अति घिनावनी देह, धरै दुर्गंध निवासा ।।
तुम पद-पकज-धूल को, जो लावै निज अग ।
ते नीरोग शरीर लहि, छिनमे होय अनग ।।४५।।
पाव कंठतें जकर बाध, साकल अति भारी ।
गाढी बेडी पैर मांहि, जिन जांघ विदारी ।।
भूख प्यास चिता शरीर दुख जे विललाने ।
सरन नाहि जिन कोय भूपके बदीखाने ।।
तुम सुमरत स्वयमेव ही बंधन सब खुल जाहि ।
छिनमे ते सपति लहैं, चिता भय विनसाहि ।।४६।।

महामत्त गजराज और मृगराज दवानल ।
फणपति रण परचड नीरनिधि रोग महावल ।।
वधन ये भय आठ डरपकर मानो नाशै ।
तुम सुमरत छिनमाहिं अभय थानक परकाशै ।।
इस अपार ससार मे शरन नाहिं प्रभु कोय ।
यातै तुम पदभक्तको भक्ति सहाई होय ।।४७।।

यह गुनमाल विशाल नाथ तुम गुनन सँवारी ।
विविधवर्णमय पुहुप गूथ मै भक्ति विथारी ।।
जे नर पहिरैं कठ भावना मनमे भावै ।
मानतुग ते निजाधीन शिवलक्ष्मी पावै ।।
भाषा भक्तामर कियो, हेमराज हित हेत ।
जे नर पढै सुभावसो, ते पावै शिवखेत ।।४८।।



कल्याण-मंदिर स्तोत्र (भाषा)

[कल्याण मन्दिर सस्कृत स्तोत्र के रचयिता श्री कुमुदचन्द्राचार्य हैं। इसमे भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति होने से इसका नाम पार्श्वनाथ स्तोत्र भी है परन्तु स्तोत्र 'कल्याण मन्दिर' शब्दो से प्रारम्भ होने के कारण इसका यही नाम पड गया है। कहा जाता है कि उज्जयिनी मे वादविवाद मे इसके प्रभाव से एक अन्य देव की मूर्ति से श्री पार्श्वनाथ की प्रतिमा प्रकट हो गयी थी। इस स्तोत्र की अपूर्व महिमा मानी गयी है। इसके पाठ और जाप से समस्त विघ्न बाधायें दूर होती हैं तथा सुख शान्ति मिलती है।

दोहा—परम-ज्योति परमात्मा, परम-ज्ञान परवीन ।
वंदूं परमानद मय घट-घट-अन्तर-लीन ॥१॥

निर्भय करन परम-परधान । भव-समुद्र-जल-तारन-यान ॥
शिव-मंदिर अघ-हरन अनिंद । बंदहु पास-चरन अरविन्द ॥
कमठ-मान-भंजन वर-वीर । गरिमा-सागर गुन-गंभीर ॥
सुर-गुरु पार लहैं नहिं जास । मैं अजान जंपू जस तास ॥२॥
प्रभु-स्वरूप अति अगम अथाह । क्यों हम-सेती होय निवाह ॥
ज्यों दिन अंध उलूको पोत,कहि न सकै रवि-किरण-उदोत।३।
मोह-हीन जाने मनमांहि । तोहु न तुम गुन वरने जांहि ॥
प्रलय-पयोधि करै जल बौन,प्रगटहि रतन गिनै तिहि कौन ।४।
तुम असंख्य निर्मल गुणखान । मैं मतिहीन कहूँ निज बान ॥
ज्यों बालक निज बांह पसार । सागर परमित कहै विचार ।५।

जे जोगीन्द्र करहिं तप-खेद । तऊ न जानहिं तुम गुनभेद
भक्तिभाव मुझ मन अभिलाख । ज्यो पछी बोलै निज भाखा।६
तुम जस-महिमा अगम अपार । नाम एक त्रिभुवन-आधार ॥
आवै पवन पदमसर होय गीषम-तपन निवारै सोय ॥७॥
तुम आवत भवि-जन घटमांहि ।कर्मनि-बन्ध शिथिल ह्वै जांहि
ज्यो चन्दन-तरु बोलहिं मोर । डरहिं भुजग लगे चहु ओर ।८।
तुम निरखत जन दीनदयाल । सकटतै छूटे तत्काल ॥
ज्यो पशु घेर लेहिं निशि चोर । ते तज भागहि देखत भोर ।९
तू भविजन-तारक किमि होहि । ते चितधार तिरहिं ले तोहि ।
यह ऐसै कर जान स्वभाव तिरहिं मसक ज्यो गर्भित बाव ।१०
जिह सब देव किये वश वाम । तै छिन मे जीत्यो सो काम ॥
ज्यो जल करै अगनि-कुल हान । बडवानल पीवै सो पान ॥११।
तुम अनन्त गरवा गुन लिए । क्योकर भक्ति धरो निज हिये ।
ह्वै लघुरूप तिरहिं ससार । यह प्रभु महिमा अगम अपार ।१२।
क्रोध निवार कियो मन शात । कर्म-सुभट जीते किहि भांत ।
यह पटतर देखहु ससार । नील विरछ ज्यो दहै तुषार ॥१३॥
मुनिजन हिये कमल निज टोहि ।सिद्धरूप सम ध्यावहि तोहि ॥
कमल-कर्णिका बिन-नहिं और ।कमल बीज उपजन की ठौर।१४
जब तुव ध्यान धरै मुनि कोय । तब विदेह-परमातम होय ॥
जैसे धातु शिला-तनु त्याग । कनक स्वरूप धवै जब आग ।१५।
जाके मन तुम करहु निवास । विनशि जाय क्यो विग्रह तास ॥
ज्यो महत बिच आवे कोय । विग्रहमूल निवारै सोय ॥१६॥

करहिं विबुध जे आतमध्यान । तुम प्रभावतें होय निधान ॥
जैसे नीर सुधा अनुमान । पीवत विष-विकारकी हान ॥१७॥
तुम भगवन्त विमल गुणलीन । समल रूप मानहिं मतिहीन ॥
ज्यो नीलिग्रा रोग दृग गहै । वर्ण विवर्ण शखसों कहै ॥१८॥
दोहा—निकट रहत उपदेश सुन तरुवर भयो अशोक ।
ज्यों रवि ऊगत जीव सब, प्रगट होत भुविलोक ॥१९॥
सुमनवृष्टि ज्यो सुर करहिं, हेठ बीठमुख सोहिं ।
त्यो तुम सेवत सुमनजन बध अधोमुख होहिं ॥२०॥
उपजी तुम हिय उदधितें, वाणी सुधा समान ।
जिहँ पीवत भविजन लहहिं, अजर अमर-पदथान ॥२१॥
कहहिं सार तिहुँ लोककी, ये सुर-चामर दोय ।
भावसहित जो जिन नमें, तिहँ गति ऊरध होय ॥२२॥
सिंहासन गिरिमेरु सम, प्रभु धुनि गरजत घोर ।
श्याम सुतनु घनरूप लखि, नाचत भविजन मोर ॥२३॥
छवि-हत होत अशोक दल, तुम भामंडल देख ।
वीतराग के निकट रह रहत न राग विशेष ॥२४॥
सीख कहै तिहुँ लोक को ये सुर दुंदुभि-नाद ।
शिवपथ-सारथि-वाह जिन, भजहु तजहु परमाद ॥२५॥
तीन छत्र त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छबि देत ।
त्रिविध रूप धर मनहु शशि सेवत नखत समेत ॥२६॥

पद्धरि छन्द

प्रभु तुम शरीर दुति रतन जेम ।
परताप पुंज जिम शुद्ध हेम ॥

अति धवल सुजस रूपा समान।
तिनके गढ तीन विराजमान ॥२७॥
सेवहिं सुरेन्द्र कर नमत माल।
तिन सीस मुकुट तज देहिं माल॥
तुम चरण लगत लहलहे प्रीति।
नहिं रमहिं और जन सुमन रीति ॥२८॥
प्रभु भोग-विमुख तन गरम दाह।
जन पार करत भवजल निवाह॥
ज्यो माटी - कलश सुपक्व होय।
लेभार अधोमुख तिरहिं तोय ॥२९॥
तुम महाराज निरधन निराश।
तज विभव विभव सब जगप्रकाश ॥
अक्षर स्वभाव सुलिखें न कोय।
महिमा भगवत अनत सोय ॥३०॥
कर कोप कमठ निज बैर देख।
तिन करी धूलि वरषा विशेष।
प्रभु तुम छाया नहिं भई हीन।
सो भयो पापि लपट मलीन ॥३१॥
गरजत घोर घन अंधकार।
चमकंत विज्जु जल मुसल-धार॥
वरषत कमठ धर ध्यान रुद्र।
दुस्तर करन्त निज भव-समुद्र ॥३२॥

वास्तु छन्द

मेघमालो मेघमाली आप बल फोरि। भेजे तुरत पिशाच-गण, नाथ पास उपसर्ग कारण। अग्नि जाल झलकंत मुख, धुनिकरत जिमि मत्तवारण। कालरूप विकराल तन, मुंडमाल हित कंठ। ह्वै निशक वह रक निज, करै कर्म दृढगंठ।३३॥

चौपाई

जे तुम चरण-कमल तिहुँकाल, सेवहिं तज माया जंजाल।
भाव भगति मन हरष अपार, धन्य-धन्य जग तिन अवतार।३४
भवसागर मे फिरत अजान, मैं तुम सुजस सुन्यो नहि कान।
जो प्रभु-नाम-मत्र मन धरै, तासों विपति भुजगम डरै।३५।
मन-वांछित फल जिनपद मांहि, मैं पूरब भव पूजे नाहिं।
माया-मगन फिर्यो अज्ञान,करहिं रंक-जन मुझ अपमान।३६।
मोहतिमिर छायो दृग मोहि, जन्मान्तर देख्यो नहि तोहि।
तो दुर्जन मुझ संगति गहै, मरम छेदके कुवचन कहैं।३७।
सुन्यो कान जस पूजे पाय, नैनन देख्यो रूप अघाय।
भक्ति हेतु न भयो चित चाव,दुखदायक किरिया विन भाव३८
महाराज शरणागत पाल, पतित-उधारण दीनदयाल।
सुमरन करहुं नाय निज शीश,मुझ दुख दूर करहु जगदीश।३९
कर्म-निकदन-महिमा सार, अशरण-शरण सुजस विस्तार।
नहि सेये प्रभु तुमरे पाय, तो मुझ जन्म अकारथ जाय।४०।
सुरगन-वंदित दया-निधान, जग-तारण जगपति अनजान।
दुख-सागरतै मोहि निकासि, निर्भय थान देहु सुखरासि।४१।

मैं तुम चरण कमल गुणगाय, बहु-विधि भक्ति करी मनलाय।
जनम-जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवाफल दीजै मोहि ।४२।

दोधकात वेसरी छद—षट्पद ।

इहविधि श्री भगवंत, सुजस जे भविजन भाषहिं।
ते जिन पुण्यभडार, संचि चिर-पाप प्रणासहिं ॥
रोम-रोम हुलसति, अग प्रभु-गुण मन ध्यावहिं।
स्वर्ग संपदा भुंज वेग पंचमगति पावहिं ॥४३॥
यह कल्याणमंदिर कियो, कुमुदचंद्रकी वुद्धि।
भाषा कहत 'बनारसी' कारण समकित-शुद्धि ॥४४॥

इस प्रकार कल्याणमन्दिर का कविवर बनारसीदास जी कृत भाषानुवाद समाप्त हुआ।

आचार्य वादिराज

आपकी गणना महान् आचार्यों मे की जाती है। आप महान् वादी विजेता और कवि थे। आपकी पार्श्वनाथ चरित्र, यशोधर चरित्र, एकीभाव स्तोत्र, न्याय विनिश्चय विवरण, प्रमाण निर्णय ये पाच कृतियाँ प्रसिद्ध हैं। आपका समय विक्रम की ११वी शताब्दी माना जाता है। आपका चोलुक्य नरेश जयसिंह (प्रथम) की सभा मे बडा सम्मान था। 'वादिराज' यह नाम नही वरन् पदवी है। प्रख्यात वादियो मे उनकी गणना होने से वे वादिराज के नाम से प्रसिद्ध हुए।

निस्पृही आचार्य श्री वादिराज ध्यान मे लीन थे। कुछ द्वेषी व्यक्तियो ने उन्हें कुष्ट-ग्रस्त देखकर राजसभा मे जैनमुनियो का उपहास किया जिसे जैनधर्म प्रेमी राजश्रेष्ठी सहन न कर सके और भावावेश मे कह उठे कि हमारे मुनिराज की काया तो स्वर्ण जैसी सुन्दर होती है। राजा ने अगले दिन महाराज के दर्शन करने का

विचार रखा। सेठ ने महाराज से सारा विवरण स्पष्ट कह कर धर्मरक्षा की प्रार्थना की। महाराज ने धर्म रक्षा और प्रभावना हेतु एकीभाव स्तोत्र की रचना की जिससे उनका शरीर वास्तव मे स्वर्ण सदृश हो गया। राजा ने मुनिराज के दर्शन करके और उनके रूप को देखकर चुगल-खोरो को दण्ड दिया। परन्तु उत्तम क्षमाधारक मुनिराज ने राजा को सब बात समझा कर तथा सबका भ्रम दूर कर सबको क्षमा करा दिया। इस स्तोत्र का श्रद्धा एव पूर्ण मनोयोग पूर्वक पाठ करने से समस्त व्याधिया दूर होती हैं तथा सारी मनो-कामनाए पूर्ण होती है।

एकीभावस्तोत्र भाषा

कविवर भूधरदास जी कृत भाषानुवाद

दोहा—वादिराज मुनिराजके, चरणकमल चित लाय।
भाषा एकीभावकी, करूँ स्वपर सुखदाय ॥१॥

रोला छन्द अथवा "अहो जगत गुरुदेव०" विनती की चालमे।

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी।
सो मुझ कर्मप्रबंध करत भव भव दुख भारी ॥
ताहि तिहारी भक्ति जगतरवि जो निरवारै।
तो अब और कलेश कौन सो नाहि विदारै ॥१॥
तुम जिन जोतिस्वरूप दुरित अँधियारि निवारी।
सो गणेश गुरु कहैं तत्त्व-विद्याधन-धारी ॥
मेरे चित घर माहि बसौ तेजोमय यावत।
पापतिमिर अवकाश तहां सो क्योंकरि पावत ॥२॥
आनद-आंसू-वदन धोय तुमसो चित आने।
गदगद सुरसो सुयश मन्त्र पढि पूजा ठानै ॥

ताके बहुविधि व्याधि व्याल चिरकाल निवासी।
भाजे थानक छोड़ देह बांबइके वासी ॥३॥
दिवितैं आवन हार भये भविभाग उदयबल।
पहलेही सुर आय कनकमय कीय महीतल ॥
मनगृह-ध्यान-दुवार आय निवसो जगनामी।
जो सुवरन तन करो कौन यह अचरज स्वामी ॥४॥
प्रभु सब जगके विना हेतुबांधव उपकारी।
निरावरन सर्वज्ञ शक्ति जिनराज तिहारी॥
भक्ति रचित मम चित्त सेज नित बास करोगे।
मेरे दुखसंताप देख किम धीर धरोगे ॥५॥
भववनमे चिरकाल भ्रम्यो कछु कहिय न जाई।
तुम थुति-कथा-पियूष-वापिका भागन पाई॥
शशि तुषार घनसार हार शीतल नहिं जा सम।
करत न्हौन ता माहि क्यो न भवताप बुझै मम॥६॥
श्रीविहार परिवाह होत शुचिरूप सकल जग।
कमलकनक आभाव सुरभि श्रीवास धरत पग ॥
मेरो मन सर्वंग परस प्रभुको सुख पावै।
अब सो कौन कल्यान जो न दिन दिन ढिग आवै ॥७॥
भवतज सुखपद बसे काम मद सुभट सहारे।
जो तुमको निरखंत सदा प्रियदास तिहारे॥
तुम-वचनामृत-पान भक्ति अंजुलिसो पीवैं।
तिन्हैं भयानक क्रूर रोगरिपु कैसे छीवैं ॥८॥

मानथंभ पाषान आन पाषान पटतर ।
ऐसे और अनेक रतन दीखै जग अंतर ॥
देखत दृष्टिप्रमान मानमद तुरत मिटावै ।
जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्योंकर पावै ॥९॥
प्रभुतन पर्वत परस पवन उरमे निबहै है ।
तासों ततछिन सकल रोगरज वाहिर ह्वै है ॥
जाके ध्यानाहूत बसो उर अंबुज माहीं ।
कौन जगत उपकार-करन समरथ सो नाही ॥१०॥
जनम जनमके दुःख सहे सब ते तुम जानो ।
याद किये मुझ हिये लगै आयुधसे मानों ॥
तुम दयाल जगपाल स्वामि मै शरन गही है ।
जो कुछ करनो होय करो परमान वही है ॥११॥
मरन-समय तुम नाम मंत्र जीवकतै पायो ।
पापाचारी श्वान प्रान तज अमर कहायो ॥
जो मणिमाला लेय जपै तुम नाम निरंतर ।
इन्द्र-सम्पदा लहै कौन संशय इस अंतर ॥१२॥
जो नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित साधै ।
अनवधि सुखकी सार भक्ति कूची नहिं लाधै ॥
सो शिववाछक पुरुष मोक्षपट केम उघारै ।
मोह मुहर दिढ करी मोक्ष मंदिरके द्वारैं ॥१३॥
शिवपुर केरो पंथ पाप-तमसो अतिछायो ।
दुखसरूप बहु कूपखाडसो बिकट बतायो ॥

स्वामी सुखसो तहां कौन जन मारग लागै।
प्रभु-प्रवचन मणिदीप जोनके आगै आगै ॥१४॥
कर्म पटल भूमांहि दबी आतम निधि भारी।
देखत अतिसुख होय विमुखजन नांहि उघारी ॥
तुम सेवक ततकाल ताहि निहचै कर धारैं।
थुति कुदालसों खोद बंद भू कठिन विदारैं ॥१५॥
स्यादवाद-गिरि उपज मोक्ष सागर लों धाई।
तुम चरणांवुज परस भवितगंगा सुखदाई ॥
मो चित निर्मल थयो न्होन रुचि पूरव तामै।
अब वह हो न मलीन कौन जिन संशय यामैं ॥१६॥
तुम शिवसुखमय प्रगट करत प्रभु चिंतन तेरो।
मैं भगवान समान भाव यों वरतै मेरो ॥
यदपि झूठ है तदपि तृप्ति निश्चल उपजावै।
तुव प्रसाद सकलंक जीव वांछित फल पावै ॥१७॥
वचन जलधि तुम देव सकल त्रिभुवनमें व्यापै।
भंग-तरंगिनि विकथ-वाद-मल मलिन उथापै ॥
मनसुमेरुसो मथै ताहि जे सम्यग्ज्ञानी।
परमामृत सो तृपत होंहि ते चिरलो प्रानी ॥१८॥
जो कुदेव छविहीन वसन भूषन अभिलाखै।
वैरी सो भयभीत होय सो आयुध राखै ॥
तुम सुंदर सर्वंग शत्रु समरथ नहिं कोई।
भूषन वसन गदादि ग्रहन काहेको होई ॥१९॥

सुरपति सेवा करे 'कहा प्रभु प्रभुता तेरी।
सो सलाघना लहै मिटै जगसो जगफेरो ।।
तुम भवजलधि जिहाज तोहि शिवकंत उचरिये।
तुही जगत-जनपाल नाथथुतिकी थुति करिये ।।२०।।
वचनजाल जड़रूप आप चिन्मूरति झांई।
तातैं थुति आलाप नाहिं पहुंचे तुम तांई ।।
तो भी निर्फल नाहिं भक्तिरस भीने वायक ।
सतन को सुरतरु समान वांछित वरदायक ।।२१।।
कोप कभी नहिं करो प्रीति कबहूं नहि धारो।
अति उदास बेचाह चित्त जिनराज तिहारो ।।
तदपि आन जग बहै बैर तुम निकट न लहिये।
यह प्रभुता जगतिलक कहां तुम बिन सरदहिये ।।२२।।
सुरतिय गावैं सुजश सर्वगति ज्ञानस्वरूपी।
जो तुमको थिर होहिं नमैं भवि आनंदरूपी ।।
ताहि छेमपुर चलनवाट बाकी नहिं हो हैं।
श्रुतके सुमरन माहिं सो न कबहूं नर मोहै ।।२३।।
अतुल चतुष्टयरूप तुमैं जो चितमें धारै।
आदरसो तिहुकाल माहिं जगथुति विस्तारै ।।
सो सुकृत शिवपथ भक्तिरचना कर पूरै।
पचकल्यानक ऋद्धि पाय निहचै दुःख चूरै ।।२४।।
अहो जगतपति पूज्य अवधिज्ञानी मुनि हारे।
तुम गुनकीर्तन-माहिं कौन हम मंद विचारे ।।

थुति छलसों तुमविषै देव आदर विस्तारे ।
शिवसुख-पूरनहार कलपतरु यही हमारे ॥ २५ ॥
वादिराज मुनितैं अनु, वैयाकरणी सारे ।
वादिराज मुनितैं अनु, तार्किक विद्यावारे ॥
वादिराज मुनितैं अनु, हैं काव्यनके ज्ञाता ।
वादिराज मुनितैं अनु, है भविजनके त्राता ॥२६ ॥

दोहा—मूल अर्थ बहुविधि-कुसुम, भाषा सूत्रमँझार ।
भक्तिमाल 'भूधर' करी, करो कंठ सुखकार ॥

विषापहार स्तोत्र

(महाकवि धनजय)

आप सुप्रसिद्ध द्विसंधान काव्य के कर्ता महाकवि थे । इस काव्य के प्रत्येक पद्य के दो अर्थ होते हैं । पहला रामायण से सम्बद्ध और दूसरा महाभारत से । इसी कारण इस काव्य को राघव पाण्डवीय भी कहते हैं । काव्यमीमासा जैसे महानग्रन्थ के कर्ता राजशेखर ने धनजय की बडी प्रशंसा की है ।

आपकी एक रचना धनजय नाममाला है जो एक महत्वपूर्ण शब्दकोष है। इस विषापहार स्तोत्र मे भगवान् ऋषभदेव की स्तुति है। यह स्तुति गभीर, प्रौढ और अनूठी उक्तियो से भरपूर है। यह ग्रन्थ कवि की चतुराई से भरा हुआ है, । हृदय समुद्र को मथकर निकाला हुआ अमृत हैं । इसमे शब्दो का माधुय एव अर्थों का गाभीर्य देखने को मिलता है । इस काव्य मे स्थान-स्थान पर अलकारो की छटा छिटकी हुई है । धनजय का समय विद्वानो ने आठवी शताब्दी निश्चित किया है ।

कविराज धनंजय पूजन में लीन थे । उनके सुपुत्र को सर्प ने डस लिया । घर से कई बार समाचार आने पर भी वह निस्पृह भाव से

पूजन मे पूर्णतया तन्मय रहे और पुत्र की कोई सुध नही ली। बच्चे को विष चढ़ रहा था, उनकी पत्नी ने कुपित होकर बच्चे को मन्दिर मे उनके सामने लाकर रख दिया। पूजन से निवृत होकर उन्होंने तत्काल भगवान् के सम्मुख ही विषापहार स्तोत्र की रचना की, इधर स्तोत्र की रचना हो रही थी उधर पुत्र का विष उतर रहा था। स्तोत्र पूरा होते होते बालक निर्विष होकर उठ बैठा। इससे धर्म की अपूर्व प्रभावना हुई। इस स्तोत्र का पूर्ण लाभ लेने के लिए श्रद्धा और मनोयोग आवश्यक है। इसके पाठ मे सुख शान्ति मिलती है और सारे मनोरथ पूर्ण होते है।

विषापहार भाषा

(कवि शान्तिदास कृत भाषानुवाद)

दोहा—नमो नाभिनदन बली, तत्त्व-प्रकाशनहार।
तुर्यकालकी आदिमें, भये प्रथम अवतार॥ १॥

काव्य वा रोला छद

निज आतममे लीन ज्ञानकरि व्यापत सारे।
जानत सव व्यापार सग नहिं कछू तिहारे॥
वहुत कालके हो पुनि जरा न देह तिहारी।
ऐसे पुरुष पुरान करहु रक्षा जु हमारी॥ १॥

पर करिके जु अचित्य भार जगको अति भारो।
सो एकाकी भयो वृपभ कीनो निसतारो॥
करि न सके जोगिंद्र तवन मैं करिहो ताको।
भानु प्रकाश न करै, दीप तमहरै गुफाको॥ २॥

स्तवन करनको गर्व तज्यो सक्रो वहु ज्ञानी।
मैं नहिं तजौ कदापि स्वल्पज्ञानी शुभध्यानी॥
अधिक अर्थ को कहूं यथाविधि बैठि झरोकै।
जालातरधरि अक्ष भूमिधरको जु विलोकै॥ ३॥

सकल जगतको देखत अर सबके तुम ज्ञायक।
तुमको देखत नाहि नाहि जानत सुखदायक॥
हो किसाक तुम नाथ और कितनाक बखानै।
तातै श्रुति नहि बनै असक्ती भये सयानै॥ ४॥
बालकवत निजदोष थकी इहलोक दुखी अति।
रोगरहित तुम कियो कृपाकरि देव भुवनपति॥
हित अनहितकी समझ माहि है मदमती हम।
सब प्राणिनके हेत नाथ तुम बालवैद सम॥ ५॥
दाता हरना नाहि भानु सबको बहकावत।
आजकल के छलिकरि नितप्रति दिवस गुमावत॥
हे अच्युत! जो भक्त नमै तुम चरनकमलको।
छिनक एकमे आप देत मनवाछित फलको॥ ६॥
तुमसो सन्मुख रहै भक्तिसौं सो सुख पावे।
जो सुभावतै विमुख आपतै दुखहि बढावै॥
सदा नाथ अवदात एक द्युतिरूप गुसाई।
इन दोन्यो के हेत स्वच्छ दरपणवत भाई॥ ७॥
है अगाध जलनिधी समुदजल है जितनो ही।
मेरू तुगसुभाव सिखरलो उच्च भन्यो ही॥
वसुधा अर सुरलोक एहु इसभाति सई है।
तेरी प्रभुता देवभुवनकू लघि गई है॥ ८॥
है अनवस्थाधर्म परम सो तत्त्व तुमारे।
कह्यो न आवागमन प्रभू मतमाहि तिहारे॥

इष्ट पदारथ छांडि आप इच्छति अदृष्टकौं ।
विरुधवृत्ति तव नाथ समंजस होय सृष्टकौं ॥ ९ ॥
कामदेवको किया भस्म जगत्राता थे ही ।
लीनी भस्म लपेटि नाम सभू निजदेही ॥
सूतो होय अचेत विष्णु वनिताकरि हारचो ।
तुमकौं काम न गहै आप घट सदा उजारचो ॥१०॥
पापवान वा पुन्यवान सो देव बतावै ।
तिनके औगुन कहैं नाहि तू गुणी कहावै ॥ ॰
निज सुभावतैं अबुराशि निज महिमा पावै ।
स्तोक सरोवर कहे कहा उपमा बढि जावै ॥ ११ ॥
कर्मनकी थिति जंतु अनेक करै दुखकारी ।
सो थिति बहु परकार करै जीवनकी ख्वारी ॥
भवसमुद्रके माहि देव दोन्योके साखी ।
नाविक नाव समान आप वाणी मैं भाखी ॥ १२ ॥
मुखकौं तो दुख कहै गुणनिकूं दोष विचारै ।
धर्मकरनके हेत पाप हिरदै विच धारै ॥
तेलनिकासन काज धूलिको पेलै घानी ।
तेरे मतसो बाह्य इसे जे जीव अज्ञानी ॥ १३ ॥
विष मोचै ततकाल रोगकौ हरै ततच्छन ।
मणि औषधी रसाण मंत्र जो होय सुलच्छन ॥
ए सब तेरे नाम सुबुद्धी यो मन धरिहैं ।
भ्रमत अपरजन वृथा नही तुम सुमिरन करिहैं ॥१४॥

किंचित भी चितमाहि आप कछु करो न स्वामी।
जे राखैं चितमाहि आपको शुभ-परिणामी॥
हस्तामलवत लखे जगत की परिणति जेती।
तेरे चितके बाह्य तोउ जीवे सुखसेती॥ १५॥
तीनलोक तिरकाल माहि तुम जानत सारी।
स्वामी इनकी सख्या थी तितनीहि निहारी॥
जो लोकादिक हुते अनते साहिब मेरा।
तेऽपि झलकते आनि ज्ञानका ओर न तेरा॥ १६॥
है अगम्य तवरूप करै सुरपति प्रभु सेवा।
ना कछु तुम उपकार हेत देवनके देवा॥
भक्ति तिहारी नाथ इद्रके तोषित मनको।
ज्यो रवि सन्मुख छत्र करै छाया निज तनको॥१७॥
वीतरागता कहा कहा उपदेश सुखाकर।
सो इच्छा प्रतिकूल वचन किम होय जिनेसर॥
प्रतिकूली भी वचन जगतकूं प्यारे अतिही।
हम कछु जानी नाहि तिहारी सत्यासतिही॥ १८॥
उच्चप्रकृति तुम नाथ सग किंचित न धरनतें।
जो प्रापति तुम थकी नाहि सो धनेसुरन तें॥
उच्चप्रकृति जल विना भूमिधर धुनी प्रकासै।
जलधि नीरतैं भरचौ नदी ना एक निकासै॥१९॥
तीनलोकके जीव करो जिनवरकी सेवा।
नियम थको करदड धरचो देवनके देवा॥

प्रातिहार्य तौ बनै इंद्र के बनैं न तेरे।
अथवा तेरे बने तिहारे निमित परेरे ॥ २० ॥
तेरे सेवक नाहिं इसे जे पुरुपहीन धन।
धनवानोकी ओर लखत वे नाहिं लखत पन ॥
जैसे तमथिति किये लखत परकास-थितो कू।
तैसें सूझत नाहिं तमथिती मंदमतीकू ॥ २१ ॥
निज वृध स्वासोसास प्रगट लोचन टमकारा।
तिनको वेदत नाहिं लोकजन मूढ विचारा ॥
सकल ज्ञेय ज्ञायक जु अमूरति ज्ञान सुलच्छन।
सो किमि जान्यो जाय देव तव रूप विचच्छन ॥२२॥
नाभिराय के पुत्र पिता प्रभु भरत तने हैं।
कुलप्रकाशिकै नाथ तिहारो तवन भनैं हैं ॥
ते लघुधी असमान गुननकौं नाहिं भजै है।
सुवरन आयो हाथि जानि पाषान तजै हैं ॥ २३ ॥
सुरासुरनको जीति मोहने ढोल बजाया।
तीनलोक मे किये सकल वशि यो गरभाया ॥
तुम अनत बलवत नाहिं ढिग आवन पाया।
करि विरोध तुमथकी मूलतै नाश कराया ॥२४॥
एक मुक्तिका मार्ग देव तुमने परकास्या।
गहन चतुरगतिमार्ग अन्य देवनकूं भास्या ॥
'हम सब देखनहार' इसीविधि भाव सुमिरिकै।
भुज न विलोको नाथ कदाचित गर्भ जु धरिकै ॥२५॥

केतुविपक्षी अर्कतनो फुनि अग्नि तनो जल।
अबुनिधीअरि प्रलयकालको पवन महाबल॥
जगतमाहिं जे भोग वियोग विपक्षी है निति।
तेरो उदयो है विपक्षतै रहित जगतपति॥ २६॥
जाने विन हू नवत आपको जो फल पावै।
नमत अन्यको देव जानि सो हाथ न आवै॥
हरी मणीकू काच, काचकू मणी रटत है।
ताकी बुधिमे भूल, मूल्य मणिको न घटत है॥२७॥
जे विवहारी जीव वचनमे कुशल सयाने।
ते कषायकरि दग्ध नरनको देव वखानैं॥
ज्यो दीपक बुझि जाय ताहि कह 'नंदि' भयो है।
भग्न घडेको कहैं कलस ए मँगलि गयो है॥ २८॥
स्यादवाद सजुक्त अर्थको प्रगट बखानत।
हितकारी तुम वचन श्रवनकरि को नहिं जानत॥
दोषरहित ए देव शिरोमणि वक्ता जगगुरु।
जो ज्वरसेती मुक्त भयो सो कहत सरल सुर॥२९॥
विन वाछा ए वचन आपके खिरै कदाचित।
है नियोग ए कोपि जगतको करत सहजहित॥
करै न वाछा इसी चद्रमा पूरो जलनिधि।
सीतरश्मिकूं पाय उदधि जल बढै स्वयसिधि॥३०॥
तेरे गुण गभीर परम पावन जगमाई।
बहुप्रकार प्रभु हैं अनंत कछु पार न पाई॥

तिन गुणानकों अंत एक याही विधि दीसै।
ते गुण तुझ ही मांहि और में नाहिं जगीसै ॥ ३१ ॥
केवल थुति ही नाहि भक्तिपूर्वक हम ध्यावत।
सुमरन प्रणमन तथा भजनकर तुम गुण गावंत ॥
चिंतवन पूजन ध्यान नमनकरि नित आराधै।
को उपाव करि देव-सिद्धि-फलको हम साधै ॥ ३२ ॥
त्रैलोकी नगराधिदेव नित ज्ञानप्रकाशी।
परमज्योति परमातम-शक्ति अनंती भासी ॥
पुन्य पापतै रहित पुन्यके कारण स्वामी।
नमों नमों जगवंद्य अवंद्यक नाथ अकामी ॥ ३३ ॥
रस सुपरस अर गध रूप नहिं शब्द तिहारे।
इनिके विषय विचित्र भेद सब जाननहारे ॥
सब जीवन-प्रतिपाल अन्य करिहैं अगम्य गन।
सुमरन-गोचर नाहिं करौं जिन तेरो सुमिरन ॥३४ ॥
तुम अगाध जिनदेव चित्त के गोचर नाही।
निकिंचन भी प्रभू धनेश्वर जाचत साईं ॥
भये विश्वके पार दृष्टिसों पार न पावै।
जिनपति एम निहारि सतजन सरनै आवै ॥ ३५ ॥
नमो नमो जिनदेव जगतगुरुशिक्षादायक।
निजगुणसेती भई उन्नती महिमा लायक ॥
पाहन-खंड पहार पछै ज्यों होत और गिर।
त्यो कुलपर्वत नाहि सनातन दीर्घ भूमिधर ॥३६॥

स्वय प्रकाशी देव रैंन दिनकूं नहिं बाधित ।
दिवस रात्रि भी छतैं आपकी प्रभा प्रकाशित ।।
लाघव गौरव नाहिं एकसो रूप तिहारो ।
काल-कलातैं रहित प्रभूसूं नमन हमारो ।। ३७ ।।
इहविधि बहु परकार देव तव भक्ति करी हम ।
जाचूं कर न कदापि दीन ह्वै रागरहित तुम ।।
छाया बैठत सहज वृक्षके नीचे ह्वै है ।
फिर छायाको जाचत यामैं प्रापति क्वै है ।। ३८ ।।
जो कुछ इच्छा होय देनकी तौ उपगारी ।
द्यो बुधि ऐसी करूं प्रीतिसौं भक्ति तिहारी ।।
करो कृपा जिनदेव हमारे परि ह्वै तोषित ।
सनमुख अपनो जानि कौन पडित नहिं पोषित ।।३९।।
यथा-कथंचित भक्ति रचै विनयी-जन केई ।
तिनकूं श्रीजिनदेव मनोवाछित फल देही ।।
पुनि विशेष जो नमत सतजन तुमको ध्यावै ।
सो सुख जस 'धन-जय' प्रापति है शिवपद पावै ।।४०।।
श्रावक माणिकचंद सुबुद्धी अर्थ बताया ।
सो कवि 'शातीदास' सुगम करि छंद बनाया ।।
फिरि फिरिकैं ऋषि रूपचद ने करी प्रेरणा ।
भाषा स्तोतर की विषापहार पढो भविजना ।।४१।।

भूपाल चतुर्विशतिका

इसमें अलंकार की अनुपम छटा छिटक रही है । भूपाल ११-१२वी शताब्दी के उच्चकोटि के कवि हैं । इनका अधिक परिचय प्राप्त नही है ।

भूपालचतुर्विंशतिका भाषा।

(कविवर भूधरदास कृत भाषानुवाद)

सकल सुरासुर पूज्य नित, सकलसिद्धि दातार।
जिन-पद बन्दूं जोर कर, अशरन-जन-आधार ॥ १ ॥

चौपाई

श्रीसुख-वास-महीकुलधाम, कीरति-हर्षण-थल अभिराम।
सरसुतिके रतिमहल महान, जय जुवतीको खेलन थान ॥
अरुण वरण वांछित वरदाय, जगतपूज्य ऐसे जिन पाय।
दर्शन प्राप्त करै जो कोय, सब शिवथानक सो जन होय।१।
निर्विकार तुम सोमशरीर, श्रवणसुखद वाणी गम्भीर।
तुम आचरण जगतमे सार, सब जीवनको है हितकार ॥
महानिंद भव मारू देश, तहा तुग तरु तुम परमेश।
सघन-छांहि-मंडित छवि देत, तुम पंडित सेवें सुखहेत ॥२॥
गर्भकूपते निकस्यौ आज, अब लोचन उघरे जिनराज।
मेरो जन्म सफल भयो अबै, शिवकारण तुम देखे जबै ॥
जग-जन-नैन-कमल-वनखंड, विकसावन शशि शोक विहंड।
आनंदकरन प्रभा तुम तणी, सोई अमी झरन चांदणी ॥३॥
सब सुरेन्द्र शेखर शुभ रैन, तुम आसन तट माणक ऐन।
दोऊ दुति मिल झलकै जोर, मानो दीपमाल दुहु ओर ॥
यह संपति अरु यह अनचाह, कहा सर्वज्ञानी शिवनाह।
तातैं प्रभुता है जगमाहिं, सही असम है संशय नाहिं ॥४॥
सुरपति आन अखंडित बहै, तृण ज्यो राज तज्यो तुम वहै।
जिन छिनमैं जगमहिमा दली, जीत्यो मोहशत्रु महावली ॥

लोकालोक अनत अशेख; कीनो अत ज्ञानसो देख।
प्रभु प्रभाव यह अद्भुत सबै, अवर देवमें भूल न फबै ।।५।।
पात्रदान तिन दिन दिन दियो, तिन चिरकाल महातप कियो।
बहुविध पूजाकारक वही, सर्व शील पाले उन सही।।
और अनेक अमल गुणरास, प्रापति आय भये सब तास।
जिन तुमशरधा सो कर टेक दृग-वल्लभ देखे छिन एक ।६।
त्रिजग-तिलक, तुम गुणगण जेह, भवभुजग-विष-हरमणि तेह।
जो उरकानन माहि सदीव । भूषण कर पहरें भवि जीव ।।
सोई महामती संसार, सो श्रुतसागर पहुचे पार।।
सकल लोकमे शोभा लहै, महिमा जास जगतमें वहै ।।७।।

दोहा—सुरसमूह ढोलै चमर, चंदकिरण-द्युति जेम।
नवतन-बधू-कटाक्षतैं चपल चलैं अति एम ।।
छिन छिन ढलकैं स्वामिपर, सोहत ऐसो भाव।
किधौ कहत सिधि लच्छिसो, जिनपतिके ढिगआव ।८।

चौपई छन्द १५ मात्रा

शीशछत्र सिंहासन तलैं, दिपै देहदुति चामर ढलैं।
बाजे दुदुभि बरसै फूल, ढिग अशोक वाणी सुखमूल ।।
इहिविधि अनुपम शोभा मान, सुरनर सभा पदमनी भान।
लोकनाथ बंदै शिरनाय, सो हम शरण होहु जिनराय ।।९।।
सुर-गजदंत कमल-वन-माहि, सुरनारी-गण नाचत जाहि।
बहुविधि बाजे बाजै थोक, सुन उछाह उपजै तिहुलोक ।।

हर्षंत हरि जै जै उच्चरै, सुमनमाल अपछर कर धरै।
यो जन्मादि समय तुम होय, जयो देव देवागम सोय ॥१०॥
तोष बढावन तुम मुखचद, जन नयनामृत करन अमद।
सुंदर दुतिकर अधिक उजास, तीन भुवन नहिं उपमा तास ॥
ताहि निरखि सनयन हम भये, लोचन आज सुफल कर लये।
देखन योग जगतमे देख, उमग्यो उर आनंद विशेख ॥११॥
कैयक यो मानै मतिमद। विजितकाम विधि ईश मुकद।
ये तो हैं वनिता-वश दीन, काम-कटक-जीतन-बलहीन ॥
प्रभु आगै सुरकामिनि करै, ते कटाक्ष सब खाली परै।
यातै मदन-विध्वसन वीर, तुम भगवत और नहिं धीर ॥१२॥
दर्शनप्रीति हिये जब जगी, तबै आम्र-कोपल बहु लगी।
तुम समीप उठ आवन ठयो, तबसो सघन प्रफुल्लित भयो ॥
अबहू निज नैनन ढिग आय, मुख मयक देख्यो जगराय।
मेरो पुन्य बिरख इहबार, सुफल फल्यो सबसुख दातार।१३।

दोहा—त्रिभुवन वनमें विस्तरो काम-दवानल जोर।
वाणी-वरषाभरण सो, शाति करहु बहु ओर ॥
इद्र मोर नाचै निकट, भक्तिभाव धर मोह।
मेघ सघन चौवीस जिन, जैवते जग होय ॥१४॥

चौपाई

भविजन-कुमुदचद सुखदैन, सुरनरनाथ-प्रमुख-जगजैन।
ते तुम देख रमैं इह भाति, पहुप गेह लह ज्यो अलि पात ॥

शिरधर अजुलि भक्तिसमेत, श्रीगृहप्रति परिदक्षण देत।
शिवसुख की सी प्रापति भई,चरणछाहसो भवतप गई ॥१५
वह तुम-पद-नख-दर्पण देव, परम पूज्य सुदर स्वयमेव।
तामे जो भवि भागविशाल, आनन अविलोकै चिरकाल॥
कमला कीरति काति अनूप, धीरज प्रमुख सकल सुखरूप।
वे जगमगल कौन महान, जो न लहै वह पुरुष प्रधान॥१६॥
इंद्रादिक श्रीगगा जेह उत्पति थान हिमाचल येह।
जिनमुद्रा-मंडित अतिलसै, हर्ष होय देखे दुख नसै॥
शिखर ध्वजागण सोहैं एम, धर्म सुत-रुवर पल्लव जेम।
यो अनेक उपमाआधार, जयो जिनेश जिनालय सार॥१७॥
शीश नवाय नमत सुरनार, केश-काति-मिश्रित मनहार।
नखउद्योत वरतै जिनराज, दशदिश-पूरित किरण समाज॥
स्वर्ग-नाग-नरनायक सग, पूजत पाय-पद्म अतुलग।
दुष्ट कर्मदल दलन सुजान, जैवंतो वरतो भगवान॥१८॥
सो कर जागै जो धीमान, पडित सुधी सुमुख गुणवान।
आपन मगलहेत प्रशस्त, अवलोकन चाहैं कछु बस्त॥
और वस्तु देखें किस काज, जो तुम मुख राजै जिनराज।
तीनलोकको मगलथान, प्रेक्षणीय तिहु जगकल्यान॥१९॥
धर्मोदय तापस-गृहकीर, काव्यबध वन पिक, तुम वीर।
मोक्ष-मल्लिका मधुप रसाल, पुन्यकथा कज सरसि मराल॥
तुम जिनदेव सुगुण मणिमाल। सर्वहितंकर दीनदयाल।
ताको कौन न उन्नतकाय, धरै किरीट माहि हर्षाय॥२०॥

केई वांछे शिवपुर बास, केई करे स्वर्गसुख आस ।
पचै पंचानल आदिक ठान, दुख बधै जस बँधै अयान ।।
हम श्रीमुखवानी अनुभवें, सरधा पूरव हिरदै ठवें ।
तिस प्रभाव आनन्दित रहैं, स्वर्गादि सुख सहजे लहैं ।।२१।।
न्होन महोच्छव इन्द्रन कियो, सुरतिय मिल मंगल पढ लियो ।
सुयश शरद चद्रोपम सेत, सो गंधर्व गान कर लेत ।।
और भक्ति जो जो जिस जोग, शेष सुरन कीनी सुनियोग ।
अब प्रभु करें कौनसो सेव, हम चित भयो हिंडोला एव ।२२।
जिनवर जन्मकल्यानक धोस, इद्र आप नाचै कर होस ।
पुलकित अग पिता-घर आय, नाचत विधिमे महिमा पाय ।।
अमरी वीन बजावें सार, धरी कुचाग्र करत झकार ।
इहिविधि कौतुक देख्यो जबै, औसर कौन कह सकै अबै ।२३।
श्रीपति-बिब मनोहर एम, विकसत वदन कमलदल जेम ।
ताहि हेर हरखे दृग दोय, कह न सकू इतनो सुख होय ।।
तब सुरसग कल्यानक काल, प्रगटरूप जावै जगपाल ।
इकटक दृष्टि एक चितलाय, वह आनद कहा क्यो जाय ।२४।
देख्यो देव रसायन धाम, देख्यो नव निधिको विसराम ।
चितारयन सिद्धिरस अबै, जिनगृह देखत देखे सबै ।।
अथवा इन देखे कछु नाहि, यम अनुगामो फल जगमाहि ।
स्वामी सरयो अपूरव काज, मुक्तिसमीप भई मुझ आज ।२५।
अब विनवै भूपाल नरेश, देखे जिनवर हरन कलेश ।
नेत्रकमल विकसे जगचद्र, चतुर चकोर करण आनद ।।

थुति जलसो यो पावन भयो. पापताप मेरो मिट गयो।
मो चित है तुम चरणनमाँहि, फिर दर्शन हूज्यो अब जाँहि।२६

छप्पय छद ।

इहिविधि बुद्धिविशाल राय भूपाल महाकवि।
कियो ललित थुतिपाठ हिये सब समझ सकै नवि॥
टीकाके अनुसार अर्थ कछु मनमैं आयो।
कही शब्द कहिं भाव जोड भाषा जस गायो॥
आतम पवित्रकारण किमपि, बालख्याल सो जानियो।
लीज्यो सुधार 'भूधर' तणी, यह विनती बुध मानियो॥२७

इति समाप्त ।

श्री रत्नाकर सूरि विरचित

रत्नाकर-पञ्चविंशतिका

(हिन्दी पद्यानुवाद-कविवर श्री रामचरित उपाध्याय)

शुभ-केलि के आनन्दके धनके मनोहर धाम हो,
नरनाथसे सुरनाथसे पूजित चरण, गतकाम हो।
सर्वज्ञ हो, सर्वोच्च हो, सबसे सदा ससार मे,
प्रज्ञा कलाके सिन्धु हो, आदर्श हो आचार मे॥१॥

ससार-दुखके वैद्य हो त्रैलोक्यके आधार हो;
जय श्रीश ! रत्नाकरप्रभो ! अनुपम कृपा-अवतार हो।

गतराग ! है विज्ञप्ति मेरी मुग्धकी सुन लीजिए,
क्योकि प्रभो ! तुम विज्ञ हो,मुझको अभय वर दीजिए ॥२॥
माता पिता के सामने बोली सुनाकर तोतली,
करता नही क्या अज्ञ बालक बाल्य-वश लीलावली ? ।
अपनें हृदयके हालको त्यो ही यथोचित रीतिसे-
मैं कह रहा हू, आपके आगे विनय से प्रीति से ॥३॥
मैंने नही जगमे कभी कुछ दान दीनोको दिया,
मैं सच्चरित भी हूँ नही मैंने नही तप भी किया ।
शुभ भावनाए भी हुई, अब तक न इस संसार में—
मैं घूमता हू, व्यर्थ ही भ्रमसे भवोदधि-धारमें ॥४॥
क्रोधाग्निसे मैं रात दिन हा ! जल रहा हूँ हे प्रभो !
मैं लोभ नामक सापसे काटा गया हूँ हे विभो !
अभिमानके खल ग्राहसे अज्ञानवश मैं ग्रस्त हूँ,
किस भाँति हो स्मृत आप, माया-जालसे मैं व्यस्त हूँ ॥५॥
लोकेश ! पर-हित भी किया मैंने न दोनो लोकमें,
सुख-लेश भी फिर क्यो मुझे हो, झीकता हूँ शोकमें ।
जगमे हमारे से नरोका जन्म ही बस व्यर्थ है,
मानो जिनेश्वर ! वह भवोकी पूर्णता के अर्थ है ॥६॥
प्रभु ! आपने निज मुख सुधाका दान यद्यपि दे दिया,
यह ठीक है, पर चित्तने उसका न कुछ भी फल लिया
आनन्द-रसमे डूबकर सद्वृत्त वह होता नही,
है वज्र सा मेरा हृदय, कारण बडा बस है यही ॥७॥

रत्नत्रयी दुष्प्राप्य है प्रभुसे उसे मैंने लिया,
बहु काल तक बहु बार जब जगका भ्रमण मैंने किया।
हा खो गया वह भी विवश मैं नींद आलसके रहा,
बतलाइये उसके लिए रोऊँ प्रभो ! किसके यहाँ ? ।८।
ससार ठगनेके लिए वैराग्यको धारण किया,
जगको रिझानेके लिए उपदेश धर्मों का दिया।
झगडा मचानेके लिए मम जीभ पर विद्या बसी,
निर्लज्ज हो कितनी उडाऊँ हे प्रभो ! अपनी हँसी ॥९॥
परदोषको कह कर सदा मेरा वदन दूषित हुआ,
लख कर पराई नारियोको हा नयन दूषित हुआ।
मन भी मलिन है सोचकर परकी बुराई हे प्रभो,
किस भाँति होगी लोकमें मेरी भलाई हे प्रभो ॥१०॥
मैंने बडाई निज विवशता हो अवस्थाके वशी,
भक्षक रतीश्वरसे हुई उत्पन्न जो दुख-राक्षसी।
हा ! आपके सम्मुख उसे अति लाजसे प्रकटित किया,
सर्वज्ञ ! हो सब जानते स्वयमेव ससृतिकी क्रिया ॥११॥
अन्यान्य मन्त्रोंसे परम परमेष्ठि-मन्त्र हटा दिया,
सच्छास्त्र-वाक्योको कुशास्त्रो से दबा मैंने दिया।
विधि-उदयको करने वृथा, मैंने कुदेवाश्रय लिया,
हे नाथ, यो भ्रमवश अहित मैंने नही क्या क्या किया ॥१२॥
हा, तज दिया मैंने प्रभो ! प्रत्यक्ष पाकर आपको,
अज्ञान वश मैंने किया फिर देखिये किस पापको।

वामाक्षियो के रागमें रत हो सदा मरता रहा,
उनके विलासोंके हृदयमे ध्यान को धरता रहा ॥१३॥
लख कर चपल-दृग-युवतियो के मुख मनोहर रसमई,
जो मन-पटलपर राग भावो की मलिनता बस गई ।
वह शास्त्र-निधिके शुद्ध जलसे भी न क्यो धोई गई ?
बतलाइए यह आप ही मम बुद्धि तो खोई गई ॥१४॥
मुझमे न अपने अगके सौन्दर्यका आभास है,
मुझमें न गुणगण है विमल, न कला-कलाप-विलास है ।
प्रभुता न मुझमें स्वप्नको भी चमकती है. देखिये,
तो भी भरा हूँ गर्वसे मैं मूढ़ हो किसके लिए ॥१५॥
हा नित्य घटती आयु है पर पाप-मति घटती नही,
आई बुढोती पर विषयसे कामना हटती नही ।
मैं यत्न करता हू, दवा मैं, धर्म मैं करता नही,
दुर्मोह-महिमासे ग्रसित हूं नाथ ! बच सकता नही ॥१६॥
अघ-पुण्यको, भव-आत्मको मैंने कभी माना नही,
हा आप आगे हैं खडे दिननाथसे यद्यपि यही ।
तो भी खलोंके वाक्यको मैंने सुना कानो वृथा,
धिक्कार मुझको है, गया मम जन्म ही मानो वृथा ।१७।
सत्पात्र-पूजन देव-पूजन कुछ नही मैंने किया,
मुनिधर्म श्रावकधर्मका भी नहि सविधि पालन किया ।
नर-जन्म पाकर भो वृथा ही मैं उसे खोता रहा,
मानो अकेला घोर वनमे व्यर्थ ही रोता रहा ॥१८॥

प्रत्यक्ष सुखकर जिन-धरम मे प्रीति मेरी थी नही,
जिननाथ ! मेरी देखिये है मूढता भारी यही ।
हा ! कामधुक कल्पद्रुमादिक के यहा रहते हुए,
हमने गँवाया जन्मको धिक्कार दुख सहते हुए ॥१९॥
मैंने न रोका रोग-दुख सभोग-सुख देखा किया ।
मनमे न माना मृत्यु-भय-धन-लाभ ही लेखा किया ।
हा ! मैं अधम युवती-जनोका ध्यान नित करता रहा,
पर नरक-कारागारसे मनमे न मैं डरता रहा ॥२०॥
सद्वृत्ति से मनमे न मैंने साधुता हा साधिता,
उपकार करके कीर्ति भी मैंने नही कुछ अर्जिता ।
शुभ तीर्थके उद्धार आदिक कार्य कर पाये नही,
नर-जन्म पारस-तुल्य निज मैंने गँवाया व्यर्थ ही ॥२१॥
शास्त्रोक्त विधि वैराग्य भी करना मुझे आता नही,
खल-वाक्य भी गतक्रोध हो सहना मुझे आता नही ।
अध्यात्म-विद्या है न मुझमे है न कोई सत्कला,
फिर देव ! कैसे यह भवोदधि पार होवेगा भला ? ॥२२॥
सत्कर्म पहले जन्ममे मैंने किया कोई नही,
आशा नही जन्मान्यमे उसको करूंगा मैं कही ।
इस भातिका यदि हूँ जिनेश्वर ! क्यो न मुझको कष्ट हो ?
संसारमे फिर जन्म तीनो क्यो न मेरे नष्ट हो ? ॥२३॥
हे पूज्य ! अपने चरितको बहुभाँति गाऊं क्या वृथा,
कुछ भी नही तुमसे छिपी है पापमय मेरी कथा ।

क्योकि त्रिजगके रूप हो तुम; ईश हो, सर्वज्ञ हो,
पथके प्रदर्शक हो, तुम्ही मम चित्तके मर्मज्ञ हो ।।२४।।
दीनोद्धारक धीर आप सा अन्य नही है,
कृपा-पात्र भी नाथ ! न मुझसा अपर कही है।
तो भी माँगू नही धान्य धन कभी भूल कर,
अर्हन् ! केवल बोधिरत्न होवे मंगलकर ।।
श्रीरत्नाकर गुणगान यह दुरित दुःख सबके हरे।
बस एक यही है प्रार्थना मंगलमय जगको करे ।।२५।।

श्री अमितगति सूरि विरचित

सामायिक पाठ

परमात्म द्वात्रिंशतिका

(हिन्दी पद्यानुवाद—श्री रामचरित उपाध्याय)

नित देव ! मेरी आत्मा धारण करे इस नेम को,
मैत्री करे सब प्राणियो से, गुणी जनो से प्रेम को।
उन पर दया करती रहे, जो दुख-ग्राह-ग्रहीत हैं,
उनसे उदासी सी रहे जो धर्म से विपरीत हैं ।।१।।
करके कृपा कुछ शक्ति ऐसी दीजिए मुझ मे प्रभो !
तलवार को ज्यो म्यान से करते विलग हैं हे विभो !!
गतदोष आत्मा शक्तिशाली है मिली मम अंग से,
उसको विलग उस भाँति करनेके लिये ऋजु ढंगसे ।।२।।

हे नाथ ! मेरे चित्त में समता सदा भरपूर हो,
सम्पूर्ण ममता की कुमति मेरे हृदय से दूर हो ।
वनमें, भवनमें, दुःख में, सुख में नहीं कुछ भेद हो,
अरि-मित्रमें, मिलने-बिछुड़ने में न हर्ष न खेद हो ॥३॥
अतिशय घनी तम-राशिको दीपक हटाते हैं यथा,
दोनो कमल-पद आपके अज्ञान-तम हरते तथा ।
प्रतिबिम्ब सम स्थिर रूप वे मेरे हृदय में लीन हो,
मुनिनाथ ! कीलित-तुल्य वे उरपर सदा आसीन हो ॥४॥
यदि एक-इन्द्रिय आदि देही घूमते फिरते मही,
जिनदेव ! मेरी भूल से पीड़ित हुए होवे कही ।
टुकड़े हुए हों, मल गये हों, चोट खाये हो कभी,
तो नाथ ! वे दुष्टाचरण मेरे बनें झूठे सभी ॥५॥
सन्मुक्ति के सन्मार्ग से प्रतिकूल पथ मैंने लिया,
पञ्चेन्द्रियो चारो कषायो मे स्वमन मैंने किया ।
इस हेतु शुद्ध चरित्र का जो लोप मुझसे हो गया,
दुष्कर्म वह मिथ्यात्वको हो प्राप्त प्रभु ! करिए दया ॥६॥
चारो कषायो ने, वचन, मन, कायसे जो पाप है—
मुझसे हुआ, हे नाथ ! वह कारण हुआ भव-ताप है ।
अब मारता हू मै उसे आलोचना-निन्दादि से,
ज्यो सकल विषको वैद्यवर है मारता मन्त्रादि से ॥७॥
जिनदेव ! शुद्ध चारित्र का मुझसे अतिक्रम जो हुआ,
अज्ञान और प्रमाद से व्रत का व्यतिक्रम जो हुआ ।

अतिचार और अनाचरण जो जो हुए मुझसे प्रभो !
सबकी मलिनता मेटने को प्रतिक्रम करता विभो ! ॥८॥
मन की विमलता नष्ट होने को अतिक्रम है कहा,
औ शीलचर्या के विलघन को व्यतिक्रम है कहा।
हे नाथ ! विषयो मे लपटने को कहा अतिचार है,
आसक्त अतिशय विषय में रहना महाऽनाचार है ॥९॥
यदि अर्थ, मात्रा वाक्यमें पदमें पडी त्रुटि हो कही,
तो भूलसे ही वह हुई, मैंने उसे जाना नही।
जिनदेव वाणी ! तो क्षमा उसको तुरत कर दीजिये,
मेरे हृदय में देवि ! केवलज्ञान को भर दीजिये ॥१०॥
हे देवि ! तेरी वन्दना मै कर रहा हूँ इसलिये,
चिन्तामणि-प्रभ है सभी वरदान देने के लिये।
परिणाम-शुद्धि समाधि मुझमें बोधिका संचार हो,
हो प्राप्ति स्वात्माकी तथा शिवसौख्यकी, भवपार हो ॥११॥
मुनिनायको के वृन्द जिसको स्मरण करते हैं सदा,
जिसका सभी नर अमरपति भी स्तवन करते हैं सदा।
सच्छास्त्र वेद-पुराण जिसको सर्वदा हैं गा रहे,
वह देव का भी देव बस मेरे हृदय में आ रहे ॥१२॥
जो अन्तररहित सुबोध-दर्शन और सौख्यस्वरूप है,
जो सब विकारो से रहित, जिससे अलग भवकूप है।
मिलता विना न समाधि जो, परमात्म जिसका नाम है,
देवेश वह उर आ बसे मेरा खुला हृद्धाम है ॥१३॥

जो काट देता है जगत के दुख निर्मित जाल को,
जो देख लेता है जगत की भीतरी भी चाल को।
योगी जिसे हैं देख सकते, अन्तरात्मा जो स्वयम्,
देवेश ! वह मेरे हृदय-पुर का निवासी हो स्वयम् ॥१४॥
कैवल्य के सन्मार्ग को दिखला रहा है जो हमे,
जो जन्म के या मरण के पडता न दुख-सन्दोह मे।
अशरीर हो त्रैलोक्यदर्शी दूर है कुकलक से,
देवेश वह आकर लगे मेरे हृदय के अङ्क से ॥१५॥
अपना लिया है निखिल तनुधारी-निवहने ही जिसे,
रागादि दोष-व्यूह भी छू तक नही सकता जिसे।
जो ज्ञानमय है, नित्य है, सर्वेन्द्रियो से हीन है,
जिनदेव देवेश्वर वही मेरे हृदय मे लीन है ॥१६॥
संसार की सब वस्तुओ मे ज्ञान जिसका व्याप्त है,
जो कर्म-बन्धन हीन, बुद्ध, विशुद्ध सिद्धी प्राप्त है।
जो ध्यान करने से मिटा देता सकल कुविकार को,
देवेश वह शोभित करे मेरे हृदय-आगार को ॥१७॥
तम-सघ जैसे सूर्य-किरणो को न छू सकता कही,
उस भांति कर्म-कलक दोषाकर जिसे छूता नही।
जो है निरञ्जन वस्त्वपेक्षा, नित्य भी है, एक है,
उस आप्त प्रभुकी शरणमें हूँ प्राप्त जो कि अनेक है ॥१८॥
यह दिवसनायक लोक का जिसमे कभी रहता नही,
त्रैलोक्य-भासक-ज्ञान-रवि पर है वहां रहता सही।

जो देव स्वात्मा में सदा स्थिर-रूपता को प्राप्त है,
मै हू उसी की शरण मे, जो देववर है, आप्त है ॥१९॥
अवलोकने पर ज्ञानमे जिसके सकल ससार ही—
है स्पष्ट दिखता, एक से है दूसरा मिल कर नही ।
जो शुद्ध, शिव है, शात भी है, नित्यता को प्राप्त है,
उसको शरण को प्राप्त हूँ, जो देववर है आप्त है ॥२०॥
वृक्षावली जैसे अनल की लपट से रहती नही,
त्यो शोक, मन्मथ, मानको रहने दिया जिसने नही ।
भय, मोह, नीद, विषाद, चिन्ता भी न जिसको व्याप्त है,
उसकी शरण में हू गिरा, जो देववर है आप्त है ॥२१॥
विधिवत शुभासन घासका या भूमिका बनता नही,
चौकी, शिला को ही सुभासन मानती बुधता नही ।
जिससे कषाये-इन्द्रियाँ, खटपट मचाती है नहीं,
आसन सुधी जन के लिये है आतमा निर्मल वही ॥२२॥
हे भद्र ! आसन, लोक पूजा, संघकी सगति तथा,
ये सब समाधी के न साधन, वास्तविक में है प्रथा ।
सम्पूर्ण बाहर-वासना को इसलिये तू छोड दे,
अध्यात्म में तू हर घडी होकर निरत रति जोडदे ॥२३॥
जो बाहरी हैं वस्तुए, वे है नही मेरी कही,
उस भाति हो सकता कही उनका कभी मैं भी नही ।
यो समझ वाह्याडम्बरो को छोड निश्चित रूप से,
हे भद्र ! हो जा स्वस्थ तू बच जायगा भवकूप से ॥२४॥

निज को निजात्मा-मध्य में ही सम्यगवलोकन करे,
तू दर्शन-प्रज्ञानमय है, शुद्ध से भी है परे।
एकाग्र जिसका चित्त है, तू सत्य इसको मानना,
चाहे कही भी हो, समाधी-प्राप्त उसको जानना ॥२५॥
मेरी अकेली आत्मा परिवर्तनो से हीन है,
अतिशय विनिर्मल है सदा सद्ज्ञान मे ही लीन है।
जो अन्य सब है वस्तुए वे ऊपरी ही हैं सभी,
निज कर्म से उत्पन्न है अविनाशिता क्यो हो कभी ॥२६॥
है एकता जब देह के भी साथ मे जिसकी नही,
पुत्रादिको के साथ उसका ऐक्य फिर क्यो हो कही।
जब अग-भर से मनुज के चमडा अलग हो जायगा,
तो रोगटो का छिद्रगण कैसे नही खो जायगा ॥२७॥
ससाररूपी गहन मे है जीव बहु दुख भोगता,
वह बाहरी सब वस्तुओ के साथ कर सयोगता।
यदि मुक्तिकी है चाह तो फिर जीवगण ! सुन लीजिये,
मनसे, वचनसे-कायसे उसको अलग कर दीजिये ॥२८॥
देही ! विकल्पित जाल को तू दूर कर दे शीघ्र ही,
संसार-वन मे डालने का मुख्य कारण है यही।
तू सर्वदा सबसे अलग निज आत्मा को देखना,
परमात्मा के तत्त्व मे तू लीन निज को लेखना ॥२९॥
पहले समय मे आत्मा ने कर्म है जैसे किए,
वैसे शुभाशुभ फल यहां पर इस समय उसने लिए।

यदि दूसरे के कर्म का फल जीव को हो जाय तो,
हे जीवगण! फिर सफलता निजकर्मकी खो जाय तो ।।३०।
अपने उपार्जित कर्म-फल को जीव पाते है सभी,
उसके सिवा कोई किसी को कुछ नही देता कभी ।
ऐसा समझना चाहिये एकाग्र मन होकर सदा,
'दाता अपर है भोगका' इस बुद्धि को खोकर सदा ।।३१।।
सबसे अलग परमातमा है, अमितगति से वन्द्य है,
हे जीवगण ! वह सर्वदा सब भाँति ही अनवद्य है ।
मनसे उसी परमातमा को ध्यान मे जो लाएगा,
वह श्रेष्ठ लक्ष्मी के निकेतन मुक्ति पद को पाएगा ।।३२।।
पढकर इन द्वात्रिंश पद्य को,
लखता जो परमात्मवन्द्य को ।
वह अनन्यमन हो जाता है,
मोक्ष-निकेतन को पाता है ।। ।।३३।।

आलोचना पाठ

दोहा

वंदों पांचो परम-गुरु, चौबीसों जिनराज ।
करूँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि-करन के काज ।।१।।

सखीछन्द

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी ।
तिनकी अब निर्वृति काजा, तुम सरन लही जिनराजा ।२।

इक वे ते चउ इंद्री वा, मनरहित सहित जे जीवा।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदइ ह्वै घात विचारी ॥३॥
समरभ समारंभ आरभ, मन वच तन कीने प्रारभ।
कृत कारित मोदन करिकै, क्रोधादि चतुष्टय धरिकै ॥४॥
शत आठ जु इमि भेदनतै, अघ कीने परिछेवन तै।
तिनकी कहुँ कोलों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ॥५॥
विपरीत एकांत विनयके, सशय अज्ञान कुनय के।
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहिं जाय कहीने ॥६॥
कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदया करि भीनी।
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँगति मधि दोष उपायो।७।
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, पर वनितासो दृग जोरी।
आरभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो ॥८॥
सपरस रसना घ्रानन को, चखु कान विषय सेवनको।
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने ॥९॥
फल पञ्च उदवर खाये, मधु मास मद्य चित चाये।
नहिं अष्ट मूलगुण धारे, सेये कुविसन दुखकारे ॥१०॥
दुइवीस अभख जिन गाये, सो भी निश-दिन भुंजाये।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यो करि उदर भरायो ॥११॥
अनतानु जु बधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
संज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये ॥१२॥
परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद सयोग।
पनवीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ॥१३॥

निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई।
फिर जागि विषय वन धायो, नाना विध विष-फल खायो।।१४।।
आहार विहार नीहारा, इनमें नहिं जतन विचारा।
विन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई।।१५।।
तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो।
कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्यामति छाय गई है।१६।।
मरजादा तुम ढिग लीनी, ताहू मे दोष ज कीनी।
भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञान विषै सब पइये।।१७।।
हा हा! मै दुठ अपराधी, त्रस-जीवन-राशि विराधी।
थावर की जतन न कीनी, उर में करुणा नहिं लीनी।।१८।।
पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागां चिनाई।
पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पखातै पवन बिलोल्यो।।१९।।
हा हा! मै अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी।
तामधि जीवन के खदा, हम खाये धरि आनदा।।२०।।
हा हा! परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई।
तामध्य जीव जे आये, ते हू परलोक सिधाये।।२१।।
बीध्यो अन राति पिसायो, ईंधन बिन सोधि जलायो।
झाडू ले जागां बुहारी, चींटी आदिक जीव विदारी।।२२।।
जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी।
नहिं जल-थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई।।२३।।
जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहु घात करायो।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये।।२४।।

अन्नादिक शोध कराई, तातें जु जीव निसराई।
तिनका नहिं जतन कराया, गरियालै धूप डराया ॥२५॥
पुनि द्रव्य कमावन काजै, बहु आरंभ हिंसा साजै।
किये तिसनावश अघ भारी, करुणा नहिं रंच विचारी ॥२६॥
इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता।
संतति चिरकाल उपाई, वाणी तें कहिय न जाई ॥२७॥
ताको जु उदय अब आयो, नाना विध मोहि सतायो।
फल भुंजत जिय दुख पावै, वचतैं कैसे करि गावै ॥२८॥
तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है।२९।
इक गाँवपती जो होवे, सो भी दुखिया दुख खोवै।
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥३०॥
द्रोपदि को चीर बढायो, सीता-प्रति कमल रचायो।
अंजनसे किये अकामी, दुख मेटो अंतरजामी ॥३१॥
मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपना विरद सम्हारो।
सब दोष-रहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥३२॥
इन्द्रादिक पदवी नहिं चाहूँ, विषयनि में नाहिं लुभाऊँ।
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निज पद दीजे ॥३३॥

दोहा

दोष-रहित जिनदेवजी, निज-पद दीज्यो मोय।
सब जीवन के सुख बढ़ैं, आनंद मंगल होय॥
अनुभव माणिक पारखी, जौहरि आप जिनन्द।
येही वर मोहि दीजिये, चरण शरण आनन्द॥ ✡

बारहभावना (श्री मंगतराय जी कृत)

दोहा छंद

वंदूं श्री अरहंतपद, वीतराग विज्ञान ।
वरणूं बारह भावना, जगजीवन-हित जान ॥१॥

विष्णुपद छंद

कहां गये चक्री जिन जीता, भरतखंड सारा ।
कहां गये वह राम-रु-लक्ष्मण, जिन रावण मारा ॥
कहां कृष्ण रुक्मिणि सतभामा, अरु संपति सगरी ।
कहां गये वह रंगमहल अरु, सुवरनकी नगरी ॥२॥
नहीं रहे वह लोभी कौरव जूझ मरे रनमें ।
गये राज तज पांडव वनको, अगिन लगी तनमें ॥
मोह-नींदसे उठ रे चेतन, तुझे जगावनको ।
हो दयाल उपदेश करै गुरु, बारह भावनको ॥३॥

१ अथिर भावना

सूरज चाँद छिपै निकलै ऋतु, फिर फिर कर आवै ।
प्यारी आयू ऐसी बीतै, पता नहीं पावै ॥
पर्वत-पतित-नदी-सरिता-जल बहकर नहिं हटता ।
स्वास चलत यों घटै काठ ज्यों, आरे सों कटता ॥४॥
ओस-बूंद ज्यों गलै धूपमें, वा अंजुलि पानी ।
छिन छिन यौवन छीन होत है क्या समझै प्रानी ॥
इंद्रजाल आकाश नगर सम जग-संपति सारी ।
अथिर रूप संसार विचारो सब नर अरु नारी ॥५॥

२ अशरण भावना

काल-सिंहने मृग-चेतनको घेरा भव वनमें ।
नहीं बचावन-हारा कोई यो समझो मनमें ॥
मंत्र यंत्र सेना धन संपति, राज पाट छूटै ।
वश नहि चलता काल लुटेरा, काय नगरि लूटै ॥६॥
चक्ररत्न हलधर सा भाई, काम नहीं आया ।
एक तीरके लगत कृष्णकी विनश गई काया ॥
देव धर्म गुरु शरण जगतमे, और नहीं कोई ।
भ्रमसे फिरै भटकता चेतन, यूंही उमर खोई ॥७॥

३ ससार भावना

जनम-मरन अरु जरा-रोगसे, सदा दुखी रहता ।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव भव-परिवर्तन सहता ॥
छेदन भेदन नरक पशूगति, वध बंधन सहना ।
राग-उदयसे दुख सुरगतिमें, कहां सुखी रहना ॥८॥
भोगि पुण्यफल हो इकइंद्री, क्या इसमे लाली ।
कुतवाली दिनचार वही फिर, खुरपा अरु जाली ॥
मानुष-जन्म अनेक विपतिमय, कहीं न सुख देखा ।
पंचमगति सुख मिलै शुभाशुभको मेटो लेखा ॥९॥

४ एकत्व भावना

जन्मै मरै अकेला चेतन, सुख-दुखका भोगी ।
और किसीका क्या इक दिन यह, देह जुदी होगी ॥
कमला चलत न पैंड जाय मरघट तक परिवारा ।
अपने अपने सुखको रोवै, पिता पुत्र दारा ॥१०॥

ज्यो मेलेमे पंथीजन मिल नेह फिरै धरते ।
ज्यों तरवर पै रैन बसेरा पछी आ करते ॥
कोस कोई दो कोस कोई उड़ फिर थक थक हारैं ।
जाय अकेला हंस संगमे, कोई न पर मारैं ॥११॥

५ भिन्न भावना

मोह-रूप मृग-तृष्णा जगमे मिथ्या जल चमकै ।
मृग चेतन नित भ्रममे उठ उठ, दौडै थक थककै ॥
जल नहिं पावै प्राण गमावै, भटक भटक मरता ।
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता ॥१२॥
तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड तू ज्ञानी ।
मिले-अनादि यतनतैं बिछुडैं, ज्यो पय अरु पानी ॥
रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना ।
जौलो पौरुष थकै न तौलो उद्यमसो चरना ॥१३॥

६ अशुचि भावना

तू नित पोखै यह सूखे ज्यो, धोवै त्यो मैली ।
निश दिन करै उपाय देहका, रोग-दशा फैली ॥
मात-पिता-रज-वीरज मिलकर, बनी देह तेरी ।
मांस हाड़ नश लहू राधकी, प्रगट व्याधि घेरी ॥१४॥
काना पौंडा पड़ा हाथ यह चूसै तो रोवै ।
फलै अनंत जु धर्म ध्यानकी, भूमि-विषै बोवै ॥
केसर चंदन पुष्प सुगंधित, वस्तु देख सारी ।
देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी ॥१५॥

१२ धर्म भावना

धर्म 'अहिंसा परमो धर्म.' ही सच्चा जानो।
जो पर को दुख दे, सुख माने, उसे पतित मानो॥
राग द्वेष मद मोह घटा आतम रुचि प्रकटावे।
धर्म-पोत पर चढ़ प्राणी भव-सिन्धु पार जावे॥२६॥
वीतराग सर्वज्ञ दोष बिन, श्रीजिनकी वानी।
सप्त तत्वका वर्णन जामे, सबको सुखदानी॥
इनका चितवन बार बार कर, श्रद्धा उर धरना।
'मंगत' इसी जतनतैं इकदिन, भव-सागर-तरना॥२७॥

॥ इति सुलतानपुर निवासी मगतरायजी कृत बारह भावना॥

बारह-भावना

(कविवर भूधरदास जी कृत)

दोहा

राजा राणा छत्रपति, हाथिनके असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार॥१॥
दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती बिरिया जीवको, कोई न राखनहार॥२॥
दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहूं न सुख संसारमे, सब जग देख्यो छान॥३॥
आप अकेला अवतरै, मरै अकेलो होय।
यूं कबहूं इस जीव को, साथी सगा न कोय॥४॥
जहा देह अपनी नहीं, तहा न अपना कोय।
घर संपति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय॥५॥

विपै चाम-चादर मढ़ी, हाड पींजरा देह ।
भीतर या सम जगतमे, अवर नहीं घिन-गेह॥६॥

सोरठा

मोह-नींदके जोर, जगवासी घूमै सदा ।
कर्म-चोर चहुं ओर, सरवस लूटै सुध नहीं ॥७॥
सतगुरु देय जगाय, मोह-नींद जब उपशमै ।
तब कछु बनै उपाय, कर्म-चोर आवत रुकै ॥८॥

दोहा

ज्ञान-दीप तप-तेल भर, घर शोधै भ्रम छोर ।
या विध विन निकसै नहीं, पैठे पूरब चोर ॥९॥
पञ्च महाव्रत संचरण, समिति पञ्च परकार ।
प्रबल पञ्च इन्द्रिय-विजय, धार निर्जरा सार ॥१०॥
चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष-संठान ।
तामे जीव अनादितै, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥११॥
धन कन कंचन राजसुख, सबहि सुलभकर जान ।
दुर्लभ है ससारमें, एक जथारथ ज्ञान ॥१२॥
जाँचे सुर-तरु देय सुख, चिंतत चिंतारैन ।
बिन जाचे बिन चिंतये, धर्म सकल सुखदैन ॥१३॥

मेरी भावना

(रचियता—आचार्य जुगलकिशोर जी मुख्तार)

जिसने राग द्वेष कामादिक जीते सब जग जान लिया।
सब जीवोंको मोक्षमार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया॥
बुद्धि, वीर, जिन, हरि, हर, ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति-भाव से प्रेरित हो यह चित्त उसी मे लीन रहो॥१॥
विषयो की आशा नहि जिनके साम्य-भाव धन रखते हैं।
निज-परके हित-साधन मे जो निश-दिन तत्पर रहते हैं॥
स्वार्थ-त्याग की कठिन तपस्या बिना खेद जो करते है।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के दुख-समूह को हरते है॥२॥
रहे सदा सत्सग उन्ही का ध्यान उन्ही का नित्य रहे।
उनही जैसी चर्या मे यह चित्त सदा अनुरक्त रहे॥
नही सताऊँ किसी जीव को झूठ कभी नहि कहा करू।
परधान- *वनिता पर न लुभाऊँ, सतोषामृत पिया करूँ॥३॥
अहकार का भाव न रक्खू नही किसी पर क्रोध करूँ।
देख दूसरो की बढ़ती को कभी न ईर्ष्या-भाव धरू॥
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करू।
बने जहा तक इस जीवन मे औरो का उपकार करूँ॥४॥
मैत्रीभाव जगत मे मेरा सब जीवो से नित्य रहे।
दीन-दुखी जीवो पर मेरे उर से करुणा-स्रोत बहे॥

* स्त्रियाँ वनिता के स्थान पर 'परनर' पढें।

दुर्जन-क्रूर-कुमार्ग-रतो पर क्षोभ नही मुझको आवे।
साम्यभाव रक्खू मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥५॥
गुणी जनो को देख हृदय मे मेरे प्रेम उमड आवे।
बने जहा तक उनको सेवा करके यह मन सुख पावे ॥
होऊं नही कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित दृष्टि न दोपो पर जावे ॥६॥
कोई बुरा कहो या अच्छा लक्ष्मी आवे या जावे।
अनेक वर्षो तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावे ॥
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे।
तो भी न्याय-मार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावे ॥७॥
होकर सुख मे मग्न न फूले दुख मे कभी न घबरावे।
पर्वत-नदी-श्मशान भयानक अटवी से नही भय खावे ॥
रहे अडोल-अकप निरतर यह मन दृढतर बन जावे।
इष्ट-वियोग-अनिष्ट-योग मे सहन-शीलता दिखलावे ॥८॥
सुखी रहे सब जीव जगत के कोई कभी न घबरावे।
वैर-पाप अभिमान छोड जग नित्य नये मङ्गल गावे ॥
घर-घर चर्चा रहे धर्म की दुष्कृत दुष्कर हो जावे ॥
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज-जन्म-फल सब पावें ॥९॥
ईति भीति व्यापे नहिं जग मे वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करे ॥
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले प्रजा शाति से जिया करे।
परम अहिंसा-धर्म जगत में फैल सर्व हित किया करे ॥१०॥

फैले प्रेम परस्पर जगत मे मोह दूर हो रहा करे।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहि कोई मुख से कहा करे॥
बनकर सब 'युगवीर' हृदय से देशोन्नति-रत रहा करे।
वस्तु-स्वरूप-विचार खुशी से सब दुख सकट सहा करे॥११॥

वज्रनाभि चक्रवर्ती की

वैराग्य भावना

दोहा—बीज राख फल भोगवै, ज्यो किसान जगमाहिं।
त्यो चक्री नृप सुख करै, धर्म विसारै नाहिं॥

जोगीरासा वा नरेन्द्र छद।

इहविधि राज करै नरनायक, भोगै पुण्य विशालो।
सुखसागरमैं रमत निरतर, जात न जान्यो कालो॥
एक दिवस शुभ कर्म-सजोगे क्षेमकर मुनि बदे।
देखि शिरीगुरुके पदपंकज, लोचन अलि आनन्दे॥२॥
तीन प्रदक्षिण दे शिर नायो, कर पूजा थुति कीनी।
साधु-समीप विनय कर बैठ्यो, चरननमैं दृष्टि दीनी॥
गुरु उपदेश्यो धर्म-शिरोमणि, सुन राजा वैरागे।
राजरमा वनितादिक जे रस, ते रस बेरस लागे॥३॥
मुनि-सूरज-कथनी-किरणावलि लगत भरम बुधि भागी।
भव-तन-भोग-स्वरूप विचारयो, परम धरम अनुरागी॥
इह ससार महावन भीतर, भरमत ओर न आवै।
जामन मरन जरा दव दाहै जीव महादुख पावै॥४॥

कबहूं जाय नरक थिति भुंजै, छेदन भेदन भारी।
कबहूं पशु परजाय धरै तहं, बध बंधन भयकारी॥
सुरगतिमे परसपति देखे राग उदय दुख होई।
मानुषयोनि अनेक विपतिमय, सर्वसुखी नहि कोई॥५॥
कोई इष्ट वियोगी बिलखै, कोई अनिष्ट संयोगी।
कोई दीन-दरिद्री बिलखे, कोई तन के रोगी॥
किसही घर कलिहारी नारी, कै वैरी सम भाई।
किसही के दुख बाहिर दीखै, किसही उर दुचिताई॥६॥
कोई पुत्र बिना नित झूरै, होय मरै तब रोवै।
खोटी संततिसों दुख उपजे, क्यो प्रानी सुख सोवै॥
पुण्य उदय जिनके तिनके भी नाहि सदा सुख साता।
यह जगवास जथारथ देखे, सब दीखै दुखदाता॥७॥
जो संसार विषै सुख होता, तीर्थङ्कर क्यो त्यागी।
काहेको शिवसाधन करते, संजमसो अनुरागे॥
देह अपावन अथिर घिनावन, यामे सार न कोई।
सागर के जलसो शुचि कीजे, तो भी शुद्ध न होई॥८॥
सात कुधातुभरी मलमूरत, चर्म लपेटी सोहै।
अंतर देखत या सम जग मे, अवर अपावन को है॥
नव-मल-द्वार स्रवै निशि-वासर, नाम लिये घिन आवै।
व्याधि-उपाधि अनेक जहां तहं, कौन सुधी सुख पावै॥९॥
पोषत तो दुख दोष करै अति, सोषत सुख उपजावै।
दुर्जन-देह-स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढावै॥

राचन-जोग स्वरूप न याको विरचन-जोग सही है।
यह तन पाय महातप कीजे यामे सार यही है ॥१०॥
भोग बुरे भवरोग बढावें, वैरी हैं जग जीके।
वेरस होय विपाक समय अति, सेवत लागे नीके॥
वज्र-अगिनि विषसे विषधरसे, ये अधिके दुखदाई।
धर्म-रतन के चोर चपल अति, दुर्गति-पंथ सहाई ॥११॥
मोह-उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जाने।
ज्यो कोई जन खाय धतूरा, सो सब कचन माने॥
ज्यो ज्यो भोग संजोग मनोहर, मन-वांछित जन पावे।
तृष्णा नागिन त्यो-त्यों डके, लहर जहरकी आवे ॥१२॥
मैं चक्रीपद पाय निरंतर, भोगे भोग घनेरे।
तौ भी तनक भये नहिं पूरन, भोग मनोरथ मेरे॥
राजसमाज महा अघ-कारण, बैर बढावन-हारा।
वेश्या-सम लछमी अतिचंचल. याका कौन पत्यारा ॥१३॥
मोह-महा-रिपु बैर विचार्यो, जग-जिय संकट डारे।
घर-कारागृह वनिता बेडी, परिजन जन रखवारे॥
सम्यकदर्शन ज्ञान चरण तप, ये जियके हितकारी।
येही सार असार और सब, यह चक्री चितधारी ॥१४॥
छोड़े चौदह रत्न नवो निधि, अरु छोडे सग साथी।
कोटि अठारह घोडे छोड़े चौरासी लख हाथी॥
इत्यादिक सपति बहुतेरी जीरण-तृण-सम त्यागी।
नीति विचार नियोगी सुतको, राज दियो बड़भागी ॥१५॥

होय निशल्य अनेक नृपति संग, भूषण वसन उतारे।
श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा, पञ्च महाव्रत धारे॥
धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह धीरज-धारी।
ऐसी सपति छोड़ बसे वन, तिन पद धोक हमारी॥१६॥

दोहा

परिग्रहपोट उतार सब, लीनो चारित, पथ।
निज स्वभाव में थिर भये, वज्रनाभि निरग्रंथ॥
इति श्री वज्रनाभि चक्रवर्ती की वैराग्य भावना।

समाधि मरण (भाषा)

गौतम स्वामी बन्दो नामी मरण समाधि भला है
मैं कब पाऊं निश दिन ध्याऊं गाऊं वचन कला है॥
देव धर्म गुरु प्रीति महा दृढ सप्त व्यसन नहिं जानें।
त्याग बाइस अभक्ष सयमी बारह व्रत नित ठाने॥१॥

चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न विराधै।
बनिज करै पर द्रव्य हरै नहिं छहो कर्म इमि साधै॥
पूजा शास्त्र गुरुनकी सेवा संयम तप चहु दानी।
पर उपकारी अल्प अहारी सामायिक विधि ज्ञानी॥२॥
जाप जपै तिहुं योग धरै दृढ तनकी ममता टारै।
अन्त समय वैराग्य सम्हारै ध्यान समाधि विचारै॥

अजर अमर निज गुणसो पूरै परमानन्द सुभावै ।
आनन्दकन्द चिदानंद साहब तीन जगतपति ध्यावै ॥
क्षुधा तृषादिक होय परीषह सहै भाव सम राखै ।
अतीचार पांचो सब त्यागै ज्ञान सुधारस चाखै ॥९॥
हाड़ मास सब सूख जाय जब धर्मलीन तन त्यागै ।
अद्भुत पुण्य उपाय स्वर्ग-मे सेज उठै ज्यो जागै ॥
तहां तै आवै शिवपद पावै विलसै सुक्ख अनन्तो ।
'द्यानत' यह गति होय हमारी जैन धर्म जयवन्तो ॥१०॥

अथ अठाई रासा

प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥टेक॥
जम्बू द्वीप सुहावणो लख योजन विस्तार ।
भरतक्षेत्र दक्षिण दिशा पोदनपुर तहँ सार ॥ प्राणी ॥१॥
विद्यापति विद्याधरी सोमा राणी राय ।
समकित पालै मन वचै धर्मं सुनै अधिकाय ॥ प्राणी ॥२॥
चारणमुनि तहाँ पारणे आये राजा गेह ।
सोमाराणी आहार दे, पुण्य बढ़ो अति नेह ॥ प्राणी ॥३॥
ताहि समय नभ देवता चाले जात विमान ।
जय जय शब्द भयो घनो मुनिवर पूछ्यो ज्ञान ॥ प्राणी ॥४
मुनिवर बोले रानि सुन नन्दीश्वर को जात ।
जे नर करहिं स्वभावसों ते पावें शिवकांत ॥ प्राणी ॥५॥

ऐसो बच राणी सुनो मन मे भयो अनन्द ।
नन्दीश्वर पूजा करें ध्यावें आदि जिनन्द ।। प्राणी ।।६।।
कातिक फागुण साढ़ मे पालें मन वच काय ।
आठ दिवस पूजा करें तीन भवातर थाय ।। प्राणी ।।७।।
विद्यापति सुन चालियो रच्यो विमान अनूप ।
रानी वरजे राय क्यों तुम हो मानुष भूप ।। प्राणी ।।८।।
मानुषोत्र लंघव नहीं मानुष जेती जात ।
जिनवाणी निश्चय कही तीन भुवन विख्यात ।।प्राणी।।६।।
सो विद्यापति ना रहो चलो नन्दीश्वर द्वीप ।
मानुषोत्र गिरसो मिलो जाय विमान महीप ।।प्राणी।।१०।।
मानुषोत्र की भेंट तें परो धरनि खिर भार ।
विद्यापति भव चूरियो देव भयो सुरसार ।।प्राणी ।।११।।
दीप नन्दीश्वर छिनक मे पूजा वसु विध ठान ।
करी सु मन-वच-काय से माल लई कर मान ।।प्राणी ।।१२।।
आनन्द सो घर आइयो नन्दीश्वर कर जात ।
विद्यापति को रूप धर राणी सो कहै बात ।।प्राणी ।।१३।।
राणी बोली सुन राजा यह तो कबहु न होय ।
जिनवाणी मिथ्या नहीं निश्चय मन मे सोय ।। प्राणी ।।१४।।
नन्दीश्वर की माल ले राय दिखाई आय ।
अब तू साँचो जान मोहि पूजन कर बहु भाय ।।प्राणी।।१५।।
रानी फिर तासो कहै नर भव परसे नाहि ।
पश्चिम सूरज उदय हुए जिनवाणी शुचि ताहि ।।प्राणी।।१६

रानीसों नृप फिर कही बावन भवन जिनाल।
तेरह-तेरह मैं बन्दे पूजन करि तत्काल ।।प्राणी ।।१७।।
जयमाला तहँ मो मिली आयो हूं तुझ पास।
अब तू मिथ्या मान मत कर मेरा विश्वास ।।प्राणी।।१८।।
पूरब दक्षिण में बन्दे पश्चिम उत्तर जान।
मैं मिथ्या नहिं भाष हूँ श्री जिनवरकी आन ।।प्राणी।।१९।।
हे रानी तैं सच कही जिन वानी शुभ सार।
ढाई द्वीप न लंघई मानुष भव विस्तार ।। प्राणी ।।२०।।
विद्यापति तें सुर भयो रूप धरो शुभ सोय।
रानी को स्तुति करी निश्चय समकित तोय ।।प्राणी।।२१।।
देव कहैं अब रानि सुन, मानुषोत्र मिलो जाय।
तहँतें चय मैं सुर भयो, पूजे नदीश्वर पाय ।। प्राणी ।।२२।।
एक भवांतर मो रह्यो, जिन शासन परमान।
मिथ्याती मानें नहीं, श्रावक निश्चय आन।। प्राणी ।।२३।।
सुर चय नर हथनापुरी, राज कियो भरपूर।
परिग्रह तजि सयम लियो, कर्म महागिर चूर ।।प्राणी।।२४।।
केवल ज्ञान उपाय कर मोक्ष गये मुनि-राय।
शाश्वत सुख विलसे जहाँ जामनमरन मिटाय ।।प्राणी।।२५।।
अब रानी की सुन कथा, संयम लीनो सार।
तपकर चयकर सुर भयो, विलसे सुख विस्तार।।प्राणी ।२६।
गजपुर नगरी अवतरो, राज, करै बहुभाय।
सोलहकारण भाइयो, धर्म सुनो अधिकाय ।।प्राणी ।।२७।।

मुनि संघाटक आइयो, माली सार जनाय।
राजा बन्दो भाव सों, पुण्य बढ़ो अधिकाय ।।प्राणी।।२८।।
राजा मन वैरागियो, संयम लीनो सार।
आठ सहस नृप साथ ले, यह संसार असार।।प्राणी।।२९।।
केवलज्ञान उपाय के, दोय सहस निर्वानि।
दोय सहस सुख स्वर्ग के, भोगे भोग सुथान ।।प्राणी।।३०।।
चार सहस भूलोक में, हुंडे बहु संसार।
काल पाय शिवपुर गये, उत्तम धर्म विचार ।।प्राणी।।३१।।
वरत अठाई जे करें, तीन जन्म परमान।
लोकालोक सु जान ही सिद्धारथ कुल कान ।।प्राणी।।३२।।
भव समुद्र के तरण को, बावन नौका जान।
जे जिय करें सुभाव सों, जिनवर सांच बखान ।।प्राणी।।३३।।
मन वच काया तें पढ़ें, ते पावें भव पार।
'विनय कीर्ति' सुखसों भजे, जन्म सुफल संसार ।।३४।।

—×—

आष्टान्हिका पर्व

वर्ष में ३ बार आता है :—

१. कार्तिक सुदी ८ से पूर्णमासी तक ८ दिन

२. फाल्गुण ,, ,, ,,

३. आषाढ ,, ,, ,,

इन दिनो मे पूजन पाठ तथा सिद्धचक्र विधान करने का महान् फल है।

पखवाड़ा भाषाटीका

(तिथि षोडशी)

कविवर द्यानत राय कृत

दोहा

बानी एक नमो सदा । एक दरव आकाश ।
एक धर्म अधर्म दरव । पडिवा शुद्धिप्रकाश ॥

चौपाई

दोज दुभेद सिद्ध ससार, ससारी त्रस थावर धार ।
स्व-पर दया दोनों मन धरो, राग दोष तजि समता करो ।२॥

तीज त्रिपात्र दान नित भजो, तीन काल सामायिक सजो ।
व्यय उत्पाद ध्रौव्य पद साध, मन वच तन थिर होय समाध ।३

चौथ चार विधि दान विचार, चारयो आराधना संभार ।
मैत्री आदि भावना चार, चार बंधसो भिन्न निहार ॥४॥

पांचें पंच लब्धि लहि जीव, भज परमेष्ठी पंच सदीव ।
पांच भेद स्वाध्याय बखान, पाचो पैताले पहचान ॥५॥

छठ छ लेश्याके परिनाम, पूजा आदि करो षट् काम ।
पुद्गलके जानो षट् भेद, छहो काल लखिकै सुख वेद ॥६॥

सातैं सात नरकतैं डरो, सातो खेत धन जन सो भरो ।
सातो नय समझो गुणवंत, सात सत्त्व सरधा करि संत ॥७॥

आठैं आठ दरसके अग, ज्ञान आठ विधि गहो अभंग ।
आठ भेद पूजा जिनराय, आठ योग कीजै मन लाय ॥८॥

नोमी शील वाडि नो पाल, प्रायश्चित नो भेद समाल।
नो क्षायिक गुण मनमें राख,नो कषाय की तज अभिलाख।९।
दशमी दश पुद्गल परजाय, दशो वध हर चेतन राय।
जनमत दश अतिशय जिनराज,दशविध परिग्रहसोक्या काज १०
ग्यारस ग्यारह भाव समाज, सब अहमिदर ग्यारह राज।
ग्यारह लोक सुर लोक मझार,ग्यारह अग पढे मुनि सार।११।
बारस बारह विधि उपयोग, वारह प्रकृति दोषका रोग।
बारह चक्रवर्ति लख लेहु, वारह अविरतको तजि देहु ।।१२।
तेरस तेरह श्रावक थान, तेरह भेद मनुष पहचान।
तेरह राग प्रकृति सब निंद, तेरह भाव अयोग जिनन्द।१३।
चौदश चौदह पूरव जान, चौदश वाहिज अग वखान।
चौदह अन्तर परिग्रह डार, चौदह जीवसमास विचार।१४।
मावस सम पन्द्रह परमाद, करम भूमि पंदरह अनाद।
पच शरीर पदरह रूप, पदरह प्रकृति हरै मुनि भूप।।१५।।
पूरनमासी सोलह ध्यान, सोलह स्वर्ग कहे भगवान।
सोलह कषाय राहु घटाय,सोलह कला सम भावना भाय।१६।
सब चर्चाकी चर्चा एक, आतम आतम पर पर टेक।
लाख कोटि ग्रन्थनको सार,भेदज्ञान अरु दया विचार।।१७।।

गुण विलास सब तिथि कही, है परमारथ रूप।
पढै सुनै जो मन धरै, उपजै ज्ञान अनूप।। ✲

संकट मोचन विनती

हे दीनवघु श्रीपति करुणानिधानजी।
यह मेरी विथा क्यो न हरो वार क्या लगी ॥टेक॥
मालिक हो दो जहानके जिनराज आपही।
एवो हुनर हमारा कुछ तुमसे छिपा नहीं ॥
वेजान मे गुनाह मुझसे वन गया सही।
ककरीके चोरको कटार मारिये नहीं ॥ हो० ॥१॥
दुखदर्द दिलका आपसे जिसने कहा सही।
मुश्किल कहर वहरसे लिया है भुजा गही ॥
जस वेद औ पुरानमे प्रमान है यही।
आनंदकंद श्रीजिनंद देव है तुही ॥ हो० ॥२॥
हाथीपै चढी जाती थी सुलोचना सती।
गंगामे ग्राहने गही गजराजकी गती ॥
उस वक्तमें पुकार किया था तुम्हे सती।
भय टारके उवार लिया हे कृपापती ॥ हो० ॥३॥
पावक प्रचंड कुंडमे उमड जव रहा।
सीतासे शपथ लेनेको तव रामने कहा ॥
तुम ध्यानधार जानकी पग धारती तहां।
तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा ॥हो०॥४॥
जव चीर द्रोपदीका दुःशासन ने था गहा।
सवही सभाके लोग थे कहते हहा हहा ॥

उस वक्त भीर पीरमे तुमने करी सहा।
परदा ढका सतीका सुजस जगतमें रहा ॥ हो० ॥५॥
श्रीपालको सागर विषैं जब सेठ गिराया।
उनकी रमासे रमनेको आया वो बेहया ॥
उस वक्तके संकटमें सती तुमको जो ध्याया।
दुख-दंद-फंद मेटके आनद बढ़ाया ॥ हो० ॥ ६ ॥
हरिषेणकी माताको जहां सौत सताया।
रथ जैनका तेरा चलै पीछै यो बताया ॥
उस वक्तके अनशनमें सती तुमको जो ध्याया।
चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया ॥हो० ॥७॥
सम्यक्त्व-शुद्ध शीलवती चंदना सती।
जिसके नगीच लगती थी जाहिर रती रती ॥
बेड़ीमें पड़ी थी तुम्हें जब ध्यावती हती।
तब वीर धीरने हरी दुखदंदकी गती ॥हो० ॥ ८ ॥
जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजारा।
तब सासने कलंक लगा घरसे निकारा ॥
वनवर्गके उपसर्गमे तब तुमको चितारा।
प्रभुभक्त व्यक्त जानिके भय देव निवारा ॥ हो० ॥९॥
सोमासे कहा जो तु सती शील विशाला।
तो कुंभतै निकाल भला नाग जु काला ॥
उस वक्त तुम्हें ध्यायके सति हाथ जब डाला।
तत्काल ही वह नाग हुआ फूलकी माला ॥हो०॥१०॥

जब कुष्ट रोग था हुआ श्रीपालराजको।
मैना सती की, आपकी पूजा, इलाजको ॥
तत्काल ही सुंदर किया श्रीपाल राजको।
वह राजरोग भाग गया मुक्तराजको ॥हो० ॥११॥
जब सेठ सुदर्शनको मृषा दोष लगाया।
रानीके कहे भूपने सूली पै चढ़ाया ॥
उस वक्त तुम्हे सेठने निज ध्यानमे ध्याया।
सूलीसे उतारुस्को सिंहासनपै विठाया ॥हो० ॥१२॥
जब सेठ सुधन्नाजी को वापीमे गिराया।
ऊपरसे दुष्ट फिर उसे वह मारने आया ॥
उस वक्त तुम्हे सेठने दिल अपनेमे ध्याया।
तत्कालही जंजालसे तव उसको बचाया ॥ हो० ॥१३॥
इक सेठके घरमे किया दारिद्रने डेरा।
भोजनका ठिकाना भि न था सांझ सवेरा ॥
उस वक्त तुम्हे सेठने जब ध्यान मे घेरा।
घर उसकेमे तब कर दिया लक्ष्मीका बसेरा ॥हो०॥१४॥
बलि वादमे मुनिराज सों जब पार न पाया।
तब रातको तलवार ले शठ मारने आया ॥
मुनिराजने निजध्यानमे मन लीन लगाया।
उस वक्त हो प्रत्यक्ष तहां देव बचाया ॥हो० ॥१५॥
जब रामने हनुमंत को गढ़लंक पठाया।
सीताकी खबर लेनेको सह सैन्य सिधाया ॥

मग बीच दो मुनिराजकी लख आगमें काया।
झट वारि मूसलधारसे उपसर्ग मिटाया ॥ हो० ॥१६॥
जिननाथही को माथ नवाता था उदारा।
घेरेमें पडा था वह वज्र-कर्ण विचारा॥
उसवक्त तुम्हे प्रेमसे संकटमें चितारा।
रघुवीरने सब दुःख तहां तुरत निवारा ॥हो० ॥१७॥
रणपाल कुंवरके पडोथी पांवमें बेरी।
उस वक्त तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सबेरी॥
तत्काल ही सुकुमालकी सब झड़ पड़ी बेरी।
तुम राजकुंवरकी सभी दुखदंद निवेरी ॥हो० ॥१८॥
जब सेठके नंदनको डसा नाग जु कारा।
उसवक्त तुम्हें पीरमें धर धीर पुकारा॥
तत्काल ही उस बाल का विष भूरि उतारा।
वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा ॥हो० ॥१९॥
मुनि मानतुंगको दई जब भूपने पीरा।
तालेमें किया बंद भरी लोहजंजीरा॥
मुनिईश ने आदीशकी थुति की है गंभीरा।
चक्रेश्वरी तब आनिके झट दूर की पीरा ॥ हो० ॥२०॥
शिवकोटिने हट था किया सामंतभद्रसों।
शिव पिंडकी बंदन करो शंको अभद्रसो॥
उस वक्त स्वयंभू रचा गुरु भावभद्रसों।
जिनचंद्रकी प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्रसों ॥ हो० ॥२१॥

तोते ने तुम्हे आनिके फल आम चढाया।
मेंढक ले चला फूल भरा भक्तिका भाया॥
तुम दोनों को अभिराम स्वर्गधाम वसाया।
हम आपसे दातारको लख आज ही पाया॥हो०॥२२॥
कपि श्वान सिंह नेवला अज बैल बिचारे।
तिर्यंच जिन्हे रंच न था बोध, चितारे॥
इत्यादिको सुर धाम दे शिवधाममें धारे।
हम आपसे दातारको प्रभु आज निहारे॥ हो०॥२३॥
तुम ही अनंत जंतुका भय भीर निवारा।
वेदोपुराण में गुरू गणधरने उचारा।
हम आपको सरनागतीमें आके पुकारा॥
तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छिताकारा॥ हो०॥२४॥
प्रभु भक्त व्यक्त भक्त जक्त मुक्तके दानी।
आनंद कंद वृंदको हो मुक्त के दानी॥
मोहि दीन जान दीनबंधु पातक भानी।
संसार विषम खार तार अंतर जामी॥ हो०॥२५॥
करुणानिधान बानको अब क्यों न निहारो।
दानी अनंतदानके दाता हो सँभारो॥
वृषचंदनंद 'वृंद' का उपसर्ग निवारो।
संसार विषम खारसे प्रभु पार उतारो॥
हो दीन-बंधु श्रीपति करुणानिधानजी।
अब मेरी विथा क्यों ना हरो बार क्या लगी॥२६॥ ※

दुःखहरण विनती

(शेर की लय मे तथा और और रागनियोमे भी बनती है।)

श्रीपति जिनवर करुणायतन, दुखहरन तुमारा बाना है।
मत मेरी बार अबार करो, मोहि देहु विमल कल्याना है।टेक।
त्रैकालिक वस्तु प्रत्यक्ष लखो, तुम सो कछु बात न छाना है
मेरे उर आरत जो वरतै, निहचै सब सो तुम जाना है।
अवलोक विथा मत मौन गहो, नहि मेरा कहीं ठिकाना है॥
हो राजिवलोचन सोचविमोचन, मै तुमसो हित ठाना है।१।
सब ग्रथनि मे निरग्रथनिने, निरधार यही गणधार कही।
जिननायक ही सब लायक हैं, सुखदायक छायक ज्ञानमही॥
यह बात हमारे कान परी, तब आन तुमारी सरन गही।
क्यो मेरी बार बिलब करो, जिन नाथ कहो वह बात सही।२।
काहूको भोग मनोग करो, काहूको स्वर्ग-विमाना है।
काहूको नाग नरेशपती, काहूको ऋद्धि निधाना है।
अब मोपर क्यो न कृपा करते, यह क्या अधेर जमाना है।
इन्साफ करो मत देर करो, सुखवृन्द भरो भगवाना है।३।
खल कर्म मुझे हैरान किया, तब तुमसों आन पुकारा है।
तुम ही समरत्थ न न्याय करो, तब बंदेका क्या चारा है॥
खल घालक पालक बालकका नृपनीति यही जगसारा है।
तुम नीतिनिपुण त्रैलोकपती, तुमही लगि दौर हमारा है।४।
जबसे तुमसे पहिचान भई, तबसे तुमहीको माना है।
तुमरे ही शासनका स्वामी, हमको शरना सरधाना है॥

जिनको तुमरी शरनागत है, तिनसों जमराज डराना है।
यह सुजस तुम्हारे साचेका, सब गावत वेद पुराना है ॥५॥
जिसने तुमसे दिलदर्द कहा, तिसका तुमने दुख हाना है।
अघ छोटा मोटा नाशि तुरत, सुख दिया तिन्हे मनमाना है॥
पावकसो शीतल नीर किया, औ चीर बढा असमाना है।
भोजन था जिसके पास नहीं, सो किया कुबेर समाना है।६।
चिंतामणि पारस कल्पतरू, सुखदायक ये सरधाना है।
तव दासनके सब दास यही, हमरे मनमे ठहराना है॥
तुम भवतनको सुरइंदपदी, फिर चक्रपतीपद पाना है।
क्या बात कहो विस्तार बड़ी, वे पावें मुक्ति ठिकाना है।७।
गति चार चुरासी लाखविषैं, चिन्मूरत मेरा भटका है।
हो दीनबंधु करुणानिधान, अबलों न मिटा वह खटका है॥
जब जोग मिला शिवसाधनका, तब विघन कर्मने हटका है।
तुम विघन हमारे दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है।८।
गज-ग्राह-ग्रसित उद्धार लिया, ज्यों अंजन तस्कर तारा है।
ज्यों सागर गोपदरूप किया, मैनाका संकट टारा है॥
ज्यो सूलीतें सिंहासन औ, बेडीको काट विडारा है।
त्यों मेरा संकट दूर करो, प्रभु मोकू आस तुम्हारा है॥९॥
ज्यो फाटक टेकत पाय खुला, औ सांप सुमन कर डारा है।
ज्यो खड्ग कुसुमका माल किया, बालकका जहर उतारा है॥
ज्यों सेठ विपत चकचूरि पूर, घर लक्ष्मीसुख विस्तारा है।
त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु, मोकूं आस तुम्हारा है॥१०॥

यद्यपि तुमको रागादि नहीं, यह सत्य सर्वथा जाना है।
चिनमूरति आप अनतगुनी, नित शुद्धदशा शिवथाना है॥
तद्यपि भक्तनकी भीरि हरो, सुख देत तिन्हे जु सुहाना है।
यह शक्ति अचित्त तुम्हारी का, क्या पावै पार सयाना है।११।
दुखखंडन श्रीसुखमंडनका, तुमरा प्रन परम प्रमाना है।
वरदान दया जस कीरतका, तिहुलोकधुजा फहराना है॥
कमलाधरजी! कमलाकरजी! करिये कमला अमलाना है।
अब मेरि विथा अवलोकि रमापति, रंच न बार लगाना है।१२
हो दीनानाथ अनाथहितू, जन दीन अनाथ पुकारी है।
उदयागत कर्मविपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है॥
ज्यों आप और भवि जीवनकी, ततकाल विथा निरवारी है।
त्यों 'वृंदावन' यह अर्ज करै, प्रभु आज हमारी बारी है॥१३॥

पं० भूधरदासकृत गुरु स्तुति

ते गुरु मेरे मन बसो, जे भवजलधि जहाज।
आप तिरैं पर तारही, ऐसे श्री ऋषिराज॥१॥टेक॥
मोह महारिपु जानिकै, छाड्यो सब घरबार।
होय दिगम्बर वन बसे, आतम शुद्ध विचार॥२॥
रोग उरग बिल वपु गिण्यो, भोग भुजङ्ग समान।
कदली तरु संसार है, त्यागो सब यह जान॥३॥
रतनत्रय निधि उर धरैं, अरु निरगन्थ त्रिकाल।
मार्‍यो काम खबीसको, स्वामी परम दयाल॥४॥

पच महाव्रत आचरैं, पाचो समिति समेत ।
तीन गुपति पालैं सदा, अजर अमर पद हेत ॥५॥
धर्म धरैं दश लक्षणी, भावैं भावना सार ।
सहैं परीषह वीस द्वै चारित रतन भण्डार ॥६॥
जेठ तपै रवि आकरो सूखे सरवर नीर ।
शैल शिखर मुनि तप तपैं दाझैं नगन शरीर ॥७॥
पावस रैन डरावनी बरसै जलधर धार ।
तरुतल निवसैं साहसी चालै झंझाधार ॥ ८॥
शीत पडे कपि-मद गले, दाहै सब बनराय ।
ताल तरगनिके तटै, ठाडे ध्यान लगाय ॥९॥
इह विधि दुद्धर तप तपैं, तीनो कालमझार ।
लागे सहज सरूपमे, तनसो ममत निवार ॥१० ॥
पूरव भोग न चिन्तवैं, आगम वाछा नाहिं ।
चहुगति के दुखसो डरैं, सुरति लगी शिवमाहिं ॥११॥
रग महलमे पोढते, कोमल सेज बिछाय ।
ते पश्चिम निशि भूमिमे सोवै सवरि काय ॥१२॥
गज चढि चलते गरव सो, सेना सजि चतुरङ्ग ।
निरखि निरखि पग ते धरैं, पालैं करुणा अग ॥१३ ॥
वे गुरु चरण जहां धरैं, जग मे तीरथ जेह ॥
सो रज मम मस्तक चढो । 'भूधर' मांगै एह ॥१४॥

दर्शन पाठ [पं० दौलतरामजी कृत]

दोहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द रस लीन।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि रज रहस विहीन॥

जय वीतराग विज्ञान पूर, जय मोह तिमिर को हरन सूर।
जय ज्ञान अनन्तानन्त धार, दृग सुख वीरज मण्डित अपार॥२॥

जय परम शान्ति मुद्रा समेत, भवि जनको निज अनुभूति देत।
भवि भागन वश जोगे वशाय, तुम ध्वनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय॥३॥

तुम गुण चिन्तन निज पर विवेक, प्रगटे विघटे आपद अनेक।
तुम जगभूषण दूषण वियुक्त, सब महिमा युक्त विकल्प मुक्त॥४॥

अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप।
शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परणतिमय अक्षीण॥५॥

अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्व चतुष्टय में राजत गम्भीर।
मुनि गणधरादि सेवत महत, नव केवल लब्धि रमा धरन्त॥६॥

तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहैं सदीव।
भवसागर में दुख क्षार वारि, तारण को और न आप टारि॥७॥

यह लख निज दुख गद हरण काज, तुम ही निमित्त कारण इलाज।
जाने तातें मैं शरण आय, उचरो निज दुख जो चिर लहाय॥८॥

मैं भ्रमो अपनपो विसर आप, अपनाये विधि फल पुण्य पाप।
निज को पर को कर्त्ता पिछान, पर में अनिष्टता इष्ट ठान॥९॥

आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि।
तन परणति में आपो चितार, कबहू न अनुभवो स्वपद सार॥१०॥

तुमको जाने बिन जो कलेश, पायो सो तुम जानत जिनेश।
पशु नारक गति सुर नर मझार, भव धर धर मरो अनत बार॥११॥

अब काल लब्धि बल ते दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल।
मन शांति भयो मिट सकलद्वंद, चाखो स्वात्म रस दुख-निकंद॥१२॥

तातै ऐसी अब करो नाथ, विछुडे न कभी तुम चरण साथ।
तुम गुणगण को नहिं छेव देव, जगतारण को तुम विरद एव ॥१३॥

आतम के अहित विषय कषाय, इनमे मेरी परणति न जाय।
मैं रहूं आप मे आप लीन, सो करो होउँ जो निजाधीन ॥१४॥

मेरे न चाह कुछ और ईश, रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश।
मुझ,कारज के कारण सु आप,शिव करो हरो मम मोह ताप ॥१५॥

शशि शांति करण तप हरण हेत। स्वयमेव तथा तुम कुशल देत।
पीवत पियूष ज्यो रोग जाय, त्यो तुम अनुभव ते भव नशाय ॥१६॥

त्रिभुवन तिहुँ काल मझार कोय, नहि तुम विन निज सुखदाय होय।
मो उर यह निश्चय भयो आज दुःख,जलधि उतारन तुम जहाज॥१७॥

दोहा—तुम गुणगण मणि गणपति, गणत न पावहिं पार।
"दौल" स्वल्पमति किम कहे, नमो त्रियोग सम्हार॥

पं० भूधरदासकृत स्तुति

अहो! जगतगुरु, एक सुनियो अरज हमारी।
तुम हो दीनदयालु, मैं दुखिया ससारी ॥१॥

इस भव वनमे वादि, काल अनादि गमायो।
भ्रमत चहूगति माहिं, सुख नहिं, दुख बहु पायो ॥२॥

कर्म महारिपु जोर, एक न काम करै जी।
मन मान्या दुख देहिं काहूसो नाहिं डरै जी ॥३॥

कबहू इतर निगोद, कबहू नर्क दिखावे।
सुर-नर-पशुगति माहिं, बहुविधि नाच नचावे ॥४॥

प्रभु! इनके परसग, भव भव माहिं बुरे जी।
जे दुख देखे देव! तुमसो नाहिं दुरे जी ॥५॥

एक जनमकी वात, कहि न सको सुनि स्वामी।
तुम अनन्त परजाय, जानत अन्तरयामी ॥६॥
मैं तो एक अनाथ, ये मिलि दुष्ट घनेरे।
कियो वहुत वेहाल, सुनियो साहिव मेरे ॥७॥
ज्ञान महानिधि लूटि रक निवल करि डारयो।
इन ही तुम मुझ माहिं, हे जिन ! अन्तर पारयो ॥८॥
पाप पुण्य मिल दोइ, पायनि वेडी डारी।
तन कारागृह माहिं मोहि दिये दुख भारी ॥९॥
इनको नेक विगार, मैं कछु नाहिं कियो जी।
विन कारन जगवद्य ! वहुविधि वैर लियो जी ॥१०॥
अव आयो तुम पास सुनि कर, सुजस तिहारो।
नीति निपुन महाराज, कीजे न्याय हमारो ॥११
दुष्टन देहु निकार, साधुनको रख लीजै।
विनवै भूधरदास हे प्रभु ! ढील न कीजै ॥१२॥

आराधना पाठ

(स्नान करते समय बोलना चाहिए)

मैं देव नित अरहत चाहू, सिद्धका सुमरन करौं।
मैं सूर गुरुमुनि तीनपद ये, साधुपद हिरदय धरौं ॥
मैं धर्म करुणामय जु चाहू, जहा हिसा रच ना।
मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहू, जासु मे परपंचना ॥१॥

चौवीस श्रीजिनदेव चाहूं, और देव न मन वसै।
जिन बीस क्षेत्र विदेह चाहूं, वंदिते पातक नसैं॥
गिरनार शिखर समेद चाहूं, चंपापुर पावापुरी।
कैलाश श्रीजिनधाम चाहूं, भजत भाजे भ्रमजुरी॥२॥

नवतत्त्वका सरधान चाहूं, और तत्त्व न मन धरो।
षट्‌द्रव्यगुन परजाय चाहूं, ठीक जासों भय हरो॥
पूजा परम जिनराज चाहूं, और देव न चहूं कदा।
तिहुंकालकी मैं जाप चाहूं, पाप नहिं लागे कदा॥३॥

सम्यक्त दर्शन ज्ञान चारित, सदा चाहूं भावसों।
दशलक्षणी मैं धर्म चाहूं, महा हरख उछावसों॥
सोलह जु कारन दुख निवारण, सदा चाहूं प्रीतिसों।
मैं चित अठाई पर्व चाहूं, महामंगल रीतिसों॥४॥

अनुयोग चारो सदा चाहूं, आदि अन्त निवाहसों।
पाये धरमके चार ये, चाहूं अधिक उत्साहसों॥
मैं दान चारो सदा चाहूं, भवन-वस लाहो लहूं।
आराधना मैं चारि चाहूं, अन्तमे ये ही गहूं॥५॥

भावना बारह जु भाऊं, भाव निरमल होत हैं।
मैं व्रत जु बारह सदा चाहूं, त्याग भाव उद्योत हैं॥
प्रतिमा दिगंबर सदा चाहूं, ध्यान आसन सोहना।
वसुकर्म तै मैं छुटा चाहूं, शिवलहूं जहं मोह ना॥६॥

मैं साधुजनको सग चाहू, प्रीति तिन ही सो करो।
मैं पर्वके उपवास चाहू, अवर आरंभ परिहरो॥
इस दुक्ख पचमकाल माही, सुकुल श्रावक मैं लह्यो।
अरु महाव्रत धरि सको नाही, निबल तन मैने गह्यो॥७।
आराधना उत्तम सदा, चाहू सुनो जिनरायजी।
तुम कृपानाथ अनाथ 'द्यानत', दया करना न्याय जो॥
वसुकर्मनाश विकास, ज्ञानप्रकाश मोको दीजिये।
करि सुगति गमन समाधिमरन, सुभक्ति चरनन दीजिये।८।

श्री पार्श्वनाथ-स्तोत्र

भुजग—प्रयात छन्द।

नरेन्द्र फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीशं।
शतेन्द्रं सु पूजै भजै नाय शीशं॥
मुनीन्द्रं गणेन्द्रं नमों जोडि हाथं।
नमो देव-देव सदा पार्श्वनाथं॥ १॥
गजेन्द्र मृगेन्द्रं गह्यो तू छुडावै।
महा आगतै नागतै तू बचावै॥
महावीरतै युद्ध मे तू जितावै।
महा रोगतै बंधतै तू छुड़ावै॥२॥
दुखी दुःखहर्ता सुखी सुक्खकर्ता।
सदा सेवको को महानन्द भर्ता॥
हरे यक्ष राक्षस भूतं पिशाच।
विष डांकिनी विघन के भय अवाच॥३॥

जपै जाप ताको नहीं पाप लागै।
धरे ध्यान ताके सबै दोष भागैं॥
बिना तोहि जाने धरे भव घनेरे।
तुम्हारी कृपा तें सरै काज मेरे॥६॥

दोहा–गणधर इन्द्र न कर सकैं, तुम विनती भगवान।
'द्यानत' प्रीति निहारकें, कीजे आप समान॥१०॥

आतम कीर्तन

(श्री १०५ क्षु० मनोहरलाल जी वर्णी 'सहजानन्द')

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता दृष्टा आतम-राम।टेक।
मैं वह हू जो है भगवान, जो मैं हू वह है भगवान।
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यहँ राग वितान।१।

मम स्वरूप है सिद्ध-समान,अमित शक्ति सुखज्ञान निधान।
किन्तु आश-वश खोया ज्ञान,बना भिखारी निपट अजान।२।

सुख दुख दाता कोई न आन, मोह राग ही दुख की खान।
निजको निज परको पर जान,फिर दुखका नहिं लेश निदान।
जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम।
राग त्याग पहुचू निज धाम, आकुलता का फिर क्या काम।४।

होता स्वयं जगत परिणाम, मैं जग का करता क्या काम।
दूर हटा पर-कृत परिणाम, ज्ञायक भाव लखूं अभिराम।५।

इष्ट प्रार्थना

भावना दिन रात मेरी, सब सुखी संसार हो।
सत्य संयम शील का, व्यवहार घर-घर बार हो ॥टेक
धर्म का परचार हो अरु देश का उद्धार हो।
और ये बिगडा हुआ, भारत चमन गुलजार हो ॥१॥
ज्ञान के अभ्यास से, जीवों का पूर्ण विकाश हो।
धर्म के परचार से, हिंसा का जग से ह्रास हो ॥२॥
शान्ति अरु आनन्द का, हर एक घर में वास हो।
वीर वाणी पर सभी, संसार का विश्वास हो ॥३॥
रोग अरु भय शोक होवे, दूर सब परमात्मा।
कर सके कल्याण ज्योति, सब जगत की आत्मा ॥४॥

सम्बोधन

सदा सतोष कर प्राणी, अगर सुख से रहा चाहे,
घटा दे मन की तृष्णा को, अगर अपना भला चाहे।
आग मे जिस कदर ईन्धन, पड़ेगा ज्योति ऊँची हो,
बढा मत लोभ की तृष्णा, अगर दुख से बचा चाहे।१।
वही धनवान है जग मे, लोभ जिसके नहीं मन मे,
वह निर्धन रंक होता है, जो परधन को हरा चाहे।२।
दुखी रहते हैं वह निशदिन, जो आरत-ध्यान करते हैं,
न कर लालच अगर आजाद, रहने का मजा चाहे।३।
बिना मांगे मिले मोती, 'न्यायमत' देख दुनियाँ मे,
भीख मांगे नहीं मिलनी, अगर कोई गहा चाहे।४।

सिद्धचक्र की स्तुति

(श्री व्याख्यान वाचस्पति पं० मक्खनलाल जी देहली)

श्री सिद्धचक्र का पाठ करो, दिन आठ,
ठाठ से प्रानी, फल पायो मैना रानी ॥टेक॥

मैना सुन्दरि इक नारी थी, कोढी पति लख दुखियारी थी,
नहिं पडे चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी ॥फल पायो०

जो पति का कष्ट मिटाऊगी, तो उभय लोक सुख पाऊगी,
नहिं अजा-गल-स्तन-वत निष्फल जिन्दगानी ॥ फल पायो०

एक दिवस गई जिन मन्दिर मे, दर्शन कर अति हर्षी उरमे,
फिर लखे साधु निर्ग्रन्थ दिगम्बर ज्ञानी ॥ फल पायो०

बैठी कर मुनिको नमस्कार, निज निन्दा करती बार बार,
भर अश्रु नयन कहि मुनि सो दुखद कहानी ॥ फल पायो०

बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो, श्री सिद्धचक्र का पाठ करो,
नहिं रहे कुष्ठ की तन में नाम निशानी ॥ फल पायो०

सुन साधु वचन हर्षी मैना, नहिं होंय झूठ मुनि के बैना
करके श्रद्धा श्री सिद्धचक्र की ठानी ॥ फल पायो०

जब पर्व अठाई आया है, उत्सव युत पाठ कराया है,
सब के तन छिडका यत्र न्हवन का पानी ॥ फल पायो०

गधोदक छिडकत वसु दिनमे, नहिं रहा कुष्ठ किंचित तनमे,
भई सात शतक की काया स्वर्ण समानी ॥ फल पायो०

भव-भोग भोगि योगीश भये, श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये,
दूजे भव मैना पावे शिव रजधानी ।। फल पायो०
जो पाठ करे मन वच तन से, वे छूट जायं भव बन्धन से,
'मक्खन' मत करो विकल्प कहे जिनवाणी ।। फल पायो०

श्री भगवान् पार्श्वनाथ जी की स्तुति

तुम से लागी लगन, लेलो अपनी शरण, पारस प्यारा ।
मेटो मेटो जी संकट हमारा ।।
निश दिन तुमको जपूं पर से नेहा तजूं ।
जीवन सारा, तेरे चरणो मे बीते हमारा ।।
मेटो मेटो० ।।
विश्वसेन के राज दुलारे, वामादेवी के सुत प्राण प्यारे ।
सब से नेहा तोड़ा, जग से मुह को मोड़ा, संयम धारा ।।
मेटो मेटो० ।।
इन्द्र और धरणेन्द्र भी आये, देवी पद्मावती मंगल गाये ।।
आशा पूरो सदा, दुःख नही पावे कदा, सेवक थारा ।।
मेटो मेटो० ।
जगके सुखकी तो परवाह नही है, स्वर्ग-सुखकी भी चाह नहीं है
मेटो जामन मरण, होवे ऐसा यतन, पारस प्यारा ।।
मेटो मेटो० ।
लाखो बार तुम्हे शीश नवाऊ, जग के नाथ तुम्हे कैसे पाऊ ।।
'पंकज' व्याकुल भया, दर्शन बिन यह जिया लागे खारा ।।
मेटो मेटो० ।।

दीपावली पूजन

ऐतिहासिक दृष्टि—

त्योहार संस्कृति और सभ्यता के प्रतीक होते हैं तथा उनका सम्बन्ध भी प्राचीन महत्त्वपूर्ण घटनाओ से जुडा होता है। दीपावली हमारे देश का एक प्रसिद्ध त्यौहार है। सभी लोग इसे प्रेम और उत्साह से मनाते है। इससे कई धर्मो की कथायें जुडी हुई है।

कहा जाता है कि मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी द्वारा दशहरे को रावण का वध करके इस दिन अयोध्या पधारने पर पुरवासियो नें दीपक जलाये थे, दीपावली उसी की स्मृति है। पर विद्वानो का मत है कि इसका कोई भी शास्त्रीय आधार नही है। किसी भी प्राचीन ग्रन्थ यहाँ तक कि गोस्वामी तुलसीदास जी की रामायण मे भी ऐसा कोई उल्लेख नही है। आचार्य चतुरसैन शास्त्री ने अपनी रचना (ग्रन्थ) 'वय रक्षाम' मे शास्त्रीय आधारो से यह स्पष्ट किया है कि श्री रामचन्द्रजी की रावण पर विजय चैत्रमास मे तथा उनका अयोध्या मे आगमन वैसाख मास मे हुआ था। अत दशहरा तथा दिवाली का श्रीरामचन्द्र जी से सम्बन्ध नही है। पर इस बात का इतना प्रचार हो चुका है कि आज इस विषय की चर्चा भी लोगो को अरुचिकर और अविश्वसनीय प्रतीत होती है। फिर भी यह विचारणीय और खोज का आवश्यक विषय है।

इस दिन श्रीकृष्ण जी ने नरकासुर का वध किया था। भगवती दुर्गा देवी इस दिन अपने पतिगृह गई थीं। अब से लगभग साढे तीन सौ वर्ष पूर्व सिक्खो के छठे गुरु श्री हरगोविन्दसिह जी मुगल बादशाह की कैद से छूटे थे। अब से ६५ वर्ष पूर्व आर्यसमाज के

संस्थापक स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने तथा लगभग इतने समय पूर्व स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने शरीर त्याग किया था। इस प्रकार सभी धर्मों मे अपनी मान्यतानुसार इस का महत्व है।

प्रसिद्ध जैन ग्रन्थ 'हरिवंश पुराण' से ज्ञात होता है कि भगवान महावीर ने सर्वज्ञता की उपलब्धि के पश्चात भव्य-वृन्द को तत्वोपदेश दे पावा नगरी के 'मनोहर' नामक उद्यान युक्त वन में पधारकर स्वाति नक्षत्र के उदय होने पर कार्तिक कृष्णा ३० को सुप्रभात की शुभ वेला मे अघातिया कर्मो को नष्ट कर निर्वाण प्राप्त किया। उस समय दिव्यात्माओं ने प्रभु की पूजा की और अत्यन्त दीप्तिमान जलती प्रदीप-पंक्तियों के प्रकाश से आकाश तक को प्रकाशित करती हुई पावा नगरी सुशोभित हुई। सम्राट् श्रेणिक आदि नरेन्द्रों ने अपनी प्रजा के साथ महान् निर्वाणोत्सव मनाया। उसी समय से मानव-समाज द्वारा प्रतिवर्ष भगवान महावीर जिनेन्द्र के निर्वाण को अत्यन्त आदर तथा श्रद्धापूर्वक नैवेद्य (लाड्डू) से पूजा की जाती है। अपने मकानों की सफाई करके उनको खूब सजाते हैं। परस्पर सगे सम्बन्धियों और मित्रगण में मिठाई बांटते हैं। आनन्द मनाते हैं। सन्ध्या के समय खूब रोशनी करते हैं।

इसका वर्णन अनेक ग्रन्थोमे विद्यमान है। वैसे भी दीपावली पूजन का सम्बन्ध भगवान महावीर से दिखता है। हटडी समोशरण का प्रतीक है, खिलौने समवशरण स्थित लोगो तथा विशेष प्रकाश केवल ज्ञान का प्रतीक है। लक्ष्मी का अर्थ है मोक्षलक्ष्मी।

कुछ भी हो दीपावली अब हमारा राष्ट्रीय पर्व है, सभी का त्योहार है। यह हमारे देश और संस्कृति के लिये गौरव की बात है।

—श्रीकृष्ण जैन

सं १९७८ प्रकाशक

द्वारा प्रकाश कर उत्सव मनाया तथा हर्ष-पूर्वक मोदक (नैवेद्य) आदि से पूजा की। तब से इन दोनों महान् आत्माओं की स्मृति स्वरूप यह निर्वाणोत्सव समस्त भारतवर्ष में मनाया जाता है।

सच्ची लक्ष्मी तो आत्मा के गुणों का पूर्ण विकास, केवल-ज्ञान हो जाना तथा मोक्ष-प्राप्ति ही है। अतः हमें उस दिन महावीर स्वामी, गौतम-गणधर और केवल ज्ञान रूपी लक्ष्मी की पूजा करनी चाहिए। इन गुणों की पूजा करने पर रुपया-पैसा आदि सांसारिक लक्ष्मी प्राप्त होना तो साधारण-सी बात है।

कुछ लोग इसी पवित्र दिन जुआ आदि खेलते हैं। ये सब मिथ्यात्व को पोषण करने वाली अधार्मिक प्रवृत्तियाँ हैं। इन सब कुरीतियों को दूरकर हमें जैन शास्त्रानुसार सम्यग्दर्शन को पुष्ट करने वाली क्रियाओं द्वारा विशेष उत्साह पूर्वक दीपावली मनानी चाहिये। जिससे धार्मिक भाव सदा जागृत रहें। इस उपर्युक्त उद्देश्य को बहुत से सज्जन जानकर भी लक्ष्मी (रुपये पैसे) की पूजा करते हैं, यह उनकी नितान्त भूल है। हम यह जानते हैं कि वे व्यापारी हैं और व्यापार निरन्तर लाभ की आकांक्षा से ही वे ऐसा करते होंगे। किन्तु उन्हें इसका वास्तविक रहस्य भी समझ लेना चाहिये कि धन का जो लाभ होता है वह अन्तराय कर्म के क्षयोपशम से होता है। अन्तराय कर्म का क्षयोपशम शुभ क्रियाओं से हो सकता है, रुपये पैसे की पूजा से नहीं।

दीपमालिका के दिन प्रातःकाल उठकर सामायिक, स्तुति पाठ कर शौच स्नानादि से निवृत्त हो श्री जिन मंदिर में पूजन करनी चाहिए और निर्वाण पूजा, निर्वाणकांड, महावीराष्टक बोल कर निर्वाण लाडू चढाना चाहिये।

नई बही मुहूर्त की सामग्री।

अष्ट द्रव्य धुले हुए, धूपदान, दीपक, लाल कपड़ा, सरसों थाली, श्रीफल, लोटा जल का, नाला (धागा), शास्त्र, धूप, अगर-

वत्ती, पाटे, चौकी २, कुकुम, केशरघिसी हुई, कोरे पान, दवात, कलम, सिदूर घी मे मिलाकर (श्री महावीराय नम और लाभ शुभ दुकानकी दीवाल पर लिखने को) फूलमालाये नई वहिया आदि।

नई वहियो के मुहूर्त की विधि

सायकाल को उत्तम गोधूलिक लग्न मे अपनी दुकान के पवित्र स्थान मे नई वहियो का नवीन सवत् से शुभमुहूर्त करें। उसके लिये ऊँची चौकी पर थाली मे केशर से 'ओ श्री महावीराय नम' लिखकर दूसरी चौकी पर शास्त्र जी विराजमान करें, और एक थाली में साथिया माडकर सामग्री चढाने के लिये रखें। अष्टद्रव्य-जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल, अर्घ्य बनावें। वहिया, दवात, कलम आदि पास मे रखले, दाहिनी ओर घी का दीपक, बाई ओर धूपदान रहना चाहिये। दीपक मे घृत इस प्रमाण से डाला जाय कि रात्रि भर वह दीपक जलता रहे। इस प्रकार पूजा आरम्भ करें। पूजा करने के लिये कुटुम्बियो को पूर्व या उत्तर मे बैठना चाहिए। पूजा गृहस्थाचार्य द्वारा या स्वय करनी चाहिए। सबसे प्रथम पूजन मे बैठे हुए सर्व सज्जनो को तिलक लगाना। चाहिये उस समय यह श्लोक पढ —

मगल भगवान वीरो, मगल गौतमो गणी।
मगल कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोस्तु मगलम्॥

पश्चात् पूजा प्रारम्भ करे।

अर्हंतो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः।
आचार्या जिन शासनोन्नतिकरा पूज्या उपाध्यायकाः॥
श्रीसिद्धात-सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधका।
पंचैते परमेष्ठिन प्रतिदिनं कुर्वन्तु न मंगलम्॥२॥

ओ जय जय जय, नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु । णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्वसाहूण । चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मगलं, केवलि पण्णत्तो-धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरण पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं-सरणं पव्वज्जामि । (ओं अनादि-मूल-मन्त्रेभ्यो नम) ।

(यह पढकर पुष्पांजलि क्षेपण करे)

श्री देव शास्त्र गुरु पूजा का अर्घ्यं ।

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरू ।
वर धूप निरमल फल विविध बहु जनम के पातक हरूं ।।
इह-भांति अर्घ चढाय नित भवि करत शिव पकति मचूं ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।
वसुविधि अर्घ संजोयके, अति उछाह मन कीन ।
जासों पूजो परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ।।

ओ ह्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

बीस महाराज का अर्घ्यं ।

जल फल आठो द्रव्य संभार, रत्न जवाहर भर भर थाल ।
नमूं कर जोड, नित प्रति ध्याऊं भोरहि भोर ।।

सरस्वती पूजा ।

दोहा ।

जनम जरा मृतु, क्षय करै, हरै कुनय जड़रीति ।
भव-सागरसों ले तिरै, पूजै जिन वच प्रीति ।।१।।

ओ ह्री श्री जिन-मुखोद्भव-सरस्वत्यै पुष्पाजलि ।

छीरोदधि गंगा विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखसंगा ।
भरि कंचनझारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चंगा ।।
तीर्थंकर की ध्वनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई ।
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन-मानी पूज्य भई ।।

ओ ह्री श्री जिन-मुखोद्भव-सरस्वतीदेव्यै जलं निर्व० ।।१।।

करपूर मंगाया चन्दन आया, केशर लाया रंग भरी ।
शारद-पद वदो, मन अभिनंदों, पाप निकदो दाह हरी ।।
तीर्थं० ।। चंदनम् ।।२।।

सुखदास कमोद, धारक मोदं अति अनुमोद चदसमं ।
बहु भक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं ।।
तीर्थं० ।। अक्षतान् ।।३।।

बहु फूल सुवासं, विमल प्रकाशं, आनद रासं लाय धरे ।
मम काम मिटायो, शील बढायो, सुख उपजायो दोष हरे ।।
तीर्थं० ।। पुष्प ।।४।।

पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विध भाया मिष्ठ महा ।
पजू थुति गाऊ, प्रीति बढ़ाऊँ, क्षुधा नशाऊँ हर्ष लहा ।।
तीर्थं० ।।नैवेद्य ।।५।।

कर दीपक-जोत, तमक्षय होतं, ज्योति उदोतं तुमहिं चढ़ै।
तुम हो परकाशक,भरम-विनाशक हम घट भासक,ज्ञानबढ़ै॥
तीर्थं० ॥दीप ॥६॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमे धर, धूप मनोहर खेवत है।
सब पाप जलावे, पुण्य कमावे, दास कहावे सेवत हैं॥
तीर्थं० ॥धूपम् ॥७॥

बादाम छुहारी, लोग सुपारी, श्रीफल भारी ल्यावत हैं।
मन वाछित दाता मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत है॥
तीर्थं० ॥फलम् ॥८॥

नयनन सुखकारी, मृदु गुनधारी, उज्ज्वल भारी, मोलधरें।
शुभगंध सम्हारा, वसन निहारा, तुम तन धारा ज्ञान करें॥
तीर्थं० ॥ अर्घ्यम् ॥९॥

जल चंदन अक्षत फूल चरू, अरु दीप धूप अति फल लावें।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर द्यानत सुखपावें॥
तीर्थं० ॥ अर्घ्यम् ॥१०॥

जयमाला।

सोरठा।

ओंकार ध्वनिसार, द्वादशांग वाणी विमल।
नमो भक्ति उर धार, ज्ञान करैं जडता हरैं॥

पहलो आचारांग बखानो, पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं, पद छत्तीस सहस गुरु भाषं।

तीजो ठाना अंग सुजानं, सहस बयालिस पद सरधानं।
चौथो समवायांग निहारं, चौंसठ सहस लाख इक धारम् ।।

पचम व्याख्या प्रज्ञप्ति दरसं, दोय लाख अट्ठाइस सहसं।
छट्ठो ज्ञातृकथा विसतार, पाच लाख छप्पन हज्जारं ।।

सप्तम उपासकाध्ययनगं, सत्तर सहस ग्यारलख भंगं।
अष्टम अंतकृत दस ईसं, सहस अठाइस लाख तेईसं ।।

नवम अनुत्तरदश सुविशालं, लाख बानवै सहस चवालं।
दशम प्रश्न व्याकरण विचारं, लाख तिरानव सोल हजारं ।।

ग्यारम सूत्र विपाक सु भाखं, एक कोड चौरासी लाखं।
चार कोड़ि अरु पंद्रह लाखं, दो हजार सब पद गुरुशाखं ।।

द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं, इकसौ आठ कोड़ि पन वेद।
अड़सठ लाख सहस छप्पन हैं, सहित पचपद मिथ्या हन हैं ।।

इक सौ बारह कोड़ि बखानो, लाख तिरासी ऊपर जानो।
ठावन सहस पंच अधिकाने, द्वादश अंग सर्व पद माने ।।

कोड़ि इकावन आठ हि लाखं, सहस चुरासी छह सौ भाखं।
साढ़े इकीस श्लोक बताये, एक एक पद के ये गाये ।।

जा बानी के ज्ञान ते, सूझे लोक अलोक।
'द्यानत' जग जयवत हो, सदा देत हूँ धोक ।।

ओ ह्रीं श्री जिन-मुखोद्भव-सरस्वतीदेव्यै महार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।।

सरस्वती स्तवन

जगन्माता ख्याता जिनवर मुखाभोज उदिता ।
भवानी कल्याणी मुनि मनुज मानी प्रमुदिता ॥
महादेवी दुर्गा दर्शनि दुखदाई दुरगती ।
अनेका एकाकी द्वयचयुत दशागी जिनमती ॥१॥

कहे माता तो को यद्यपि सवही ऽनादि निधना ।
कथंचित् तो भी तू उपजि विनशै यो विवरना ॥
धरै नाना जन्म प्रथम जिनके वाद अवलो ।
भयो त्यो विच्छेद प्रचुर तुव लाखो वरसलो ॥

महावीर स्वामी जब सकल ज्ञानी मुनि भये ।
विडौजा के लाये समवसृत मे गौतम गये ॥
तबै नौका रूपा भव जलधि माही अवतरी ।
अरूपा निर्वर्णा विगत भ्रम साची सुखकारी ॥

धरै है जे प्राणी नित जननि तो को हृदय मे ।
करे है पूजा व मन बचन काया कहि नमे ॥
पढ़ावें देवें जो लिखि लिखि तथा ग्रन्थ लिखवा ।
लहे ते निश्चय सो अमर पदवी मोक्ष अथवा ॥

(यह सरस्वती स्तवन पढकर पुष्प-क्षेपण करे)

गौतम स्वामीजी का अर्घ्य ।

गौतमादिक सर्वे एक दश गणधरा ।
वीर जिन के मुनि सहस चौदह वरा ॥

नीर गधाक्षत पुष्प चरु दीपकं ।
धूप फल अर्घ्य ले हम जजें महर्षिकं ।

ओं ह्रीं महावीर-जिनस्य गौतमाद्येकादश-गणधर-चतुर्दश सहस्र मुनिवरेभ्योऽर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

इस प्रकार अर्घ्य चढ़ाकर लाभ आदि में विघ्न करने वाले अन्तराय कर्म को दूर करने के लिये नीचे लिखा हुआ अर्घ चढ़ावें :—

अन्तराय-नाशार्थं अर्घ्य ।

लाभ की अंतराय के वश जीव सुख ना लहै ।
जो करे कष्ट उत्पात सगरे कर्मवश विरथा रहै ।।
नहिं जोर वाको चले इक छिन दीनसो जगमें फिरे ।
अरहंत सिद्धसु अघर धरिके लाभ यों कर्म को हरे ।।

ओं ह्रीं लाभान्तराय कर्म-रहिताभ्यां अर्हत्-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यम् नि० ।

अंतराय है कर्म प्रबल जो दान लाभ का घातक है ।
वीर्य भोग उपभोग सभी में, विघ्न अनेक प्रदायक है ।।
इसी कर्म के नाश हेतु श्री, वीर जिनेन्द्र और गणनाथ ।
सदा सहायक हों हम सब के, विनती करें जोड़कर हाथ ।।

(यहां पर पुष्प क्षेपणकर हाथ जोड़ें)

इसके बाद हर एक बही में केशरगे साथिया मांडकर एक एक कोरा पान रखें और निम्न प्रकार लिखे —

लाभ 卐 शुभ

श्री ऋषभदेवाय नमः श्री महावीराय नमः
श्री गौतम-गणधराय नमः श्री केवलज्ञान-लक्ष्म्यै नमः

श्री जिन सरस्वत्यै नमः ।

श्री शुभ मिती कार्तिक कृष्णा अमावस्या वीर नि० संवत २५ .

विक्रम सं० ---- दिनांक ---- मास ---- सन् १९ ---- ई० ---- वार को श्री -- -- ---- -- की ---- ---- दुकान की ---- -- ---- -- ---- बही का शुभ मुहूर्त किया।

यह हो जाने के बाद विधि कराने वाले, दुकान के प्रमुख सज्जन को बही हाथ में देवें और पुष्प क्षेपें।

इसके बाद नीचे लिखा हुआ पद्य व मन्त्र पढ़कर शुभकामना करें और घर प्रमुख महाशय को फूलमाला पहिराकर पुष्प क्षेपण करें :—

पद्य।

आरोग्य वृद्धि धन धान्य समृद्धि पावें।
भय रोग शोक परिताप सुदूर जावें॥
सद्धर्म शास्त्र गुरु भक्ति सुशांति होवे।
व्यापार लाभ कुल वृद्धि सुकीर्ति होवे॥१॥
श्री वर्द्धमान भगवान सुबुद्धि देवें।
सन्मान सत्यगुण संयम शील देवें॥
नव वर्ष हो यह सदा सुख शांतिदाई।
कल्याण हो शुभ तथा अति लाभ होवे॥२॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत-सिद्धाचार्योपाध्याय-साधव शांतिं पुष्टिं च कुरुत २ स्वाहा।

शांतिपाठ

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी, शील गुण व्रत संयमधारी ।
लखन एकसौ आठ विराजें, निरखत नयन कमल दल लाजें ।१।
पंचम चक्रवर्ति पदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी ।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिननायक, नमो शांतिहित शांति विधायक।२।
दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुंदुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ।३।
शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगत पूज्य पूजो सिरनाई ।
परम शांति दीजे हम सबको, पढ़ें तिन्हे पुनि चार संघको ।४।
पूजें जिन्हे मुकुट-हार किरीट लाके,
इंद्रादिदेव अरु पूज्यपदाब्ज जाके ।
सो शांतिनाथ वर वंश जगत्प्रदीप,
मेरे लिये करहु शांति सदा अनूप ।।५।।
संपूजको को प्रतिपालको को, यतीनको को यतिनायको को ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे।६।
होवे सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा ।
होवे वर्षा समय पै, तिलभर न रहे व्याधियों का अंदेशा ।
होवे चोरी न जारी, सुसमय वरतै, हो न दुष्काल भारी ।
सारे ही देश धारें, जिनवर वृष को जो सदा सौख्यकारी ।।७।।
घाति कर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज ।
शांति करें ते जगतमे, वृषभादिक जिनराज ।।८।।
(तीन बार शांति धारा देवें)
फिर सब लोग नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें ।

विसर्जन पाठ

बिन जाने या जान के, रही टूट जो कोय।
तुव प्रसाद ते परम गुरु, सो सब पूरन होय ।।
पूजन विधि जानू नहीं, नहि जानू आह्वान।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करो भगवान ।।
मत्र-हीन धन-हीन हू, क्रिया-हीन जिन देव।
क्षमा करहु राखहु मुझे देहु चरण की सेव ।।
सर्व मगल मागल्यम्, सर्व कल्याण कारकम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैन जयतु शासनम् ।।

इसके पश्चात् खडे होकर कर्पूर जलाकर आरती करे।

फिर आरती करके श्री महावीराष्टक पढना चाहिये। देखे पृष्ठ ३०४-३०५

पूजन के बाद याचकोको दान, सज्जनो का सम्मान, सेवको को मिष्ठान्न वितरण आदि देशरीति अनुसार करना चाहिये और व्यवहारियो को उत्सव मनाने के समाचार पत्रो द्वारा भेजना चाहिये।

नोटः—जिन्हे अन्तराय कर्म प्रबल हो वे रात्रिमे 'जिन-सहस्र नाम' का पाठ अवश्य करें। नूतन वर्ष का प्रभात मगल दाई हो इसके लिये सर्व सज्जनो को १०८ बार णमोकार मन्त्र का शुद्ध भावो से जाप करना चाहिये।

निर्वाणकाण्ड (भाषा)

दोहा—वीतराग वंदौं सदा, भावसहित सिरनाय।
कहू काण्ड निर्वाणकी, भाषा सुगम बनाय ॥१

चौपाई

अष्टापद आदीश्वर स्वामि, वासुपूज्य चपापुरि नामि।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, बदौ भाव-भगति उर धार।२।
चरम तीर्थंकर चरम-शरीर, पावापुरि स्वामी महावीर।
शिखरसम्मेद जिनेसुर बीस, भावसहित वंदौ निश-दीस।३।
वरदत्तराय रु इन्द्र मुनिंद्र, सायरदत्त आदि गुणवृंद।
नगर तारवर मुनि उठकोडि, वंदौं भावसहित कर जोडि।४
श्रीगिरनार शिखर विख्यात, कोडि बहत्तर अरु सौ सात।
सबु-प्रद्युम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुद्ध आदि नमूं तसु पाय।५।
रामचद्र के सुत द्वै वीर, लाड-नरिंद आदि गुणधीर।
पाच कोडि मुनि मुक्ति मंझार, पावागिरि वंदौं निरधार।६।
पाडव तीन द्रविड-राजान, आठ कोडि मुनि मुकति पयान।
श्रीशत्रुजय-गिरि के सीस, भावसहित वंदौं निश-दीस।७।
जे बलभद्र मुकति मे गये, आठ कोड़ि मुनि औरहु भये।
श्रीगजपंथ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमू तिहू काल।८।
राम हनू सुग्रीव सुडील, गवय गवाख्य नील महानील।
कोडि निन्याणवै मुक्ति पयान, तु गीगिरि वंदौं धरि ध्यान।९।
नंग अनंग कुमार सुजान, पाच कोडि अरु अर्ध प्रमान।
मुक्ति गये सोनागिरि-शीश, ते वंदौं त्रिभुवनपति ईस।१०।
रावण के सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवा-तट सार।
कोटि पंच अरु लाख पचास, ते वंदौं धरि परम हुलास।११।

रेवानदी सिद्धवर, कूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट।
द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठकोडि वंदौं भव पार।१२।
बड़वानी बड़नयर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग।
इन्द्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण ते वंदौं भव-सागर तर्ण।१३।
सुवरणभद्र आदि मुनि चार पावागिरि-वर-शिखर मझार।
चेलना-नदी-तीरके पास, मुक्ति गये वंदौं नित तास।१४।
फलहोडी बड़गाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप।
गुरुदत्तादि-मुनीश्वर जहाँ, मुक्ति गये वंदौं नित तहाँ।१५।
बाल महाबाल मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय।
श्रीअष्टापद मुक्ति मझार, ते वंदौं नित सुरत संभार।१६।
अचलापुर की दिश ईसान, जहा मेढ़गिरि नाम प्रधान।
साढे तीन कोडि मुनिराय, तिनके चरण नमूं चित लाय॥
वसस्थल वनके ढिग होय, पच्छिम दिशा कुंथुगिरि सोय।
कुलभूषण देशभूषण नाम, तिनके चरणनि करूं प्रणाम॥
जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिग पाचसौ लहे।
कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वदन करूं जोड जुग पान॥
समवसरण श्रीपार्श्व-जिनद, रेसिदीगिरि नयनानद।
वरदत्तादि पच ऋषिराज, ते वदौं नित धरम-जिहाज।२०।
तीन लोकके तीरथ जहां, नित प्रति वदन कीजै तहा।
मन-वच-काय सहित सिरनाय, वदन करहिं भविक गुणगाय।
सवत सतरहसौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल।
'भैया' वंदन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकांड गुणमाल॥

देवदर्शन की विधि

प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन सूर्योदय से पहले जाग जाना चाहिये और जागते ही शय्या पर बैठकर कम से कम नो बार णमोकार मन्त्र पढना चाहिये। फिर यह विचार करना चाहिए कि 'कोऽहं को मम धर्म अर्थात् मैं कौन हू और मेरा क्या धर्म है ?

'अनादि काल से ससार मे भ्रमण करते २ बडी कठिनता से यह जैन धर्म मुझे प्राप्त हुआ है। अत प्रमाद छोडकर बडी सावधानी से इस दुर्लभ धर्म का पालन करना चाहिये।'

मन मे ऐसा दृढ सकल्प करके उठना चाहिए और शौच से निवट कर दातोन करना चाहियें। (यदि प्रात भ्रमण को जाते हैं तो वहा से वापिस आकर) फिर स्नान करके स्वच्छ वस्त्र पहिन कर जिन-मन्दिर जाना चाहिये।

मन्दिर को जाते समय मन को स्वच्छ रखना चाहिये और किसी तरह के दुनियादारी के सकल्प विकल्प मन मे नही लाना चाहिये। जिन दर्शन के लिए साथ मे अक्षत (चावल) बादाम आदि द्रव्य घर से लेकर चलना चाहिये। मन्दिर के द्वार पर पहुच कर जल मे पैर धोना चाहिए और 'नि सहि नि सहि नि सहि' कहते हुये भक्तिभाव से जिनालय मे प्रवेश करना चाहिए।

वेदी के सम्मुख पहुचकर जिन भगवान को नमस्कार करना चाहिये। नमस्कार दो प्रकार से किया जाता है। १-अष्टाग नमस्कार २ पचाग नमस्कार। शरीर के ८ अग हैं—दो हाथ, दो पैर, एक मस्तक, एक पीठ, एक छाती और एक नितम्ब भाग।

१-अष्टाग नमस्कार—दोनो हाथो और दोनो पैरो को फैलाकर जमीन पर लेटकर जो नमस्कार किया जाता है वह अष्टाग नमस्कार है।

२-पचाग नमस्कार—दोनो हाथो को जोडकर मस्तक से लगाकर तथा दोनों घुटनो को जमीन पर टेककर जो नमस्कार किया जाता

है वह पचाग नमस्कार है। इस नमस्कार मे भी दोनो हाथ पुट वन्द कमल के आकार के जोडकर और दोनो कोहनियो को पेट से लगाकर खडेहोकर स्तवन करना चाहिये और द्रव्य चढाना चाहिये। हाथ मे द्रव्य न हो तो गोलक मे कुछ पैसे डाले जा सकते हैं किन्तु उत्तम यही है कि हाथ मे चावल या वादाम आदि हो। फिर पुण्य-वर्द्धक स्तुति पढते हुये तीन प्रदक्षिणा देना चाहिये।

दर्शन करते समय अपनी दृष्टि प्रतिमा पर ही रहे तथा प्रदक्षिणा (परिक्रमा) के समय विनती, स्तोत्र मे ऐसी तल्लीनता रहनी चाहिये कि वचन और काय के साथ मन भी एकरूप हो जाय। इससे राग-द्वेष से छुटकारा होकर कर्मों की निर्जरा होती है। निकाचित कर्म जिनमें किसी दशा मे परिवर्तन नही होता और जिनका अशुभ फल श्रीपाल तथा सनत्कुमार चक्रवर्ती जैसे वडे २ पुण्यात्माओ को भी भोगना पडता है, वे कर्म वीतराग भगवान की सुदृढ भक्ति से ही कटते है। अत भक्ति मे तल्लीनता वहुत आवश्यक और कल्याण-कारिणी है।

प्रदक्षिणा देते समय यदि कोई नमस्कार कर रहा हो तो रुक जावे या उसके पीछे से निकल जावे, उसके सामने से न निकले। दर्शन पाठ, विनती या स्तोत्र धीरे २ धीमे स्वर मे पढना चाहिये और पढते समय इस वात का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए कि दूसरो को वाधा उत्पन्न न हो। कोई दर्शन कर रहा हो तो उसके सामने खडे नही होना चाहिये।

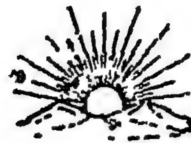
भगवान के दर्शन के समय यह विचार रहना चाहिये कि यह जिनमन्दिर समवशरण है और उसमे साक्षात् जिनेन्द्र देव के समान जिनप्रतिमा विराजमान है। समवशरण मे भी भगवान् के वाह्य रूप के ही दर्शन होते हैं। वही रूप जिनविम्व (प्रतिमा) का है किन्तु साक्षात् जिनेन्द्रदेव के मुख से दिव्यध्वनि सुनने का सौभाग्य

प्राप्त होता है वह जिन विम्ब मे मभव नही है। इसी से जिनमन्दिर मे जिन विम्ब के साथ जिनवाणी भी विराजमान रहती है। जिन-विम्ब और जिनवाणी दोनो मिलकर ही समवशरण का रूप बनाती हैं। अत देवदर्शन के पश्चात् शास्त्र स्वाध्याय अवश्य करना चाहिये। ऐसा करने से साक्षात् जिनेन्द्र के दर्शन और उनके उपदेश श्रवण जैसा लाभ प्राप्त होता है।

प्रतिष्ठित प्रतिमायें और यंत्र ही पूज्य होते है और उन्ही को नमस्कार करना चाहिए। मन्दिर मे बने हुए चित्र तथा टगी हुई तस्वीरें (मन्त्रो द्वारा) प्रतिष्ठित नही है। अत उनको नमस्कार नही करना चाहिये।

मन्दिर मे हंसी मजाक, खोटी कथा, स्त्री कथा, भोजन कथा, चोर आदि की कथा, शृ गार, कलह, निद्रा, खान-पान तथा थूकना आदि नही करना चाहिए। मुख स्वच्छ होना चाहिए। पान इलायची वगैरह खाया हो तो कुल्ला करके ही मन्दिर मे जाना चाहिए।

मन्दिर आत्म-साधन का पवित्र स्थान है। वहां आरम्भ परिग्रह (घरेलू काम-काज तथा धन-सम्पत्ति) के विचारो का त्याग कर अत्यन्त शान्ति पूर्वक धार्मिक भावनायें ही मन मे लानी चाहिए। व्यवहारिक कार्य और घरेलू चर्चा मन्दिर मे नही करनी चाहिए। यह पापबन्ध का कारण है। धार्मिक मर्यादाओ के पालन से पुण्य-बन्ध होने के साथ २ जीवन भी सफल होता है।



तीर्थ क्षेत्रों की अर्घावली

कैलाश गिरि

जलआदिक आठोंद्रव्य लेय, भरि स्वर्णथार अर्घहि करेय ।
जिन आदि मोक्ष कैलाश थान,मुन्यादि पाद जजु जोरि पान ।।
ओ ह्री श्री कैलाश पर्वत सिद्ध क्षेत्राय अर्घं नि० ।

सम्मेद शिखर क्षेत्र

जल गंधाक्षत पुष्प सु नेवज लीजिये ।
दीप धूप फल लेकर अर्घ सु दीजिये ।।
पूजो शिखर सम्मेद सु-मन-वच-काय जी ।
नरकादिक दुख टरे अचल पद पायजी ।।
ओ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्राय अर्घं ।

गिरनार क्षेत्र

अष्ट द्रव्य का अर्घ संजोयो, घण्टा नाद बजाई ।
गीत नृत्य कर जजो 'जवाहर' आनन्द हर्ष बधाई ।।
जम्बू द्वीप भरत आरज मे, सोरठ देश सुहाई ।
सेसावन के निकट अचल तह, नेमिनाथ शिव पाई ।।
ओ ह्री श्री गिरनार क्षेत्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं ।

श्री चम्पापुर क्षेत्र

जल फल वसु द्रव्य मिलाय, लै भर हिम थारी ।
वसु अग धरा पर ल्याय, प्रमुदित चितधारी ।।
श्री वासु पूज्य जिनराय, निर्वृतिथान प्रिया ।
चपापुर थल सुख दाय, पूजौ हर्ष हिया ।।
ओ ह्री श्री चम्पापुर सिद्ध क्षेत्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ नि० ।

श्री पावापुर सिद्ध क्षेत्र

जल गंध आदि मिलाय वसुविध थार स्वर्ण भरायकै।
मन प्रमुद भाव उपाय करले आय अर्घ बनायकै।
वर पद्मवन भर पद्मसरवर बहिर पावा ग्राम ही।
शिव धाम सन्मति स्वामी पायो, जजो सो सुखदा मही॥
ओ ह्री श्री पावापुर सिद्ध क्षेत्राय अर्घ नि०

श्री सोनगिरि क्षेत्र

वसु द्रव्य ले भर थाल कंचन अर्घ दे सब अरि हनू।
'छोटे' चरण जिन राज लय हो शुद्ध निज आत्मो बनूं॥
नंगादि नंग मुनीन्द्र जहं ते मुक्ति लक्ष्मी पति भये।
सो परम गिरवर जजूं बस विधि होत मगल नित नये॥
ओ ह्री श्री सोनागिर क्षेत्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं।

श्री नयनागिरि (रेशन्दीगिरि) क्षेत्र

शुचि अमृत आदि समग्र, सजि वसु द्रव्य प्रिया।
धारो त्रिजगत पति अग्र, धर वर भक्त हिया॥
ओ ह्री श्री नयनागिरि सिद्ध क्षेत्राय अनर्घ्यं पद प्राप्तये अर्घं नि०

श्री द्रोणगिरि क्षेत्र

जल सु चन्दन अक्षत लीजिये, पुष्प धर नैवेद्य गनीजिये।
दीप धूप सुफल बहु साजही, जिन चढाय सुपातक भाजही॥
ओ ह्री श्री द्रोणगिरि सिद्ध क्षेत्राय अनर्घ्यं पद प्राप्तये अर्घं नि०

सिद्धवर कूट क्षेत्र

जल चन्दन अक्षत लेय, सुमन महा प्यारी।
चरु दीप धूप फल सोय, अरघ करों भारी॥

द्वय चक्री दस काम कुमार, भवतर मोक्ष गये।
तातें पूजो पद सार, मन मे हरष ठये ॥
ओ ह्री श्री सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं नि०

श्री शत्रुञ्जय क्षेत्र

बसु द्रव्य मिलाई, थार भराई, सन्मुख आई नजर करो।
तुम शिव सुखदाई धर्म बढाई, हर दुखदाई, अर्घ करो ॥
पांडव शुभ तीन सिद्ध लहीन, आठ कोडि मुनि मुक्ति गये।
श्री शत्रुञ्जय पूजो सन्मुख हूजो, शान्तिनाथ शुभ मूल नये ॥
ओ ह्री श्री शत्रुञ्जय सिद्ध क्षेत्राय अनर्घ्यं पदप्राप्तये अर्घं नि०।

श्री तुगीगिरि क्षेत्र

जल फलादि वसु दरव साजके, हेम पात्र भरलाऊँ।
मन वच काय नमू तुम चरना, बार बार शिर नाऊँ ॥
राम हनू सुग्रीव आदि जे, तुगीगिर थिरथाई।
कोडी निन्यानवे मुक्ति गये मुनि, पूजो मन वच काई ॥
ओ ह्री श्री तुगीगिरि सिद्ध क्षेत्राय अर्घं।

श्री कुन्थल गिरि क्षेत्र

जल फलादि वसु दरब लेय थुति ठान के।
अर्घ जजो तुम पाप हरो हिय आनके ॥
पूजो सिद्ध सु क्षेत्र हिये हरषाय के।
कर मन बच तन शुद्ध, करमवश टारके ॥
ओ ह्रीं श्री कुन्थलगिरि सिद्ध क्षेत्राय अनर्घपद्र प्राप्तये अर्घं।

चूलगिरि (बावन गजा) क्षेत्र

सजि साँज आठो होय ठाडा, हरष बाढा कथन विन ।
हे नाथ भक्तिवश मिलजो, पुर न छूटे एक दिन ॥
दशग्रीव अंगज अनुज आदि, ऋषीश जहंतें शिव, लहो ।
सो शैल बडवानी निकट गिरिचूल को पूजा ठहो ॥

ओं ह्री श्री चूलगिरिसिद्ध क्षेत्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं नि० ।

श्री गजपंथ क्षेत्र का अर्घ

जल फल आदि वसु दरव अति उत्तम,मणिमय थाल भराई ।
नाच नाच गुण गाय गायके, श्री जिन चरण चढाई ॥
वल भद्र सात वसु कोडि मुनीश्वर, यहा पर करम खपाई ।
केवल लहि शिव धाम पधारे, जजूं तिन्हे शिरनाई ॥

ओ ह्रीं श्री गजपंथ क्षेत्राय अनर्घ्यपद प्राप्ताये अर्घं नि०

श्री मुक्तागिरि का अर्घ

जल गंध आदिक द्रव्य लेके, अर्घ कर ले आवनें ।
लाय चरन चढाय भविजन, मोक्षफल को पावने ॥
तीर्थ मुक्तागिरि मनोहर, परम पावन शुभ कहो ।
कोटि साढे तीन मुनिवर, जहाँ ते शिवपुर लहो ॥

ओ ह्री श्री मुक्तागिरि क्षेत्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं नि०

पावागढ़ क्षेत्र

वसु द्रव्य मिलाई भवजन भाई, धर्म सुहाई अर्घ करूँ ।
पूजा को गाऊँ हर्ष चढाऊँ, खूब नचाऊँ प्रेम भरूँ ॥

तारंगागिरि क्षेत्र

शुचि आठों द्रव्य मिलाय तिनको अर्घ करो,
मन वच तन देहु चढाय भवभव मोक्ष वरो ।
श्री तारंगागिरि से जान वरदत्तादि मुनी,
नव हुउ कोटि परमाण ध्याऊँ मोक्षधनी ॥

ॐ ह्रीं श्री तारंगागिरि सिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं नि०॥

गुणावा क्षेत्र

जल फल आदिक द्रव्य एकठी कीजिये,
कंचन थारा धारि अरघ शुभ कीजिये ।
ग्रामगुणावा जाय सुमन हर्षाय के,
गौतम स्वामी चरण जजो मन लाय के ॥

ॐ ह्रीं गुणावा ग्राम सरोवर मध्य मोक्ष प्राप्ताय श्री गौतम स्वामिने अर्घं नि० स्वाहा ।

जम्बू स्वामी (मथुरा क्षेत्र)

जल फल आदिक द्रव्य आठहु लीजिये,
कर इकठी भरि थाल अर्घ शुभ कीजिये ।
मथुरा जम्बू स्वामि मुक्ति गये जायके,
पूजिय भवि धरि ध्यान सुयोग लगायके ॥

ॐ ह्रीं चौरासी मथुराग्रामात् मोक्षप्राप्ताय श्री जम्बूस्वामिने अर्घं नि० ।

शास्त्र स्वाध्याय का प्रारम्भिक मङ्गलाचरण

ओं नमः सिद्धेभ्यः, ओ जय जय जय,

नमोस्तु ! नमोस्तु !! नमोस्तु !!!

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाण, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

ओंकारं बिन्दुसंयुक्त, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः ॥१॥

अविरल-शब्द-घनौघ-प्रक्षालित-सकल-भूतल-मल-कलङ्का ।
मुनिभिरुपासित तीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितान्

अज्ञान-तिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जन-शलाकया ।
चक्षुरुन्मीलित येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥२॥

॥ श्री परमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरवे नमः ॥

सकल-कलुष-विध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं,धर्म-सम्बन्धकं, भव्य-जीव-मन. प्रतिबोध-कारकमिदं शास्त्रं श्री (ग्रन्थ का नाम) नामधेयं, अस्य मूलग्रन्थकर्तारः श्रीसर्वज्ञदेवास्तदुत्तर-ग्रन्थ-कर्तारः श्रीगणधर-देवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचोनुसारमासाद्य श्री (आचार्य का नाम) आचार्येण विरचितं, श्रोतारः सावधानतया शृण्वन्तु ।

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी ।
मङ्गलं कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम् ॥

अर्थ—बिन्दुसयुक्तं (बिन्दु सहित) ओकारं (ओकारको) योगिन. (योगी) नित्य (सर्वदा) ध्यायन्ति (ध्याते हैं) कामद

(मनोवांछित वस्तु को देने वाले) चैव (और) मोक्षदं (मोक्ष को देने वाले) ओंकाराय (ओंकार को) नमो नमः (वार बार नमस्कार हो) अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलमलकलका (घने शब्द [दिव्यध्वनि] रूपी मेघ-समूह से जिसने संसार सम्बन्धी समस्त पापरूपी मैल को धो दिया है) मुनिभिरुपासित-तीर्था (मुनिगण जिसकी तीर्थ के रूप मे उपासना करते हैं ऐसी) सरस्वती (जिन-वाणी) न (हमारे) दुरितान् (पापो को) हरतु (नष्ट करो) ।

येन—(जिसने) अज्ञान-तिमिरांधानां (अज्ञानरूपी अन्धेरे से अन्धे हुये जीवो के) चक्षुः (नेत्र) ज्ञानाञ्जनशलाकया (ज्ञान रूपी अजन की सलाई से) उन्मीलितं (खोल दिये हैं) तस्मै (उस) श्रीगुरवे (श्री गुरु को) नम. (नमस्कार हो) । परमगुरवे (परम गुरु को) नम (नमस्कार हो) परम्पराचार्यगुरवे (परम्परागत आचार्य गुरु को) नम. (नमस्कार हो) ।

सकलकलुषविध्वसक (समस्त पापों का नाश करने वाला) श्रेयसां (कल्याणो का) परिवर्धक (बढाने वाला) धर्मसम्बन्धकं (धर्म से सम्बन्ध रखने वाला) भव्यजीवमन. प्रतिबोधकारकं (भव्यजीवो के मन को प्रतिबुद्ध—सचेत करने वाला) इदं (यह) शास्त्रं (शास्त्र) श्री (यहां पर उस शास्त्र का नाम लेना चाहिये जिसकी वचनिका करनी है) । यथा (आदिपुराण) नामधेय (नामका है) ।

अस्य (इसके) मूलग्रंथकर्तार (मूल ग्रन्थ रचयिता श्री सर्वज्ञ-देवा (श्री सर्वज्ञदेव हैं) तदुत्तरग्रन्थकर्तार (उनके बाद ग्रन्थो को गूथने वाले) श्री गणधरदेवा (गणधरदेव हैं) प्रतिगणधरदेवाः (उनके पश्चात् मुख्य आचार्य हैं) तेषां (उनके) वचोनुसारं (वचनो के अनुसार) आसाद्य (लेकर) श्री आचार्येण (श्री आचार्य ने) [यहा जिस ग्रन्थ के जो कर्ता हो उन आचार्य का नाम लेना चाहिये] विरचितं (रचा है) ।

भगवान् वीर· (महावीर स्वामी) मगल (मगल के कर्ता हो) गौतमोगणी (गौतम गणघर) मगल (मगल कर्ता हो) कुन्दकुन्दाद्या (कुन्दकुन्दस्वामी आदि आचार्य) मगल (मगलकारी हो) जैनधर्मः (तथा जैनधर्म) मगल (मगलदायी) अस्तु (होवे)। श्रोतार. (हे श्रोताओ!) सावधानतया (सावधानी से—ध्यान लगाकर) शृण्वन्तु (सुनिये)।

नोट—वाद मे ग्रन्थ का मङ्गलाचरणपढकर स्वाध्याय करना चाहिये।

स्वाध्याय के लिये उपयोगी कुछ ग्रन्थ

कथाग्रन्थ—पद्मपुराण, हरिवंशपुराण, आदिपुराण, उत्तरपुराण, पाडवपुराण, पार्श्वपुराण, जीवन्धर चरित्र, प्रद्युम्न चरित्र आदि।

अन्य ग्रन्थ—रत्नकरण्डश्रावकाचार, पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, परमात्म प्रकाश, प्रवचनसार, पचास्तिकाय, समयसार, पचाध्यायी आदि।

नोट—स्वाध्याय के वाद निम्नलिखित स्तुति पढनी चाहिए—

जिनवाणी की स्तुति

वीर हिमाचल तें निकसी गुरु गौतम के मुख कुण्ड ढरी है।
मोह-महाचल भेद चली, जग की जडता-तप दूर करी है॥
ज्ञान पयोनिधि मांहि रली बहु भंग तरंगनि सो उछरी है।
ता शुचि शारद-गंगनदी-प्रति मैं अंजुरी करि शीश धरी है॥
या जग-मन्दिर मे अनिवार अज्ञान-अन्धेर छयो अति भारी।
श्रीजिनकी ध्वनि दीपशिखा सम जो नहि होतप्रकाशन हारी
तो किस भांति पदारथ-पाति कहा लहते, रहते अविचारी।
या विधि संत कहैं धनि हैं धनि हैं जिन बैन बड़े उपकारी॥

जा वाणी के ज्ञान तें, सूझे लोक अलोक।
सो वाणी मस्तक चढ़ो, सदा देत हूं धोक॥ ○

पद्मप्रभु चालीसा

शीश नवा अर्हंत को सिद्धन करूं प्रणाम ।
उपाध्याय आचार्य का ले सुखकारी नाम ॥
सर्व साधु और सरस्वती जिन मन्दिर सुखकार ।
पद्मपुरी के पद्म को मन मन्दिर में धार ॥

जय श्री पद्मप्रभु गुणधारी, भवि जन को तुम हो हितकारी।
देवों के तुम देव कहाओ, छट्टे तीर्थंकर कहलाओ ॥
तीन काल तिहुं जग की जानो, सब बातें क्षण में पहचानो ।
वेष दिगम्बर धारण हारे, तुम से कर्म शत्रु भी हारे ॥
मूर्ति तुम्हारी कितनी सुन्दर, दृष्टि सुखद जमती नासा पर ।
क्रोध मान मद लोभ भगाया, राग द्वेष का लेश न पाया ॥
वीतराग तुम कहलाते हो, सब जग के मन को भाते हो ।
कौशाम्बी नगरी कहलाए, राजा धारणजी बतलाए ॥
सुन्दर नाम सुसीमा उनके, जिनके उर से स्वामी जन्मे ।
कितनी लम्बी उमर कहाई, तीस लाख पूरब बतलाई ॥
इक दिन हाथी बंधा निरख कर, झट आया वैराग उमडकर ।
कार्तिक सुदी त्रयोदशि भारी, तुमने मुनिपद दीक्षा धारी ॥
सारे राज पाट को तज के, तभी मनोहर वन में पहुंचे ।
तप कर केवल ज्ञान उपाया, चैत सुदी पूनम कहलाया ॥
एक सौ दस गणधर बतलाए, मुख्य वज्र चामर कहलाए ।
लाखों मुनी अर्जिका लाखों, श्रावक और श्राविका लाखों ॥

असंख्यात तिर्यंच बताये, देवी देव गिनत नही पाये।
फिर सम्मेदशिखर पर जाकर, शिवरमणी को ली परणाकर ।।
पंचम काल महा दुखदाई, जब तुमनें महिमा दिखलाई।
जयपुर राज ग्राम बाडा है, स्टेशन शिवदासपुरा है ।।
मूला नाम जाट का लडका, घर की नीव खोदने लागा।
खोदत २ मूर्ति दिखाई, उसने जनता को बतलाई ।।
चिन्ह कमल लख लोग लुगाई, पद्म प्रभु को मूर्ति बताई।
मन मे अति हर्षित होते हैं, अपने दिल का मल धोते हैं ।।
तुमने यह अतिशय दिखलाया, भूत प्रेत को दूर भगाया।
जब गंधोदक छींटे मारे, भूत प्रेत तब आप बकारे ।।
जपने से जब नाम तुम्हारा, भूत प्रेत वो करे किनारा।
ऐसी महिमा बतलाते हैं, अन्धे भी आखें पाते हैं ।।
प्रतिमा श्वेत-वर्ण कहलाए, देखत ही हिरदय को भाए।
ध्यान तुम्हारा जो धरता है, इस भव से वह नर तरता है ।।
अन्धा देखे गूगा गावे, लगडा पर्वत पर चढ जावे।
बहरा सुन-सुन कर खुश होवे, जिस पर कृपा तुम्हारी होवे ।।
मैं हूँ स्वामी दास तुम्हारा, मेरी नैया कर दो पारा।
चालीसे को चन्द्र बनावे, पद्म प्रभु को शीश नवावे ।।

नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन।
खेय सुगन्ध अपार, पद्मपुरी मे आय के ।।
होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
जिसके नहिं सन्तान, नाम वश जग मे चले ।।

श्री चन्द्रप्रभु चालीसा

वीतराग सर्वज्ञ जिन, जिन वाणी को ध्याय।
लिखने का साहस करू, चालीसा सिर नाय।१
देहरे के श्री चन्द्र को, पूजो मन वच काय।
ऋद्धि सिद्धि मंगल करें, विघ्न दूर हो जाय।२
जय श्री चन्द्र दया के सागर, देहरे वाले ज्ञान उजागर।३
शांति छवि मूरति अति प्यारी, भेष दिगम्बर धारा भारी।४
नासा पर है दृष्टि तुम्हारी, मोहनी मूरति कितनी प्यारी।५
देवों के तुम देव कहावो, कष्ट भक्त के दूर हटावो।६
समन्तभद्र मुनिवर ने ध्याया, पिंडी फटी दर्श तुम पाया।७
तुम जग मे सर्वज्ञ कहावो, अष्टम तीर्थंकर कहलावो।८
महासेन के राजदुलारे, मात सुलक्षणा के हो प्यारे।९
चन्द्रपुरी नगरी अति नामी, जन्म लिया चन्द्र-प्रभु स्वामी।१०
पौष वदी ग्यारस को जन्मे, नर नारी हरखे तब मन मे।११
काम क्रोध तृष्णा दुखकारी, त्याग सुखद मुनि दीक्षा धारी।१२
फाल्गुन वदी सप्तमी भाई, केवल ज्ञान हुआ सुखदाई।१३
फिर सम्मेद शिखर पर जाके, मोक्ष गये प्रभु आप वहां से।१४
लोभ मोह और छोड़ी माया, तुमने मान कषाय नसाया।१५
रागी नहीं, नहीं तू द्वेषी, वीतराग तू हित उपदेशी।१६
पंचम काल महा दुखदाई, धर्म कर्म भूले सब भाई।१७
अलवर प्रान्त में नगर तिजारा, होय जहां पर दर्शन प्यारा।१८
उत्तर दिशि मे देहरा माही, वहां आकर प्रभुता प्रगटाई।१९

श्री पार्श्वनाथ चालीसा

॥ दोहा ॥

शीश नवा अरिहत को, सिद्धन करूं प्रणाम ।
उपाध्याय आचार्य का ले सुखकारी नाम ॥
सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार ।
अहिच्छत्र और पार्श्व को, मन मन्दिर मे धार ॥

॥ चौपाई ॥

पार्श्वनाथ जगत हितकारी, हो स्वामी तुम व्रत के धारी ।
सुर नर असुर करें तुम सेवा, तुम ही सब देवन के देवा ।
तुमसे करम शत्रु भी हारा, तुम कीना जग का निस्तारा ।
अश्वसैन के राजदुलारे, वामा की आंखो के तारे ।
काशी जी के स्वामि कहाये, सारी परजा मौज उड़ाये ।
इक दिन सब मित्रो को लेके, सैर करन को वन मे पहुँचे ।
हाथी पर कसकर अम्बारी, इक जगल मे गई सवारी ।
एक तपस्वी देख वहा पर, उससे बोले वचन सुनाकर ।
तपसी ! तुम क्यो पाप कमाते, इस लक्कड मे जीव जलाते ।
तपसी तभी कुदाल उठाया, उस लक्कड को चीर गिराया ।
निकले नाग-नागनी कारे, मरनें के थे निकट विचारे ।
रहम प्रभू के दिल मे आया, तभी मन्त्र नवकार सुनाया ।
मर कर वो पाताल सिधाये, पद्मावति धरणेन्द्र कहाये ।
तपसी मर कर देव कहाया, नाम कमठ ग्रन्थो मे गाया ।

एक समय श्री पारस स्वामी, राज छोड़ कर वन की ठानी।
तप करते थे ध्यान लगाये, इकदिन कमठ वहां पर आये।
फौरन ही प्रभु को पहिचाना, बदला लेना दिल मे ठाना।
बहुत अधिक बारिश बरसाई, बादल गरजे बिजली गिराई।
बहुत अधिक पत्थर बरसाये, स्वामी तन को नहीं हिलाये।
पद्मावति धरणेन्द्र भी आये, प्रभु की सेवा मे चित लाये।
पद्मावति ने फन फैलाया, उस पर स्वामी को बैठाया।
धरणेन्द्र ने फन फैलाया, प्रभु के सर पर छत्र बनाया।
कर्मनाश प्रभु ज्ञान उपाया, समोशरण देवेन्द्र रचाया।
यही जगह अहिच्छत्र कहाये, पात्र केशरी जहा पर आये।
शिष्य पांच सौ संग विद्वाना, जिनको जाने सकल जहाना।
पार्श्वनाथ का दर्शन पाया, सबने जैन धरम अपनाया।
अहिच्छत्र श्री सुन्दर नगरी, जहां सुखी थी परजा सगरी।
राजा श्री वसुपाल कहाये, वो इक जिन मन्दिर बनवाये।
प्रतिमा पर पालिश करवाया, फौरन इक मिस्त्री बुलवाया।
वह मिस्तरी मांस खाता था, इससे पालिश गिर जाता था।
मुनि ने उसे उपाय बताया, पारस दर्शन व्रत दिलवाया।
मिस्त्री ने व्रत पालन कीना, फौरन ही रंग चढा नवीना।
गदर सतावन का किस्सा है, इक माली को यो लिक्खा है।
माली एक प्रतिमा को लेकर, झट छुप गया कुए के अन्दर।
उस पानी का अतिशय भारी, दूर होय सारी बीमारी।
जो अहिच्छत्र हृदय से ध्यावे, सो नर उत्तम पदवी पावे।

पुत्र सपदा की बढती हो, पापो की इक दम घटती हो।
है तहसील आवला भारी, स्टेशन पर मिले सवारी।
रामनगर इक ग्राम बराबर, जिसको जाने सब नारी नर।
चालीसे को 'चन्द्र' बनाये, हाथ जोडकर शीश नवाये।

॥ सोरठा ॥

नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन।
खेय सुगन्ध अपार, अहिच्छत्र मे आय के।
होय कुवेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
जिसके नहिं सन्तान, नाम वश जग मे चले॥

॥ श्री महावीर चालीसा ॥

(शमशाबाद नि० कवि० पूरनमल कृत)

॥ दोहा ॥

सिद्ध समूह नमों सदा, अरु सुमरू अरहन्त।
निर आकुल निर्वाच्छ हो, गए लोक के अन्त॥
मङ्गल मय मङ्गल करन, वर्धमान महावीर।
तुम चितत चिता मिटे, हरो सकल भव पीर॥

॥ चौपाई ॥

जय महावीर दया के सागर, जय श्री सन्मति ज्ञान उजागर
शात छवि मूरत अति प्यारी, वेष दिगम्वर के तुम धारी॥
कोटि भानु से अति छवि छाजे, देखत तिमिर पाप सब भाजे।
महाबली अरि कर्म विदारे, जोधा मोह सुभट से मारे।

एक सहस वसु तुमरे नामा, जन्म लियो कुण्डलपुर धामा ।
सिद्धारथ नृप सुत कहलाये, त्रिशला मात उदर प्रगटाये ।
तुम जनमत भयो लोक अशोका, अनहद शब्दभयो तिहुलोका ।
इन्द्र ने नेत्र सहस्त्र करि देखा, गिरी सुमेर कियो अभिषेखा ।
कामादिक तृष्णा ससारी, तज तुम भए बाल ब्रह्मचारी ।
अथिर जान जग अनित बिसारी, बालपने प्रभु दीक्षा धारी ।
शात भाव धर कर्म विनाशे, तुरतहि केवल ज्ञान प्रकाशे ।
जड-चेतन त्रय जग के सारे, हस्त रेखवत् सम तू निहारे ।
लोक-अलोक द्रव्य षट जाना, द्वादशाग का रहस्य बखाना ।
पशु यज्ञो का मिटा कलेशा, दया धर्म देकर उपदेशा ।
अनेकान्त अपरिग्रह द्वारा, सर्वप्राणि समभाव प्रचारा ।
पञ्चम काल विषै जिनराई, चादनपुर प्रभुता प्रगटाई ।
क्षण मे तोपनि बाढि-हटाई, भक्तन कें तुम सदा सहाई ।
मूरख नर नहिं अक्षर ज्ञाता, सुमरत पंडित होय विख्याता ।

॥ सोरठा ॥

करे पाठ चालीस दिन नित चालीसहिं बार ।
खेवै धूप सुगन्ध पढ, श्री महावीर अगार ॥
जनम दरिद्री होय अरु जिसके नहिं सन्तान ।
नाम वश जग मे चले, होय कुबेर समान ॥

पूरनमल रचकर चालीसा ।
हे प्रभु तोहि नवावत शीशा ॥

आरती—पञ्च परमेष्ठी

इह-विधि मंगल आरति कीजै, पञ्च परमपद भज सुख लीजै ।टेक
पहली आरति श्रीजिनराजा। भव-दधि पार उतार जिहाजा ॥
इह विध० ॥१॥
दूसरी आरति सिद्धन केरी । सुमरन करत मिटै भव फेरी ॥
इह विध० ॥२॥
तीजी आरति सूर मुनिंदा । जनम-मरन दुख दूर करिंदा ॥
इह विध० ॥३॥
चौथी आरति श्रीउवझाया । दर्शन देखत पाप पलाया ॥
इह विध० ॥४॥
पाचमि आरति साधु तिहारी । कुमति-विनाशन शिव अधिकारी॥
इह विध० ॥५॥
छट्ठी ग्यारह प्रतिमा धारी । श्रावक बन्दों आनन्दकारी ॥

भव-भय-भीत शरन जे आये। ते परमारथ-पथ लगाये ॥
आरती श्री० ॥३॥
जो तुम नाम जपै मनमाहीं। जनम-मरन-भय ताको नाहीं ॥
आरती श्री० ॥४॥
समवसरन-सपूरन शोभा। जीते क्रोध-मान-छल-लोभा ॥
आरती श्री० ॥५॥
तुम गुण हम कैसे करि गावें। गणधर कहत पार नहिं पावें ॥
आरती श्री० ॥६॥
करुणासागर करुणा कीजे। 'द्यानत' सेवक को सुख दीजे ॥
आरती श्री० ॥७॥

आरती श्रीवर्द्धमानजीकी

करो आरती वर्द्धमानकी। पावापुर निरवान थानकी। टेक।
राग-विना सब जगजन तारे। द्वेष विना सब कर्म विदारे॥
शील-धुरंधर शिव-तिय भोगी। मन-वच-कायन कहिये योगी।
करो० ॥२॥
रतनत्रय निधि परिग्रह-हारी। ज्ञानसुधा-भोजनव्रतधारी ॥
करो० ॥३॥
लोक अलोक व्यापै निजमाहीं। सुखमय इंद्रिय सुखदुखनाहीं।
करो० ॥४॥
पचकल्याणकपूज्य विरागी। विमल दिगंबर अंबर-त्यागी ॥
करो० ॥५॥

गनमनि-भूषन भूषित स्वामी । जगत उदास जगतर स्वामी ॥
करौं० ॥ [illegible]॥

कहै कहा लौं तुम सबजानो ।'द्यानत'की अभिलाष प्रमानो ।'
करौं० ॥[illegible]॥

आरती श्री महावीर स्वामी

आरती श्री चन्द्र प्रभु

म्हारा चन्द्र प्रभु जी की सुन्दर मूरत, म्हारे मन भाई जी ।। टेक
सावनसुदि दशमी तिथि आई, प्रगटे त्रिभुवन राईजी ।।
अलवर प्रांत मे नगर तिजारा, दरशे देहरे माही जी ।।
सीता सती ने तुमको ध्याया, अग्नि में कमल रचायाजी ।।
मैंना सती ने तुमको ध्याया, पति का कुष्ठ हटाया जी ।।
जिनमे भूत प्रेत नित आते, उनका साथ छुड़ाया जी ।।
सोमा सती ने तुमको ध्याया, नाग का हार बनाया जी ।।
मानतुंग मुनि तुमको ध्याया, तालों को तोड भगाया जी ।।
जो भी दुखिया दर पर आया उसका कष्ट मिटाया जी ।।
अंजन चोर ने तुमको ध्याया, सूली से अधर उठाया जी ।।
समवशरण मे जो कोई आया, उसको पार लगाया जी ।।
सेठ सुदर्शन तुमको ध्याया, सूली से उसे बचाया जी ।।
ठाडो सेवक अर्ज करै छै, जनम-मरण मिटाओ जी ।।
'नवयुग मण्डल' तुमको ध्यावै बेडा पार लगाओ जी ।।

जाप्य-मंत्र

३५ अक्षरों का मन्त्र—

णमो अरिहन्ताण, णमो सिद्धाण, णमो आइरियाण ।
णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्वसाहूण ।।

१६ अक्षरो का मन्त्र—

अरहंत सिद्ध आइरिया उवज्झाया साहू

६ अक्षरो के मन्त्र—

(१) अरहन्त सिद्ध (२)अरहन्त सि सा (३)ओ नम सिद्धेभ्य (४) नमोऽर्हत्सिद्धेभ्य

५ अक्षरो का मन्त्र—

अ सि आ उ सा

४ अक्षरो के मन्त्र—

(१) अरहन्त (२) अ सि साहू

२ अक्षरो के मन्त्र—

(१) सिद्ध (२) अ आ (३) ओ ह्री

१ अक्षर का मन्त्र— ओम्

ओम् कैसे बनता है :—

अरहन्ता असरीरा आयरिया तह उवज्झया मुणिणो।
पढमक्खर-णिप्पण्णो ओंकारो पच-परमेट्ठी ॥

अर्थ—पाचो परमेष्ठियो के पहिले अक्षर मिलाने पर ओम् बनता है। यही नीचे बताते है :—

अरहन्त का पहिला अक्षर		अ	
अशरीरी (सिद्ध)	,,	अ	अ+अ=आ
आचार्य	,,	आ	आ+आ=आ
उपाध्याय	,,	उ	आ+उ=ओ
मुनि (साधु)	,,	म्	ओ+म्=ओम्

इसको ओ३म् इस प्रकार भी लिखते हैं।

रत्नत्रय जाप्य मन्त्र

ओ ह्री श्री सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नम ।

दशलक्षण जाप्य मन्त्र

ओ ह्री अर्हन्मुखकमल-समुद्गताय उत्तमक्षमा-धर्माङ्गाय नम.

अथवा

ओं ह्रीं उत्तमक्षमा-धर्माङ्गाय नमः ।

इसी प्रकार 'उत्तममार्दव' आदि धर्मों का मन्त्र जानना चाहिये ।

षोडशकारण जाप्य मन्त्र

ओं ह्रीं श्री दर्शनविशुद्धि आदि षोडशकारणेभ्यो नमः।

नन्दीश्वर व्रत (अष्टान्हिक व्रत) जाप्य मन्त्र

(१) ओं ह्रीं नन्दीश्वरसंज्ञाय नमः (२) ओं ह्रीं अष्टमहा-विभूतिसंज्ञाय नमः । (३) ओं ह्रीं त्रिलोकसागरसंज्ञाय नमः । (४) ओं ह्रीं चतुर्मुखसंज्ञाय नमः । (५) ओं ह्रीं पंच-महालक्षण-संज्ञाय नमः । (६) ओं ह्रीं स्वर्गसोपान-संज्ञाय नमः । (७) ओं ह्रीं श्री सिद्धचक्राय नमः । (८) ओं ह्रीं इन्द्रध्वज-संज्ञाय नमः ।

पुष्पांजलि व्रत जाप्य मन्त्र

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धि अशीति-जिनालयेभ्यो नमः ।

रोहिणी व्रत जाप्य मन्त्र

ओं ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः

ऋषि-मण्डल जाप्य मन्त्र

ओं ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सम्यग्-दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो ह्रीं नमः

सिद्धचक्र-विधान के समय का जाप्य मन्त्र

ओं ह्रीं अर्हं अ सि-आ-उ सा नमः स्वाहा ।

त्रैलोक्य मंडल विधान का जाप्य मंत्र

ओं ह्रीं श्रीं अर्हं अनाहत-विद्याधिपाय त्रैलोक्यनाथाय नमः सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ।

लघु शान्ति मंत्र

ओं ह्रीं अर्हं असिआउसा सर्वशान्ति कुरुत कुरुत स्वाहा ।

वेदी प्रतिष्ठा कलशारोहण तथा विम्ब स्थापन के समय का जाप्य मन्त्र

ओ ह्री श्री क्ली अर्हं असिआउसा अनाहत विद्यायै अरिहन्ताण ह्री सर्वशान्ति कुरुत कुरुत स्वाहा ।

रविव्रत जाप्य मन्त्र

ॐ ह्री नमो भगवते चिन्तामणि-पार्श्वनाथ सप्तफणमडिताय श्री धरणेन्द्र-पद्मावती-सहिताय मम ऋद्धि सिद्धि वृद्धि सौख्य कुरु कुरु स्वाहा।

रविव्रत लघु जाप्य मंत्र

ॐ ह्री अर्हं श्री चिन्तामणि-पार्श्वनाथाय नम

मनोरथ सिद्धि दायक मन्त्र

ॐ ह्री श्री अर्हं नम

रोग नाशक मन्त्र

ॐ ऐ ह्री श्री कलिकुण्डदण्डस्वामिने नम । आरोग्य-परमैश्वर्यं कुरु कुरु स्वाहा ।

यह मन्त्र श्री पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा के सामने शुद्ध भाव और क्रिया पूर्वक १०८ बार जपना चाहिये ।

मंगलदायक मन्त्र

ओ ह्री वरे सुवरे असिआउसा नम

एकान्त मे प्रतिदिन १०८ बार धूप के साथ, शुद्ध भाव पूर्वक जपे ।

ऐश्वर्यदायक मन्त्र

ओ ह्री असिआउसा नम स्वाहा ।

सूर्योदय के समय पूर्व दिशा मे मुख करके प्रतिदिन १०८ बार शुद्ध भाव से जपे ।

सर्वसिद्धिदायक मन्त्र

ओं ह्रीं क्लीं श्रीं अर्हं श्री वृषभनाथ-तीर्थंकराय नमः

समस्त कार्यों की सिद्धि के लिए प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक १०८ बार जपना चाहिये।

सर्वग्रह शान्ति मन्त्र

प्रातः एकान्त जप करें।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्व-शान्ति-कुरु कुरु स्वाहा

रोग निवारक मन्त्र

ओं ह्रीं सकल-रोगहराय श्री सन्मति देवाय नमः

शान्ति कारक मन्त्र

ओं ह्रीं परमशान्ति विधायक श्री शान्तिनाथाय नमः

संक्षिप्त सूतकविधि।

सूतकमें देव शास्त्र गुरुका पूजन प्रक्षालादिक तथा मंदिर जी की जाजम वस्त्रादिको स्पर्श नहीं करना चाहिये। सूतक का समय पूर्ण हुये बाद पूजनादि करके पात्रदानादि करना चाहिये।

१—जन्मका सूतक दश दिन तक माना जाता है।

२—यदि स्त्रीका गर्भपात (पांचवे छठे महीने में) हो तो जितने महीने का गर्भपात हो उतने दिनका सूतक माना जाता है।

३—प्रसूति स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है, कहीं-कहीं चालीस दिनका भी माना जाता है। प्रसूतिस्थान एक मास तक अशुद्ध है।

४—रजस्वला स्त्री चौथे दिन पतिके भोजनादिकके लिये शुद्ध होती है परन्तु देव पूजन, पात्रदानके लिये पांचवें दिन शुद्ध होती है। व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक रहता है।

५—मृत्युका सूतक तीन पीढी तक १२ दिनका माना जाता है। चौथी पीढी मे छह दिनका, पाचवी छठी पीढी तक चार दिनका, सातवी पीढी मे तीन, आठवी पीढी मे एक दिन रात, नवमी पीढी में स्नान मात्र में शुद्धता हो जाती है।

६—जन्म तथा मृत्युका सूतक गोत्रके मनुष्यका पाच दिनका होता है। तीन दिनके बालककी मृत्यु का एक दिन का, आठ वर्षके बालक की मृत्यु का तीन दिन तक का माना जाता है। इसके आगे बारह दिनका।

७—अपने कुलके किसी गृहत्यागी का सन्यासमरण या किसी कुटुम्बी का सग्राम मे मरण हो जाय तो एक दिन का सूतक माना जाता है।

८—यदि अपने कुलका कोई देशातरमे मरण करे और १२ दिन पहले खबर सुने तो शेष दिनो का ही सूतक मानना चाहिये। यदि १२ दिन पूर्ण होगये हो तो स्नान-मात्र सूतक जानो।

९—गौ, भैस, घोडी आदि पशु अपने घरमे जनै तो एक दिनका सूतक और घरके बाहर जनै तो सूतक नही होता। घरमे दासी तथा पुत्रो के प्रसूति होय तो एक दिन, मरण हो तो तीन दिनका सूतक होता है। यदि घरसे बाहर हो तो सूतक नही। जो कोई अपनेको अग्नि आदिक मे जलाकर वा विष, शस्त्रादिसे आत्महत्या करै तो छह महीनेतकका सूतक होता है। इसी प्रकार और भी विचार है सो आदिपुराणसे जानना।

१०—बच्चा हुये बाद भैसका दूध १५ दिन तक, गायका दूध १० दिन तक, बकरीका ८ दिन तक अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है। देश भेदसे सूतक विधानमे कुछ न्यूनाधिक भी होता है परन्तु शास्त्रकी पद्धति मिलाकर ही सूतक मानना चाहिये।

अरहंत पासा केवली

प्रत्येक व्यक्ति के मन में अपना भविष्य जानने की प्रबल इच्छा होती है और इसके लिए वह जन्म कुण्डली, हस्तरेखा या अन्य उपायों द्वारा भविष्य जानने के लिए प्रयत्नशील रहता है। इसी इच्छा की पूर्ति के लिए श्री पंडित वृन्दावन जी काशी निवासी रचित अरहंत पासा केवली यहां दी जा रही है। अत्यन्त शुद्धिपूर्वक, श्रद्धा सहित, बताई हुई विधि के अनुसार कार्य करके इसके द्वारा अपने भवितव्य की झांकी का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

पासा केवली से शुभाशुभ देखने के लिए पवित्रता, मनमें शान्ति एवं श्रद्धा होना आवश्यक है। प्रातःकाल स्नानादि क्रियाओं से स्वच्छ होकर स्वच्छ वस्त्र पहिन कर किसी पाटे, चौकी पर पुस्तक को रख कर, पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुंह करके पद्मासन या अर्द्धपद्मासन में बैठे। उस समय सीधा स्वर चल रहा हो इसका भी ध्यान रखा जाय। फिर अपने मनमें प्रश्न का विचार करे और श्री अरहंत प्रभु का ध्यान करते हुए पुस्तक में लिखे मन्त्रों का उच्चारण कर तीन बार पासा डालना चाहिए। प्रत्येक बार जो वर्ण पासा के ऊपर की ओर आये उसे लिख लेना चाहिए। इस प्रकार तीन बार में तीन वर्ण आयेंगे उनका फल पुस्तक में देखकर विश्वास करना चाहिए, और उसी के अनुसार आचरण करना चाहिए।

अरहंत पासा केवली

दोहा—श्रीमत वीर जिनेश पद, वन्दो शीस नवाय।
गुरु गौतम के चरण नमि, नमो शारदा माय॥
श्रेणिक नृप के पुण्यते, भापी गणधर देव।
जगत हेत अरहंत यह, नाम केवली सेव॥
चन्दन के पासा विषै, चारो ओर सुजान।
एक एक अक्षर लिखो, श्री अ र ह त विधान॥
तीन बार डारो तबे, करि वर मन्त्र उचार।
जो अक्षर पासा कहैं, ताको करो विचार॥
तीन मन्त्र है तासु के, सात सात ही बार।
थिर ह्वै पासा डालियो, करिके शुद्ध उच्चार॥
जानि शुभाशुभ तासुतैं, फल निज हृदय नियोग।
मन प्रसन्न ह्वै सुमरियो, प्रभु पद सेवहु जोग॥

* प्रथम मन्त्र—ॐ ह्रीं श्री बाहुबलि लंब बाहु ओ क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्ष क्ष उद्धर्वभुजा कुरु कुरु शुभाशुभं कथय कथय भूत-भविष्यत्त-वर्तमान दर्शय दर्शय सत्य ब्रूहि सत्य ब्रूहि स्वाहा।(यह प्रथम मन्त्र सात बार जप कर पासा डालना)

दूसरा मन्त्र—ओ ह ओ स ओ क्ष सत्य वद सत्य वद स्वाहा।

(दूसरा मन्त्र भी सात बार जपकर पासा डालना)

---

* यदि मन्त्र के उच्चारण मे कठिनाई हो तो णमोकार मन्त्र को बोलकर भी पासा डाला जा सकता है।

तीसरा मन्त्र—ओ ह्री श्री विश्वमालिनि, विश्व-प्रकाशिनि अमोघवादिनि सत्य ब्रूहि सत्यं ब्रूहि एह्येहि विश्वमालिनी स्वाहा ।

(यह भी सात वार पढकर पासा डालना)

नोट—मन एकत्र कर, विनय सहित अभिप्राय विचार कर श्री अरहत भगवान के नाम के अक्षरो (अ, र, ह त) का पासा तीन बार डालना चाहिए । जो जो अक्षर पड़ें, उनको मिलाकर उनका फल जानना चाहिए । जिन मार्ग मे यह बडा निमित्त है ।

(वृन्दावन)

अथ अकारादि प्रथम प्रकरण

अ, अ, अ । यदि ये तीन अक्षर पडें, सुख और कल्याण मङ्गल हो, सम्मान बढे, लक्ष्मी को प्राप्ति हो, व्यापार मे तथा विदेश मे धन लाभ हो, युद्ध मे जीत हो, राज दरबार में सम्मान मिले, सब सङ्कट, रोग, शोक, दरिद्रता का नाश हो । सब प्रकार से कल्याण हो । यह नि सन्देह विश्वास करना चाहिए ।

अ, अ, र । इन तीनो का फल मध्यम होता है । मन का विचारा हुआ, पूर्व पाप के कारण बाधा पडने से शीघ्र सफल नही होगा । इसलिए मनवाछित फल प्राप्त करने के लिए अपने इष्टदेव श्री अरहत वीतराग भगवान की

आराधना करना चाहिए। इससे कुछ समय बाद इच्छित फल की प्राप्ति होगी।

श्र, श्र, ह। इनका फल शुभ होता है। धन धान्य का समागम होगा। परदेश गमन से इच्छित फल की प्राप्ति होगी। भाई बन्धु से प्रेम भाव बढेगा। शत्रुओ का दमन होगा। सम्पूर्ण बाधाएं दूर होगी। धर्म पुण्य के प्रभाव से सब प्रकार का मङ्गल होगा। हे प्रश्नकर्त्ता! तुम्हारा विचारा हुआ शुभ है। अत शुभ फलकी निश्चित प्राप्ति होगी।

श्र, अ, त। हे दयालु! तेरा प्रश्न शुभ है। तेरे घर मे पुत्र पौत्रादि का सुख होगा, हितैषी मित्रो से लाभ होगा। सब प्रकार के रोगादि से छुटकारा होगा। खोटे ग्रह दूर होगे। परदेश मे गए हुए भाई और मित्रो का शुभ मिलन होगा। कुल की बढवारी होगी, सज्जनो से मित्रता होगी। तेरे आगामी दिन सुख और सौभाग्य को देने वाले होगे। तू वीतराग भगवान का सदा ध्यान किया कर।

श्र, र, श्र। तेरा विचार श्रेष्ट है, उत्तम फलका देने वाला है, प्रतिदिन आनन्द की वृद्धि होगी। पाप के उदय से तेरा नष्ट हुआ धन फिर मिलेगा, राजा द्वारा सम्मान होगा, भाई बन्धुओ से मिलाप होगा। हर प्रकार से तेरी गृहस्थी सुखी होगी। अब तेरे सब पापो का अन्त होगया है। इसलिए धर्म के प्रभाव से सुख

समृद्धि का वास होगा। तू अपने कर्त्तव्य कर्म मे विश्वास पूर्वक लगा रह।

अ, र, र। हे भाई! तेरा पुण्य बलवान है। तुझे धन का लाभ होगा। सब स्थानो मे यश बढेगा, जहा भी जायगा सम्मान पायेगा और सब तेरे शुभ-चिन्तक हो जावेंगे। जल, अग्नि मरी आदि उपद्रव तेरा कुछ भी बिगाड नही कर सकेंगे। शत्रु वश मे होगे, सब प्रकार के सुख की प्राप्ति होगी। यह सब तेरे धर्म का प्रभाव है। इसलिये तू धर्म का पालन मत छोडना, बस तेरा भविष्य सुखमय है।

अ, र, ह। ये तीनो वर्ण सौभाग्य सम्पत्ति के सूचक हैं। तेरा जो मनोरथ है वह सरलता से फलित होगा। जो घर मे थोडा सा क्लेश है, उसकी चिन्ता न कर। इसके लिए तू श्री महावीर प्रभु की पूजा कर, तेरे सब विघ्न दूर होगे। मनकी चिन्ता दूर कर मनको एकाग्र कर, तुझे सब सुखो की प्राप्ति होगी। श्री अरहत का ध्यान कर, तुझको सब सिद्धिया प्राप्त होगी।

अ, र, त। इन तीनो वर्णोंके आने पर सब सुखो की प्राप्ति होती है। तुझे स्त्री, पुत्र और पश्चात् पौत्र का भी लाभ होगा। तेरे कुल की शोभा होगी। तुम जहा भी जाओगे, वही तुम्हारी कीर्ति बढेगी। संसार तुम्हें प्यार करेगा। तुम्हारा प्रश्न शुभ है, तुम्हारे मनमे प्रभु का ध्यान होना चाहिए। देखो तुम्हारे ललाट पर तिल का चिह्न होना चाहिए।

अ, ह, अ। हे प्रश्नकर्त्ता! सुनो। पहले तुम्हें कुछ कष्ट होगा, परन्तु शीघ्र ही वह दुख दूर होगा और दिन प्रतिदिन धन की बढवारी होगी, सज्जनो की सङ्गति होगी। हे विचारक! तुमने जो सोचा है सो सब सफल होगा। तुम महावीर भगवान के नाम की तीनो (प्रात मध्याह्न, सायङ्काल) समय एक एक माला फेरा करो।

बन्धुओ की चिन्ता सता रही है, यह दूर होगी। वे धन धान्य से भरे हुए हाथी घोडो के साथ सुख पूर्वक तेरे से मिलेंगे। तू अपने हृदय की चिन्ता दूर कर। अब तेरे सुख के दिन है।

अ, त, ह,। हे बन्धु ! तेरा अशुभ का उदय है, कही लाभ दिखाई नही देता। अभी तो तेरा हाथ का धन और जाता दिखता है। तेरे शुभ चिन्तक भाई बन्धु स्त्री पुत्र, सम्पत्ति आदि का अनिष्ट ही दिखाई पडता है और चारो ओर शत्रु ही शत्रु भरे पडे हैं। इसलिए इन विघ्नो को दूर करने के लिए तू ६१ दिन तक "ओ ह्री अ, सि, आ, उ, सा, सर्वविघ्न विनाशनाय नम स्वाहा।" इस मन्त्र की नित्य शुद्ध होकर ११-११ मालाओ से जाप दे, तेरा विघ्न दूर होगा और घर मे मगलाचार होगा।

अ, त, त। हे भव्य जीव ! तुझे धन लाभ होगा सम्पत्ति बढ़ेगी, सुख का विस्तार होगा। सब इच्छाएँ पूर्ण होगी। प्रिय बन्धु और मित्रो का मिलाप होगा, दिन दिन लाभ ही बढेगा तू जिस तरफ भी ध्यान देगा सब तरफ सफलता ही मिलेगी। युद्ध मे वाद विवाद मे तेरी विजय होगी। तू सन्देह मत कर। तू अपना पुण्य उदय समझ कर धीरज से कार्य कर, सफलता तेरे चरणो मे हैं।

अथ रकारादि द्वितीय प्रकरण

र, अ, अ ! इन अक्षरो के पडने से धन, सम्पत्ति का और सज्जनो से मिलाप होता है। सोना, चादी, वस्त्र, गहने, नाना प्रकार के रत्न आदि इच्छित पदार्थों की प्राप्ति अवश्य होगी। रात्रि के अन्त मे हाथी, घोडे या रथ मे चढे हुए फलो की माला पहने हुए देवताओ का विमान मे बैठे हुए आना दिखाई देगा।

र, अ, र। हे पृच्छक ! तुझे इच्छित फलकी प्राप्ति होगी। तुम्हे व्यापार और खेती मे लाभ होगा। तुमसे देश और उसके निवासियो को लाभ पहुचेगा, तुम्हें परदेश मे लाभ होगा। तुम्हारे

र, र ह। दो रकार के साथ ह आने पर महाफल का लाभ होता है। आनन्द देने वाली सुख सम्पत्ति सरलता से ही प्राप्त होगी। घरमे नित्य आनन्द का राज होगा। नित्य धनकी प्राप्ति होगी। तुम्हे जमीन, जायदाद, देश और नगरो पर भी अधिकार मिलेगा। तुम मन मे जो विचारोगे वही मिलेगा। राजा से तुम्हे सब प्रकार का लाभ होगा। इस प्रकार तुम्हारे घरमे सदा सुख का निवास होगा।

र, र, त। तुमनें अपने मनमे वडा बुरा सोचा है। तुमने परस्त्री की इच्छा से अनेको खोटे काम किये हैं और इसी से तुम्हारे धनका नाश हुआ है। घर मे कलह हुई है। तुमने राज दण्ड भी भोगा है। इसलिए अब इस मार्ग को छोडकर ब्रह्मचर्य को धारण करो और शुभ कार्य करो। इसीसे मनुष्य जन्म सफल होगा।

र, ह, अ। ये तीनो वर्ण शुभके सूचक हैं। स्त्री, पुत्र, धन, मान आदि की प्राप्ति होगी। ससार मे यश बढेगा। धर्मके मार्ग मे मन लगेगा। युद्ध मे, विदेश मे, व्यापार मे सब जगह शीघ्र ही विजय होगी।

र, ह, र। हे भाई! तुमने वडा उल्टा मार्ग पकडा है। तुमने जो सोचा है उसे मनसे निकाल दो। इसके करने से लाभ न होगा, बल्कि सब प्रकार कष्ट ही होगा। तुम्हारे दुश्मन वहुत है, तुम्हे कही भी सुख न मिलेगा। इसलिए तू इस विचारे हुए कार्य को छोड दे, और ससार के सुखको व्यर्थ समझकर सच्चे सुखकी प्राप्ति के लिए वीतराग भगवान के मार्ग को ग्रहण कर।

र, ह, ह। हे प्रश्नकर्त्ता! तेरा अशुभ का उदय है। इसलिए जो भी तू करेगा उसका खोटा ही फल मिलेगा। तुम्हारे जो मित्र बनें हुए है उन पर विश्वास मत करो, सब तुम्हारे शत्रु हैं, तुम्हारे धन का नाश कराने पर तुले हुए हैं। तुम धनकी इच्छा करते हो, वह इस समय नही मिलेगा। इसलिए तुम धर्मकी आराधना करो।

पार्श्वनाथ भगवान की भक्ति और जाप करो उससे कुछ समय बाद सफलता मिलेगी।

र,ह, त। अहो पूछने वाले! इसका क्या फल कहूँ। तेरा बडा शुभ का उदय है। तुझे विद्या की प्राप्ति, कवियो मे सम्मान, व्यवहार मे निपुणता मिलेगी, स्त्री और पुत्र का लाभ होगा। व्यापार मे धन प्राप्त होगा। भाई बन्धुओ और मित्रो से वस्त्र और आभूषणो के साथ मिलाप होगा। परिवार के सुख के लिए नित्य भगवान की पूजा कर।

र, त, अ। हे पृच्छक! तुम्हारे सोभाग्य दिन हैं तुम्हारे हृदय मे जो पुत्रादि के सुखकी लालसा है, धन सुख आनन्ददायक भोजन पान की इच्छा है वह सब पूर्ण होगी। तुम्हे मन्त्र तन्त्र और औषधि से सर्वत्र सफलता प्राप्त होगी।

र, त, र। हे सज्जन! तुम शान्ति से सुनो। तुम्हारे उद्योग से पद पद पर सफलता मिलेगी। इसलिए तुम अपने कार्य मे लगे रहो, तुम्हे लाभ होगा। श्री जिनराजकी सेवा से तुम्हे स्त्री, पृथ्वी, धन मिलेगा। राजा द्वारा सम्मान मिलेगा। हाथी, घोडे, आभूषणो की बिना चाहे ही प्राप्ति होगी।

र, त, ह। हे भाई! तुमने पहले बहुत कष्ट भोगे हैं पर वे अब दूर होगये। तुम्हारे हृदय मे जो धन, स्त्री, पुत्र, गहनो की चिन्ता है वह दूर होगी। शरीर के रोग, शोक और दु खो का नाश होकर जिनधर्म के प्रभाव से तेरे हृदय के सब मनोरथ पूर्ण होगे।

र, त, त। हे प्रश्नकर्त्ता! तेरा प्रश्न अच्छा हे। तेरे सब कार्य सफल होगे। इच्छित धन सम्पत्ति का लाभ हागा। तुम जो विचारोगे वह सरलता से सिद्ध होगा। यह सब धर्म का प्रभाव है इसमे सन्देह मत करो। तुम जो कल्याणके लिए तप धारण करना चाहते हो, तुम्हे उसमे भी सफलता मिलेगी। इसलिए तुम

वीतराग भगवान के बताये हुए तप के मार्ग को ग्रहण करो जिससे सच्चे और स्थायी सुखकी प्राप्ति हो।

अथ ह्कारादि तृतीय प्रकरण।

हं, अ, अ। इन तीनो वर्णो का फल चिन्ताकारक है। कष्ट चिन्ता, कार्य-विनाश, लोक-निन्दा और युद्धमे पराजय, उद्योग मे असफलता मिलती है। कार्यसिद्धि के लिए जो भी प्रयत्न करते हो उसीमे असफलता मिलेगी। इसलिए इस समय मौन होकर कुछ समय धर्म ध्यान करो। शुभ उदय आते ही सफलता मिलेगी।

ह, अ, र। यह बहुत लाभदायक पासा पडा है। तुम्हारे सभी मनोरथ सफल होगे। स्त्री एव धनकी प्राप्ति होगी, भाइयो से सुख पहुँचेगा। हरेक कार्य मे, घरमे, विदेशमे, सर्वत्र लाभ ही लाभ होगा। तुम्हारे सब रोग शाक दूर होगे। अच्छे दिनो मे भगवान की आराधना भक्तिपूर्वक करते ही रहना क्योकि धर्म ही सदा सहायक होता है।

हं, अ, ह। हे भव्य तुम बहुत सरल एव सीधे स्वभाव के हो। तुम मित्र और शत्रु को समान समझते हो। तुमने ऐसे लोगो के लिए अपना धन खर्च किया है। परन्तु यह कलिकाल है और तुम साधु स्वभाव वाले हो। चिन्ता मत करो, तुम्हारा अच्छा समय है, गया हुआ धन मिलेगा। पुण्य की जड सदा हरी होती है।

ह, अ, त। हे प्रश्नकर्त्ता! तेरा शुभ का उदय है। धर्म के प्रताप से तेरे सारे क्लेश और व्याधिया दूर हुई है, धनधान्य की प्राप्ति होगी। परदेश मे धन लाभ होगा, तुझे जो धन की चिन्ता है वह पूरीहोगी और स्त्री,पुत्र आभूषण तथा सकल सुखो की प्राप्ति होगी।

ह, र, अ। ये तीनो वर्ण परम लाभ के सूचक हैं। तेरे सभी इच्छित कार्य पूरे होगे, धन धान्य बढेगा। देश विदेशो मे यश

की बढवारी होगी। जहा जायगा लाभ होगा। यह सब जानते है कि भगवान की भक्ति से तथा जप दानसे सब कार्य सिद्ध होते हैं।

हं, ह, ह। इन तीनो वर्णो का फल परम लाभ का सूचक है। देश मे सुख शान्ति हो, धन की प्राप्ति हो, खोई हुई जायदाद प्राप्त हो, लडाई झगडे मे सफलता मिले, व्यापार मे धन मिले, बन्धुओ और मित्रो से स्नेह बढे। तुम्हारे सम्पूर्ण प्रकार के आनन्द होगे, श्रद्धा से धर्म का सेवन करो।

हं, हं, त। हे पूछने वाले! तुझे अच्छा लाभ होगा। तुम परदेश जाना चाहते हो, वहा तुम्हे धन लाभ होगा। खेती व्यापार नौकरी आदि मे इच्छानुसार लाभ होगा। देव, गुरु, शास्त्र के प्रभाव से ससार मे सुखके साधन, धन, धान्य, सोना, चादी आदि तुझे इच्छानुसार मिलेगे। तू श्री महावीर प्रभू की सेवा मे मन लगा।

ह, त, अ। ये तीनो वर्ण पूछने वाले के मनके भाव साफ प्रगट कर रहे हैं। हे पृच्छक! तू लोभ मे फसकर परधन चाहता है, यह अच्छा नही। तू सतोष को धारण कर लोभ को त्याग कर जो होनहार है होकर रहेगा। परन्तु कुछ समय बाद तेरे पुण्य का उदय है, उस समय तेरा कल्याण होगा, तब तक तू वीतराग भगवान की आराधना कर।

ह, त, र। तेरे मन मे दूसरे के धन की आशा लगी है, तू चाहता है वह तुझे मिलेगा। धनकी प्राप्ति, यशकी वृद्धि का समागम होगा और तेरा गया हुआ धन भी पुन मिलेगा। इस प्रकार हे सज्जन! तू जो भी विचारता है तेरा सब मनवाछित प्राप्त होगा। ऐसा समझकर हृदय की चिन्ता दूर कर दान पुण्य आदि शुभ कार्यों को कर।

ह, त, हं। हे पूछने वाले! तेरा मन खोटे कर्मो मे लगा हुआ है, तू चोरी से, जुए से, सट्टे से धन चाहता है तू दुख

परदेश गमन तथा तीर्थयात्रा की इच्छा है तथा तेरे शरीर मे जो रोग या पीडा है वह एक महीने मैं दूर होगी और इच्छानुसार धन लाभ होगा। तुझे सब प्रकार के आनन्द प्राप्त होगे। तू बीच का यह एक महीने का समय श्री वीर प्रभु की सेवा मे लगा।

त, र, अ। तुम्हारा डाला हुआ यह पासा प्रकट करता है कि तुझे धन की चिन्ता है, और इसलिए तुम परदेश गमन करना चाहते हो। अत. हे सज्जन तुम जाओ। तुम्हे वहा धन का लाभ, वस्त्र, आभूषण स्त्री पुत्रादि की प्राप्ति होगी। माता, पिता और बन्धु का समागम होगा। यह सब गुरु सेवा का फल है। इसलिए हे भाई! तुम आगे भी वीतराग भगवान की मन लगाकर सेवा करते रहो, इसी मे तुम्हारा कल्याण है।

त, र, र। हे पृच्छक! तुम्हारी चिन्ता तुम्हारे पासे से ही प्रकट होती है। तुम्हारे घर मे मे दरिद्रता ने पैर जमाये है, अत. तुम रात दिन धन की चिन्ता करते हो और उसी के उपाय भी करते हो, किन्तु अभी ३ वर्ष तक तुम्हारा शुभका उदय नही। अत इस समय के बाद ही तुम्हे सुखकी सामग्री प्राप्त होगी, उसी समय तुम किसी अन्य नये कार्य मे मन लगाना। उसी से तुम्हे लाभ और यश मिलेगा।

त, र, हं। हे सज्जन! यह बहुत शुभ पासा है। इसके प्रताप से तुझे सब कल्याण की सामग्री मिलेगी। जिनेन्द्र भगवान की सेवा के प्रभाव से सब विघ्न बाधाएँ पल भरमे दूर होगी। धन, पुत्र, युद्ध मे विजय, भाइयो के साथ प्रेम बढेगा। घरमे लडाई झगडे न होगे। तुम्हारे सारे पाप, सन्ताप दूर होकर कल्याण की प्राप्ति होगी। तुम इस सुखको स्थायी बनाने के लिए भगवान की आराधना करते रहो।

त, र, त। यह बहुत अच्छा शकुन है। तुम्हारा मन धन की चिन्ता मे दुखी है, बहुत दिन से तुम चिन्ता कर रहे हो पर अब

अच्छा समय आगया है। तुम्हे सुखकी सामग्री, प्रियजनो का समागम धन लाभ होगा। यदि परदेश गमन करो तो वहुत अधिक लाभ हो। वाद विवादमे जीत, सभ्य समाज मे मान और प्रतिष्ठा मिलेगी। देव गुरु धर्म पर अटल श्रद्धा रखो।

त, हं, अ। पासा डालने पर जब ये तीन वर्ण पडे तो वडा लाभ हो। सारे विघ्न और सङ्कट दूर हो, जहा भी जाये वही इच्छित फलकी प्राप्ति हो। धन, धान्य वस्त्र, गाय, भैस, घोडा आदि वैभव की सामग्री का मिलाप हो। तीर्थयात्रा, परदेश गमन, युद्ध, समुद्र पार सर्वत्र सफलता ही सफलता प्राप्त होगी। इसलिए हे पृच्छक! इस कल्पवृक्ष समान फलदाता शकुन का फल भोगता हुआ तू अपने इष्टदेव की सेवा मे मन लगा।

त, ह, र। हे पूछने वाले! तेरा पाप का उदय है, तेरा लिया हुआ शकुन यही वताता है, तुम दुखी हो, कष्ट पा रहे हो, तुम्हारा धन नष्ट होगया शरीर मे भी बीमारिया हो रही हैं। पुत्र और मित्रो का वियोग हुआ है जो भी विचारते हो उसीसे कष्ट वढते हैं। तुम्हारे घर मे क्लेश पहुँचाने वाली लडाकू स्त्री है या पुरुष है, और यही पाप दु ख देरहा है। इसलिए तू कुछ समय तक विपत्ति नाशक भगवान पार्श्वनाथ को पूजा कर इससे तुझे शान्ति मिलेगी।

त, ह, हं। हे शकुन लेने वाले! तेरा पाप का उदय है, अत तू कुछ दिन युद्ध मे या वाद विवाद झगडे मे योग मत दे। इन कामो मे तुझे कष्ट ही उठाना पडेगा, धन की धर्मकी हानि ही होगी। तुम्हारे घरमे कलह, लडाई, झगडे, चिन्ता का राज्य है, भाई वान्धव मित्र आदि भी शत्रु जैसे प्रतीत होते हैं। इसलिए अपना खोटा समय जानकर भगवान की भक्ति करता हुआ दुख नाश करने का उपाय सोच।

त, ह, त। हे भाई! तुम्हारा शकुन मध्यम है। इसलिए जो तुम सोचते हो वह फल न होगा। कुछ दिन ठहरना ही ठीक है।

ाप का उदय समझकर चिन्ता मत करो, भावी वलवान होता है। ानमे मृत्यु का भय मत कर, अज्ञान बुद्धि को छोड दे। सुख पाने के लिए महावीर प्रभु का स्मरण कर।

त, त, अ। हे प्रश्नकर्त्ता! तुम्हारा शुभका उदय है, तुम्हे महान सुख मिलेगा, धन धान्य का समागम होगा। राज्य से भी आदर होगा। व्यापार मे धन प्राप्त होगा। पुत्री का विवाह, साथ ही तुम्हें सुपुत्र की प्राप्ति भी होगी।

त, त, र। हे प्रश्नकर्त्ता! तुम्हारा शकुन उत्तम है। तुमने सदा सुख ही पाया है, आगे भी भाई वन्धु, पुत्र, धन, धान्य की वढवारी ही होगी। विदेश मे भी सुख ही मिलेगा। सवसे मित्रता और बन्धुता का व्यवहार होगा। तुम्हारे शत्रु डरकर तुम्हारे मित्र हो जायेंगे। घर मे गाय, भैंस, घोडा आदि वाहन भी रहा करेंगे।

त, त, ह। हे भाई! तुम आलस्य छोड़कर उद्योग करो, तुम्हें लाभ होगा और मनकी भावना पूरी होगी। तीर्थयात्रा, पूजन विधान, सब सफल होंगे। तुम्हारे घरमे जो रोग शोक है वह शीघ्र दूर होगा। सब प्रकार की भोग सामग्री प्राप्त होगी। अपने मन मे किसी प्रकार का सन्देह मत कर। भगवान की भक्ति से सब सुख सामग्री सरलता से प्राप्त हो जाती है।

त, त, त! हे पृच्छक! तेरा शकुन वडा कल्याणकारी है। तुम्हारे मन चाहे कार्य सिद्ध होंगे। घर मे पुत्र पौत्रादि का जन्म होगा। धन वढेगा, सुख वढेगा, विवाह होंगे। नष्ट हुआ धन पुनः प्राप्त होगा। शत्रु शत्रुता छोड़ेंगे। हितैषी मित्रो का मिलन होगा। तुम सदा धर्म की आराधना करते रहो, यही सब सुखो का देने वाला है। ॥ इति ॥

एक नजर मे —

परम पावन तीर्थराज सम्मेदशिखर जी की वन्दना

(यहाँ से इस अवसर्पिणी मे २० तीर्थंकर मोक्ष पधारे)

श्री गणधर जी की टोक

१-श्री कुन्थुनाथ जी की टोक	२-श्री नमिनाथ जी
३-श्री अरहनाथजी	४-श्री मल्लिनाथ जी
५- श्री श्रेयासनाथजी	६-श्री पुष्पदन्तजी
७-श्री पद्मप्रभुजी	८-श्री मुनिसुव्रतनाथजी
९-श्री चन्द्रप्रभुजी	१०-श्री आदिनाथजी (कैलाश)
११-श्री शीतलनाथजी	१२-श्री अनन्तनाथजी
१३-श्री सम्भवनाथजी	१४-श्री वासुपूज्यजी (चपापुर)
१५-श्री अभिनन्दनजी	१६-श्री धर्मनाथजी
१७-श्री सुमतिनाथजी	१८-श्री शान्तिनाथजी
१९-श्री महावीरजी (पावापुर)	२०-श्री सुपार्श्वनाथजी
२१-श्री विमलनाथजी	२२-श्री अजितनाथ जी
२३-श्री नेमिनाथजी (गिरनार)	२४-श्री पार्श्वनाथजी

भाव सहित वन्दे जो कोई ।
ताहि नरक पशुगति नहि होई ॥



श्री देव शास्त्र गुरु, विदेह क्षेत्र विद्यमान बीस तीर्थंकर तथा श्रीअनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी

की

* समुच्चय पूजा *

दोहा—देव शास्त्र गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय ।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूं चित्त हुलसाय ।।

ओ ह्री श्री देवशास्त्र गुरु समूह ! श्री विद्यमान विंशति तीर्थकर समूह ! श्री अनतानत सिद्ध परमेष्ठी समूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम् ।

अष्टक

चाल—करले करले तू नित प्राणी, श्रीजिन पूजन करले रे ।

अनादिकाल से जग मे स्वामिन्, जल से शुचिता को माना ।
शुद्ध निजातम सम्यक् रत्नत्रय, निधिको नहिं पहिचाना ।
अब निर्मल रत्नत्रय जल ले, देव शास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊं ।।

ओ ह्री देव शास्त्र-गुरुभ्य . श्री विद्यमान विंशति-तीर्थकरेभ्य श्री अनन्तानत सिद्ध परमेष्ठिभ्यो, जन्मजरा-मृत्यु-विनाशनाय जल निवपामीति स्वाहा ।। १ ।।

भव आताप मिटावन की, निज मे ही क्षमता समता है।
अनजाने अब तक मैने, पर मे की झूठी ममता है।।
चन्दन सम शीतलता पाने, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊ ।
विद्यमान० । चन्दन ।। २ ।।

अक्षय पदके बिन फिरा जगत की लख चौरासी योनी मे।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिग लाया मै।
अक्षय निधि निज की पाने अब देव शास्त्र गुरु को ध्याऊ ।
विद्यमान० । अक्षत ।। ३ ।।

पुष्प सुगन्धी के आतम ने, शील स्वभाव नशाया है।
मन्मथ बाणो से बिंध करके, चहु गति दु ख उपजाया है।
स्थिरता निज मे पाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊ ।
विद्यमान० । पुष्प ।। ४ ।।

षट रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शात हुई।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई।
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊ ।
विद्यमान० । नैवेद्य ।। ५ ।।

जड़ दीप विनश्वर को अबतक, समझा था मैने उजियारा।
निज गुण दरशायक ज्ञान दीप से, मिटा मोह का अंधियारा।
ये दीप समर्पित करके मै, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊ ।
विद्यमान० । दीप ।। ६ ।

ये धूप अनल मे खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।
निज मे निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नशायेगी।
उस शक्ति दहन प्रगटाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊं।
विद्यमान० । धूप ।। ७ ।।

पिस्ता बदाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिग मैं ले आया।
आतमरस भीने निज गुण फल मम मन अब उनमें ललचाया।
अब मोक्ष महा फल पाने को श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊं।
विद्यमान०। फल ॥ ८ ॥

अष्टम वसुधा पाने को, कर मे ये आठो द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज मे निज गुण प्रगट किये।
ये अर्घ समर्पण करके मैं, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊं॥
विद्यमान०। अर्घ्यं ॥ ९ ॥

※ जयमाला ※

नसे घातिया कर्म अर्हंत देवा करें सुरअसुर नरमुनि नित्य सेवा
दरश ज्ञान सुख बल अनन्तके स्वामी, छियालीस गुण युक्त महाईश नामी
तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी, महा मोह विध्वंसिनी मोक्षदानी
अनेकान्त मय द्वादशांगी बखानी, नमो लोक माता श्री जैन वाणी॥
विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश ज्ञान भण्डार समता अराधू।
नगन वेशधारी सु एका विहारी, निजानन्द मंडित मुकति पथ प्रचारी
विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर बीस राजे, बिरहमान वंदू सभी पाप भाजे।
नमू सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी

छन्द–देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध हृदय बिच धरले रे।
पूजन ध्यान गान गुण करके, भव सागर जिय तर ले रे। पूर्णार्घ्यं

भूत भविष्यत वर्तमान की, तीस चौबीसी मैं ध्याऊं।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन लोक के मन लाऊं।

ओ ह्रीं त्रिकाल सम्बन्धी तीस चौबीसी त्रिलोक सम्बन्धी कृत्रिमा-कृत्रिम चैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं।

चैत्य भक्ति आलोचन चाहूं कायोत्सर्ग अघ नाशन हेत।
कृत्रिमा-कृत्रिम तीन लोक में, राजत हैं जिन बिम्ब अनेक।
चतुर निकाय के देव जजें ले अष्ट द्रव्य निज भक्ति समेत।
निज शक्ति अनुसार जजूं मैं कर समाधि पाऊं शिव खेत।

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसंबंधिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

पूर्व मध्य अपराह्न की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार।
देव वन्दना करूं भाव से सकल कर्म की नाशन हार॥
पंच महा गुरु सुमरन करके, कायोत्सर्ग करूं सुखकार।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना जाऊंगा अब मैं भव पार।

'पुष्पांजलि०' (नौ बार णमोकार मंत्र जपें)

अर्घ देवशास्त्र गुरु

जल परम उज्ज्वल गन्ध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं।
वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनम के पातक हरूं॥
इति भांति अर्घ चढाये नित भवि करत शिवपंकति मचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं॥
दोहा—वसुविधि अर्घ संजोय के अति उछाह मन कीन।
जासों पूजों परम पद देवशास्त्र गुरु तीन॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं॥

(११७) ॥ऋषि-मण्डल स्तोत्र॥

आद्यताक्षरसंलक्ष्यमक्षर व्याप्य यत्स्थितम्
अग्निज्वालासम नाद बिन्दुरेखासमन्वित ॥१॥
अग्निज्वाला-समाक्रान्त मनोमल - विशोधन ।
दैदीप्यमान हृत्पद्मे तत्पद नौमि निर्मल ॥युग्म॥
ॐ नमोऽर्हद्भ्य ईशेभ्य ॐ सिद्धेभ्यो नमो नमः ।
ॐ नम सर्वसूरिभ्यः उपाध्यायेभ्य ॐ नम ॥३॥
ॐ नम सर्वसाधुभ्य तत्त्वदृष्टिभ्य ॐ नमः ।
ॐ नमः शुद्धबोधेभ्यश्चारित्रेभ्यो नमो नम. ॥४॥युग्म
श्रेयसेऽस्तु श्रियस्त्वेतदर्हदाद्यष्टक शुभ ।
स्थानेष्वष्टसु सन्यस्त पृथग्बीजसमन्वितम् ॥५॥
आद्य पद शिरो रक्षेत् परं रक्षतु मस्तक ।
तृतीय रक्षेन्नेत्रे द्वे तुर्यं रक्षेच्च नासिका ॥६॥
पचमं तु मुख रक्षेत् षष्ठ रक्षतु घटिकां ।
सप्तमं रक्षेन्नाभ्यंत पादांतं चाष्टमं पुनः ॥७॥ युग्मं ॥
पूर्वं प्रणवतः सातः सरेफो द्विस्त्रिपचषान् ।
सप्ताष्टदशसूर्यांकान् श्रितो बिन्दुस्वरान् पृथक् ॥८॥
पूज्यनामाक्षराद्यास्तु पंचदर्शनबोधकं ।
चारित्रेभ्यो नमो मध्ये ह्रीं सांतसमलंकृतं ॥९॥

जवूवृक्षधरो द्वीप क्षारोदधि-समावृत ।
अर्हंदाद्यष्टकैरष्टकाष्ठाधिष्ठैरलकृतः ॥१॥
तन्मध्ये सगतो मेरु कूटलक्षैरलकृत ।
उच्चैरुच्चैस्तरस्तारतारामडलमडितः ॥२॥
तस्योपरि सकारात बीजमध्यास्य सर्वग ।
नमामि बिम्बमार्हंत्य ललाटस्थ निरजन ॥३॥ विशेषक
अक्षय निर्मल शात वहुल जाड्यतोज्झित ।
निरीह निरहकार सार सारतर घन ॥४॥
अनुश्रुत शुभ स्फीत सात्त्विक राजस मत ।
तामस विरस बुद्धं तैजसं शर्वरीसमं ॥५॥
साकार च निराकारं सरसं विरसं परं ।
परापर परातीतं परं परपरापरं ॥६॥
सकलं निष्कलं तुष्टं निभृत भ्रान्तिवर्जितं ॥
निरंजन निराकाक्षं निर्लेप वीतसंशयं ॥७॥
ब्रह्माणमीश्वर बुद्ध शुद्धं सिद्धमभंगुरं ।
ज्योतीरूप महादेव लोकालोकप्रकाशकं ॥८॥ कुलकं
अर्हंदाख्य सवर्णान्त सरेफो बिंदुमंडितः ।
तुर्यस्वरसमायुक्तो बहुध्यानादिमालितः ॥९॥
एकवर्ण द्विवर्णं च त्रिवर्णं तुर्यवर्णकं ।
पचवर्णं महावर्णं सपरं च परापर ॥१०॥ युग्म
अस्मिन् बीजे स्थिता सर्वे ऋषभाद्या जिनोत्तमाः ।
वर्णैर्निजैर्निजैर्युक्ता ध्यातव्यास्तत्र सगताः ॥११॥

नादश्चन्द्रसमाकारो बिंदुर्नीलसमप्रभः ।
कलारुणसमाक्रातः स्वर्णाभः सर्वतोमुखः ॥१२॥
शिरःसलीन ईकारो विनीलो वर्णतः स्मृतः ।
वर्णानुसारिसालीन तीर्थकृन्मंडल नमः ॥१३॥युग्म
चद्रप्रभपुष्पदन्तौ नादस्थितिसमाश्रितौ ।
विंदुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ॥१४॥
पद्मप्रभवासुपूज्यौ कलापदमधिश्रितौ ।
शिर ईस्थितसालीनौ पार्श्वपार्श्वौ जिनोत्तमौ ॥१५॥
शेषास्तीर्थंकराः सर्वे रहस्थाने नियोजिताः ।
मायाबीजाक्षर प्राप्ताश्चतुर्विंशतिरर्हता ॥१६॥
गतरागद्वेषमोहाः सर्वपापविवर्जिताः ।
सर्वदा सर्वलोकेषु ते भवतु जिनोत्तमाः ॥१७॥ कलापकं
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांग मा मा हिंसन्तु पन्नगा ॥१८॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांग मा मा हिंसतु नागिनी ॥१९॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांग मा मा हिंसन्तु गोनसाः ॥२०॥
देवदेव० हिंसन्तु वृश्चिका ॥२१॥
देवदेव हिंसतु काकिनी ॥२२॥
देवदेव " डाकिनी ॥२३॥
देवदेव " शाकिनी ॥२४॥

देवदेव	हि्सतु	राकिनी	॥२५॥
देवदेव	"	लाकिनी	॥२६॥
देवदेव	"	साकिनी	॥२७॥
देवदेव	'	हाकिनी	॥२८॥
देवदेव	हि्सन्तु	राक्षसा	॥२९॥
देवदेव	'	व्यतरा.	॥३०॥
देवदेव	"	भेतला	॥३१॥
देवदेव	'	ने ग्रहा	॥३२॥
देवदेव	'	तस्करा	॥३३॥
देवदेव	"	वह्लय	॥३४॥
देवदेव	"	शृङ्गिण.	॥३५॥
देवदेव	"	दष्ट्रिण	॥३६॥
देवदेव	'	रेलपा	॥३७॥
देवदेव	"	पक्षिण·	॥३८॥
देवदेव	'	मुद्गला	॥३९॥
देवदेव	"	जृ भका	॥४०॥
देवदेव	'	तोयदा.	॥४१॥
देवदेव	"	सिहका:	॥४२॥
देवदेव	"	शूकरा.	॥४३॥
देवदेव	"	चित्रका	॥४४॥
द्वेवदेव	"	हस्तिन.	॥४५॥
देवदेव	"	भूमिपा:	॥४६॥

देवदेव हिंसन्तु शत्रवः ॥४७॥
देवदेव " ग्रामिणः ॥४८॥
देवदेव " दुर्जनाः ॥४९॥
देवदेव · व्याधयः ॥५०॥
श्रीगौतमस्य या मुद्रा तस्या या भुवि लब्धयः ।
ताभिरभ्यधिक ज्योतिरर्हः सर्वनिधीश्वर ॥५१॥
पातालवासिनो देवा देवा भूपीठवासिन ।
स्वःस्वर्गवासिनो देवा सर्वे रक्षंतु मामितः ॥५२॥
येऽवधिलब्धयो ये तु परमावधिलब्धयः ।
ते सर्वे मुनयो दिव्या मा सरक्षतु सर्वतः ॥५३॥
ॐ श्री ह्रीश्च धृतिर्लक्ष्मी गौरी चडी सरस्वती ॥
जयाम्बा विजया क्लिन्नाऽजिता नित्या मदद्रवा ॥५४॥
कामागा कामवाणा च सानदा नदमालिनी ।
माया मायाविनी रौद्री कला काली कलिप्रिया ॥५५॥
एता सर्वा महादेव्यो वर्तन्ते या जगत्त्रये ।
मम सर्वाः प्रयच्छतु कान्ति लक्ष्मी धृति मति ॥५६॥
दुर्जना भूतवेताला पिशाचा मुद्गलास्तथा ।
ते सर्वे उपशाम्यतु देवदेवप्रभावत ॥५७॥
दिव्यो गोप्य. सुदुष्प्राप्य. श्रीऋषिमडलस्तवः ।
भाषितस्तीर्थनाथेन जगत्त्राणकृतोऽनघः ॥५८॥
रणे राजकुले वह्नौ जले दुर्गे गजे हरौ ।
श्मशाने विपिने घोरे स्मृतो रक्षति मानवं ॥५९॥

राज्यभ्रष्टा निज राज्य पदभ्रष्टा निज पद ।
लक्ष्मीभ्रष्टा. निजा लक्ष्मी प्राप्नुवन्ति न मशय. ॥६०॥
भार्यार्थी लभते भार्या पुत्रार्थी लभते मुत ।
धनार्थी लभते वित्त नर स्मरणमात्रत ॥६१॥
स्वर्णे रूप्येऽथवा कास्ये लिखित्वा यस्तु पूजयेत् ।
तस्यैवेष्टमहासिद्धिर्गृहे वसति शाश्वती ॥६२॥
भूर्जपत्रे लिखित्वेद गलके मूर्ध्नि वा भुजे ।
धारित सर्वदा दिव्य सर्वभीतिविनाशन ॥६३॥
भूतैः प्रेतैर्ग्रहैर्यक्षै. पिशाचैर्मुद्गलैस्तथा ।
वातपित्तकफोद्रेकैर्मुच्यते नात्र सशय ॥६४॥
भूर्भुव स्वस्त्रयीपीठवर्त्तिन. शाश्वता जिना. ।
तै. स्तुतैर्वंदितैर्दृष्टैर्यत्फल तत्फल स्मृते ॥६५॥
एतद्गोप्य महास्तोत्र न देय यस्य कस्यचित् ।
मिथ्यात्ववासिनो देये वाल-हत्या पदे पदे ॥६६॥
आचाम्लादितप कृत्वा पूजयित्वा जिनावलि ।
अष्टसाहस्रिको जाप्य. कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे ॥६७॥
शतमष्टोत्तर प्रातर्ये पठति दिने दिने ।
तेषा न व्याधयो देहे प्रभवति न सशयः ॥६८॥
अष्टमासावधि यावत् प्रात प्रातस्तु यः पठेत् ।
स्तोत्रमेतन्महातेजस्त्वर्हद्बिम्ब स पश्यति ॥६९॥
दृष्टे सत्यार्हते बिबे भवे सप्तमके ध्रुव ।
पदं प्राप्नोति विश्रस्त परमानदसपदा ॥७०॥ युग्म

इदं स्तोत्र महास्तोत्रं स्तुतीनामुत्तम पर ।
पठनात्स्मरणाज्जाप्यात् सर्वदोषैर्विमुच्यते ॥७१॥
जाप्य मंत्र—ॐ ह्रा ह्रि ह्र ह्रू ह्रे ह्रै ह्रौं ह्र.
अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो ह्री नमः ।

इति ऋषि-मडल-स्तोत्र सपूर्णम् ।

(पापभक्षिणी विद्यारूप मन्त्र)

ॐ अर्हन्मुख-कमलवासिनी पापात्म-क्षयकरि, श्रुतज्ञान-ज्वाला-सहस्र प्रज्वलिते-सरस्वति मत्पाप हन हन, दह दह, क्षां क्षी क्षू क्षौं क्ष क्षीरवर-धवले अमृत-संभवे वं व हू हू स्वाहा ।

इस मत्र के जप के प्रभाव से साधक का चित्त प्रसन्नता धारण करता है, पाप नष्ट हो जाते हैं और आत्मा मे पवित्र भावनाओ का सचार हो जाता है ।

महा-मृत्युञ्जय मन्त्र

ॐ ह्रा णमो अरिहन्ताण, ॐ ह्री णमो सिद्धाण, ॐ ह्रू णमो आइरियाण, ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण, ॐ ह्र णमो लोए सव्वसाहूण, मम सर्व-ग्रहारिष्टान् निवारय निवारय अपमृत्यु घातय घातय सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा ।

विधि—दीप जलाकर धूप देते हुए नैष्ठिक रहकर इस मत्र का स्वय जाप करे या अन्य द्वारा करावे । यदि अन्य व्यक्ति जाप करे तो 'मम' के स्थान पर उस व्यक्ति का नाम जोड ले—अमुकस्य सर्व-ग्रहारिष्टान् निवारय आदि ।

इस मत्र का सवा लाख जाप करने से ग्रह-बाधा दूर हो जाती है । कम से कम इस मत्र का ३१ हजार जाप करना चाहिये । जाप के अनन्तर दशाश आहुति देकर हवन भी करे ।

卐

शान्ति पाठ

१	२	३	४	५
३	४	५	१	२
५	१	२	३	४
२	३	४	५	१
४	५	१	२	३

पढ़ने की विधि :—जहाँ एक है वहां णमो अरिहन्ताणं, जहां दो है वहां णमो सिद्धाण, जहाँ तीन है वहां णमो आयरियाणं, जहाँ चार है वहा णमो उवज्झायाणं, जहां पाँच है वहां णमो लोए सव्व साहूण पढ़ना चाहिए। शान्ति पाठ का जाप कम से कम २१ वार तो प्रतिदिन अवश्य कर लेना चाहिये। यह जाप परम मांगलिक और शान्ति का देने वाला है। इस जाप को करते समय स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना चाहिये।



घंटाकर्ण मन्त्र- ॐ घंटाकर्णो महावीर; सर्वव्याधि-विनाशक।
विस्फोटकभयं प्राप्ते, रक्ष रक्ष महाबलः ॥१॥
यत्र त्वं तिष्ठसे देव, लिखितोऽक्षर-पंक्तिभिः।
रोगास्तत्र प्रणश्यन्ति, वातपित्तकफोद्भवाः ॥२॥
तत्र राजभयं नास्ति, यान्ति कर्णे जपात्क्षयम्।
शाकिनी भूतवेताला, राक्षसाः प्रभवन्ति नः ॥३॥
नाकाले मरणं तस्य, न च सर्पेण दश्यते।
अग्निचौरभयं नास्ति, ॐ ह्रीं श्रीं घंटाकर्ण!
नमोस्तु ते! ॐ नर वीर! ठः ठः ठः स्वाहा!!

सूचना—घटाकर्ण मन्त्र का २१ बार जप करने से राज-भय, चोर-भय, अग्नि और सर्प का भय दूर होवे। सब प्रकार की भूत-प्रेत-बाधा भी दूर होती है। सर्व विपत्ति-हर्त्ता मत्र है। ✲

लक्ष्मी प्राप्ति एवं मनोकामना पूर्ण करने का मन्त्र

ओ ह्री श्रीं क्ली ऐं अर्हं श्री अ सि आ उ सा नम॰।

(प्रातः काल १ माला)

शान्ति कारक मन्त्र

ओ ह्री परमशान्ति विधायक श्री शान्तिनाथाय नम.

अथवा

ॐ ह्री श्री अनतानत परम सिद्धेभ्यो नम॰।

(आचार्य ॐ उमास्वामि विरचित णमोकारमत्र माहात्म्यसे उद्धृत)

नवग्रह शान्ति के लिए मंत्र जाप

सूर्य	=	ॐ णमो सिद्धाण	(१० हजार)
चन्द्र	=	ॐ णमो अरिहताण	(१० हजार)
मगल	=	ॐ णमो सिद्धाण	(१० हजार)
बुध	=	ॐ णमो उवज्झायाण	(१० हजार)
(गुरु) बृहस्पति	=	ॐ णमो आइरियाण	(१० हजार)
शुक्र	=	ॐ णमो अरिहताणं	(१० हजार)
शनि	=	ॐ णमो लोए सव्व साहूणं	(१० हजार)
केतु	=	ॐ णमो सिद्धाण	(१० हजार)

केतु राहु = ॐ णमो अरिहताण, ॐ णमो सिद्धाण,
ॐ णमो आइरियाण, ॐ णमो उवज्झायाण,
ॐ णमो लोए सव्व साहूणं (१० हजार) ✲

अर्घावली

विद्यमान बीस तीर्थंकरों का अर्घ

जल फल आठो द्रव्य, अरघ कर प्रीति धरी है,
गणधर इन्द्रनहूतै, थुति पूरी न करी है।
द्यानत सेवक जानके (हो) जगतै लेहु निकार,
सीमधर जिन आदि दे, बीस विदेह मझार।
श्री जिनराज हो, भव तारण तरण जहाज ॥

ओ ह्री विद्यमान-विंशति-तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ निर्वं० । अथवा

ओ ह्री श्रीसीमधर-युगमधर-बाहु-सुबाहु-सजात-स्वयप्रभ-ऋषभानन अनन्तवीर्य सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चद्रानन-चंद्रबाहु - भुजगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरसेन - महाभद्र-देवयश-अजितवीर्येति विशतिविद्यमान तीर्थङ्करेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अकृत्रिम चैत्यालयो का अर्घ

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्,
वदे भावन-व्यतर-द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान् ।
सद्गधाक्षतपुष्पदामचरुकै सद्दीपधूपै फलैर्,
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणा शातये ।१।

ओ ह्री कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसबधि जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निव०

सिद्ध परमेष्ठी (संस्कृत)

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रत-गणैः सगं वरं चन्दनं,

पुष्पौघं विमलं सदक्षत-चयं रम्यं चरुं दीपकम् ।

धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये,

सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥

ॐ ह्रीं सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

सिद्ध परमेष्ठी (भाषा)

जल फल वसुवृंदा अरघ अमंदा, जजत अनंदा के कंदा ।
मेटो भवफंदा सब दुखदंदा, 'हीराचंदा' तुम वंदा ॥
त्रिभुवन के स्वामी त्रिभुवन नामी, अंतरयामी अभिरामी ।
शिवपुर विश्रामी निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी शिरनामी ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच बालयति

सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ, अरघ बनावत हैं,
वसुकर्म अनादि संयोग ताहि नशावत है।
श्री वासूपूज्य मलि नेम पारस वीर अती,
नमूं मन वच तन धरि प्रेम पाँचो बालयती ॥

ओं ह्रीं श्री वासुपूज्य मल्लिनाथ नेमिनाथ पार्श्वनाथ महावीर स्वामी, श्री पंचबालयति तीर्थंकरेभ्य अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपा० ।

समुच्चय चौबीसी

जल फल आठो शुचिसार, ताको अर्घ करो।
तुमको अरपो भवतार, भव तरि मोक्ष वरो॥
चौबीसों श्रीजिनचंद, आनदकंद सही।
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही॥६॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादि-वीरांत-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ पदप्राप्तये अर्घं।

पंचमेरु जिनालय

आठ दरवमय अरघ बनाय 'द्यानत' पूजों श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥
पांचो मेरु असी जिन धाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥

ओं ह्रीं सुदर्शन विजय-अचल-मन्दिर-विद्युन्मालि-पंचमेरु-सम्बन्धि-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वरद्वीप जिनालय

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हो।
'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हो॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम बावन पुंज करो।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम आनन्द भाव धरो॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षणधर्म

आठों दरब संभार, 'द्यानत' अधिक उछाहसो।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलहकारण

जल फल आठों दरव चढ़ाय द्यानत वरत करो मनलाय।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरशविशुद्धि भावना भाय सोलह तीर्थंकर-पद-दाय।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घपद प्राप्तये अर्घं।

सप्तर्षि

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठौं द्रव्य-मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥
मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिनकी पूजा करूं।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनंद विस्तरूं ॥
ओं ह्रीं श्री श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्वाण क्षेत्र

जल गंध अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगतसों, जोर कर विनती करौं ॥
सम्मेदगढ़ गिरनार चंपा, पावापुरि कैलाशकों।
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाणभूमि
ओं ह्रीं

सरस्वता

जल चदन अक्षत फूल चरू, अरु दीप धूप अति फल लावै।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर द्यानत सुखपावै ॥
तीर्थंकर की ध्वनि, गणधर ने सुनि, अग रचे चुनि ज्ञानमई।
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन-मानी पूज्य भई ॥
ओ ह्री श्री जिन-मुखोद्भव-सरस्वतीदेव्यै अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ जिनेन्द्र

शुचि निर्मल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ सुलेकर, नाचत ताल मृदग बजाय ॥
श्रीआदिनाथ के चरण कमलपर, बलिबलि जाऊ मनबचकाय।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातै मै पूजो प्रभु पाय ॥
ओ ह्री श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति०।

श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्र

जल गन्ध तदुल पुप्प चरु ले, दीप धूप फलौघही।
कन थाल अर्घ बनाय शिव सुख 'रामचद' लहै सही ॥
श्रीचंद्रप्रभ दुतिचद को पद कमल नखससिलगि रह्यो।
आतक दाह निवारि मेरी, अरज सुनि मैं दुख सह्यो ॥
ओं ह्रीं श्रीचद्रप्रभस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति०।

श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्र

जलफल दरव मिलाय गाय गुन, आठो अग नमाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरो यह लाई ॥

श्री महावीर जिनेन्द्र

जल फल वसु सजि हिम थार, तन मन मोद धरो।
गुणगाऊँ भवदधितार, पूजत पाप हरो॥
श्री वीर महा अतिवीर, सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति दायक हो॥

ओ ह्री श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ निर्व०।

श्रीरत्नत्रय

आठ दरब निरधार, उत्तम सो उत्तम लिये।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भजू ॥ ६ ॥

ओ ह्री सम्यक् रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य निर्व०।

श्री ऋषि—मण्डल

जल फलादिक द्रव्य लेकर अर्घ सुन्दर कर लिया।
ससार रोग निवार भगवन् वारि तुम पद मे दिया॥
जहा सुभग ऋषिमडल विराजे पूजि मन वच तन सदा।
तिस मनोवाछित मिलत सब सुख स्वप्न मे दुख नहि कदा॥

ओ ह्री सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय, रोग-शोक-सर्व-सकट हराय, सर्वशान्ति-पुष्टि-कराय, श्रीवृषभादि चौबीस तीर्थकर, अष्ट वर्ग, अरहतादि पचपद, दर्शन-ज्ञान-चारित्र, चतुर्णिकाय देव, चार प्रकार अवधिधारक श्रमण, अष्ट ऋद्धि सयुक्त ऋषि, बीस चार सूर, तीन ह्री, अर्हंतबिम्ब, दशदिग्पाल यन्त्र सम्बन्धि परमदेवाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा॥

बृहत् शान्तिधारा पाठ

—ः०ः—

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते। ॐ ह्रीं क्रों मम पापं खण्डय खण्डय जहि-जहि दह-दह पच-पच पाचय २ ॐ नमो अर्हन् झं झ्वीं क्ष्वीं हं सं झं वं ह्नः पः हः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लें ह्लैं ह्लों ह्लौं ह्लं ह्लः द्रां द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः. अस्माकं श्रीरस्तु वृद्धिरस्तु तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु शान्तिरस्तु कान्तिरस्तु कल्याणमस्तु स्वाहा। एवं अस्माकं कार्यसिद्ध्यर्थं सर्वविघ्ननिवारणार्थं श्रीमद्भगवदर्हत्सर्वज्ञपरमेष्ठिपरमपवित्राय नमोनमः। अस्माकं श्रीशान्तिभट्टारकपादपद्मप्रसादात् सद्धर्म श्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु सद्धर्मस्वशिष्यपरशिष्यवर्गं प्रसीदन्तु नः।

ॐ वृषभादयः श्रीवर्द्धमानपर्यन्ताश्चतुर्विंशत्यर्हन्तो भगवन्तः सर्वज्ञाः परममंगलनामधेयाः अस्माकं इहामुत्र च सिद्धिं तन्वन्तु कार्येषु च इहामुत्र च सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थंकराय श्रीमद्रत्नत्रयरूपाय दिव्यतेजोमूर्तये प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगणसहिताय अनन्तचतुष्टयसहिताय समवशरणकेवलज्ञानलक्ष्मीशोभिताय अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुण-

भिन्धि २। सर्वपरमंत्र छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वात्मघात-परघात च छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वशूलरोग कुक्षिरोग अक्षि-रोग शिरोरोग ज्वररोगं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। सर्वनरमारि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। सर्वगजाश्व-गोमहिष अजमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। सर्वसस्य-धान्य वृक्षलतागुल्मपत्रपुष्पफलमारि छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वराष्ट्रमारि छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वक्रूरवेतालशाकिनी डाकिनी भयानि छिन्धि २ भिन्धि २। सर्ववेदनीयं छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वमोहनीय छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वापस्मारि छिन्धि २ भिन्धि २। अस्माकं अशुभकर्मजनितदुःखानि छिन्धि २ भिन्धि २। दुष्टजनकृतान् मंत्रतंत्रदृष्टिमुष्टिछल छिद्रदोषान् छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वदुष्टदेवदानववीरनर नाहरसिंहयोगनीकृतदोषान् छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वअष्ट-कुलीनागजनितविषभयानि छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वस्था-वरजंगमवृश्चिकसर्पादिकृतदोषान् छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वसिंहाष्टापदादिकृतदोषान् छिन्धि २ भिन्धि २। परशत्रुकृतमारणोच्चाटन विद्वेषणमोहनवशीकरणादिदोषान् छिन्धि २ भिन्धि २। ॐ ह्रीं अस्मभ्य चक्रविक्रम सत्व-तेजोबलशौर्यशान्ती पूरय पूरय। सर्वजीवानन्दन जनानन्दन भव्यानंदन गोकुलानंदन च कुरु कुरु। सर्वराजानंदन कुरु कुरु। सर्वग्रामनगर खेडाकर्वडमटंबद्रोणमुखसंवाहनानंदन कुरु कुरु। सर्वानंदन कुरु कुरु स्वाहा।

यत्सुखा त्रिषु लोकेषु व्याधिव्यसनवर्जित । अभय क्षेम-मारोग्य स्वस्तिरस्तु विधीयते ।। श्रीशान्तिरस्तु । शिवमस्तु । जयोस्तु । नित्यमारोग्यमस्तु । अस्माक पुष्टिरस्तु । समृद्धि-रस्तु । कल्याणमस्तु । सुखमस्तु । अभिवृद्धिरस्तु । दीर्घा-युरस्तु कुलगोत्रधनानि सदा सन्तु । सद्धर्म—श्रीबलायुरारो-ग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं असि आ उसा अनाहतविद्यायै णमो-अरहंताण ह्रौं सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ।

आयुर्वल्ली विलास सकलसुखफलैर्द्राघयित्वा स्वनल्पं
धीरं वीर शरीर निरुपमुपनयत्वातनोत्वच्छकीर्ति ।।
सिद्धि वृद्धि समृद्धि प्रथयतु तरणि स्फूर्यदुच्चै प्रताप ।
कान्ति शान्ति समाधि वितरतु भवतामुत्तमा शान्तिधारा ।।

इति बृहत् शान्तिधारा ।

मन्दिर मे हँसी मजाक, खोटी कथा, स्त्री कथा, भोजन कथा, चोर आदि की कथा, शृंगार, कलह, निद्रा, खान-पान तथा थूकना आदि नही करना चाहिए । मुख स्वच्छ होना चाहिए । पान इलायची वगैरह खाया हो तो कुल्ला करके ही मन्दिर मे जाना चाहिए ।

मन्दिर आत्म-साधन का पवित्र स्थान है । वहाँ आरम्भ परिग्रह (घरेलू काम-काज तथा धन-सम्पत्ति) के विचारो का त्याग कर अत्यन्त शान्ति पूर्वक धार्मिक भावनायें ही मन मे लानी चाहिए । व्यवहारिक कार्य और घरेलू चर्चा मन्दिर मे नही करनी चाहिए । यह पापबन्ध का कारण है । धार्मिक मर्यादाओ के पालन से पुण्य-बन्ध होने के साथ २ जीवन भी सफल होता है ।

भारत के प्रमुख जैन तीर्थ-क्षेत्र

[बिहार प्रान्त]

सम्मेद शिखर—ईस्टर्न रेलवे के पारसनाथ अथवा गिरीडीह स्टेशन से पहाड की तलहटी मधुवन तक क्रमश १४ और १८ मील है। इस क्षेत्र से २० तीर्थंकर एवं असख्यात मुनि मोक्ष गये है। पहाड की चढाई-उतराई तथा यात्रा करीवन १८ मील की है। पारसनाथ हिल और गिरीडीह से मोटर शिखरजी जाने के लिए मिलती है।

कुलुआ पहाड़—यह पहाड जगल मे है। गया से जाया जाता है। इसकी चढाई २ मील है। इस पहाड पर १० वे तीर्थंकर शीतलनाथजी ने तप करके केवल ज्ञान प्राप्त किया था।

गुणावा—पटना जिले के नवादा स्टेशन से डेढ मील। यहाँ से गौतम स्वामी मोक्ष गए हैं।

पावापुरी—विहार प्रान्त मे स्टेशन विहारशरीफ मे १२ मील। नवादा से मोटर भी जाती है। यहाँ से महावीर स्वामी कार्तिक कृष्ण ३० को मोक्ष गए हैं। यहाँ का जल मन्दिर दर्शनीय है। उसी मे भगवान के चरणचिह्न स्थित हैं।

राजगृही—बिहार प्रान्त मे स्टेशन राजगिरि कुण्ड से ४ मील अथवा विहारशरीफ से २४ मील। यहाँ विपुलाचल, सोनागिरि, रत्नागिरि, उदयगिरि, वैभारगिरि ये पच पहाडियाँ प्रसिद्ध हैं। इन पर २३ तीर्थंकरो का समवशरण आया था तथा कई मुनि मोक्ष भी गए हैं। (यह राजा श्रेणिक की राजधानी थी)।

कुण्डलपुर—राजगृही के पास नालदा स्टेशन से ३ मील। यह भ० महावीर का जन्म स्थान माना जाता है।

चम्पापुर—विहार प्रान्त मे भागलपुर स्टेशन। यहाँ से वासुपूज्य स्वामी मोक्ष गए हैं।

पटना—पटना सिटी मे गुलजारबाग स्टेशन के पास एक छोटी-सी टोकरी पर चरण पादुकाएँ स्थापित हैं। यहाँ से सेठ सुदर्शन ने मुक्ति लाभ किया है।

[उडीसा प्रान्त]

खण्डगिरि—उडीसा प्रान्त मे भुवनेश्वर स्टेशन से ४ मील पर खण्डगिरि और उदयगिरि नाम को दो पहाडियाँ है। यही से कलिंग देश के ५०० मुनि मोक्ष गए है।

[उत्तर प्रदेश]

वाराणसो—इस नगर मे भदैनीघाट सातवे तीर्थंकर भगवान् सुपार्श्वनाथ का जन्म स्थान है। भेलुपुर मे तेईसवें तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ की जन्मभूमि है। शहर मे अन्य कई मन्दिर दर्शनीय हैं।

सिंहपुरी—बनारस से ७ मील। यहाँ श्रेयासनाथ भगवान के गर्भ, जन्म, तप ये तीन कल्याणक हुए। यहाँ बौद्धमन्दिर आदि अन्य स्थान देखने योग्य है।

चन्द्रपुरी—बनारस से १३ मील अथवा सारनाथ से ७ मील पर गगा किनारे। यहाँ पर चन्द्रप्रभु भगवान् का जन्म हुआ था।

प्रयाग—यहाँ त्रिवेणी सगम के पास एक पुराना किला है। किले के भीतर जमीन के अन्दर एक अक्षय वट (वड का पेड) है। कहते है कि श्री ऋषभदेव ने यहाँ तप किया था।

अयोध्या—आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ, अनन्तनाथ का जन्म स्थान।

रत्नपुरी—फैजाबाद जिले मे सोहावल स्टेशन से १॥ मील। धर्मनाथ स्वामी के चार कल्याणक हुए हैं।

श्रावस्ती—बहराइच से २९ मील। यह भ० सम्भवनाथ को पवित्र जन्मभूमि है और यही ४ कल्याणक हुए हैं।

कौशाम्बी—प्रयाग से ३२ मील पर फफौसा ग्राम के पास। यहीं पर पद्मप्रभु स्वामी के चार कल्याणक हुए हं।

कम्पिला—कानपुर कासगज लाइन पर। कायमगज स्टेशन से ८ मील। यहाँ विमलनाथ स्वामी के चार कल्याण हुए हैं।

अहिक्षेत्र—बरेली अलीगढ लाइनपर आमला स्टेशन से ८ मील रामनगर गाँव से लगा हुआ यह क्षेत्र है। इस क्षेत्र पर तपस्या करते हुए भ० पार्श्वनाथ के ऊपर कमठ के जोव ने घोर उपसर्ग किया था और उन्हे केवलज्ञान की प्राप्ति हुई थी।

हस्तिनापुर—मेरठ से २२ मोल। शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और अरहनाथ तीर्थकरो के गर्भ, जन्म, तप कल्याणक हुए हैं।

चौरासी—मथुरा शहर से १॥ मोल। यहाँ से जम्बूस्वामी मोक्ष गए हैं।

शौरीपुर—शिकोहाबाद से १० मील वटेश्वर ग्राम है। यहाँ पर नेमिनाथ स्वामी के गर्भ और जन्म ये दो कल्याणक हुए है।

देवगढ—ललितपुर के निकट (जाखलौन स्टेशन से ८ मील दूरी पर) है। भ० शान्तिनाथ की १२ फोट उत्तु ग विशाल प्रतिमा, ८ मानस्तम्भ हैं तथा कई कलापूर्ण सुन्दर प्राचीन मन्दिर है।

अहार—ललितपुर स्टेशन से ३६ मील टीकमगढ है वहाँ से १२ मील पूर्व मे यह क्षेत्र स्थित है। यहाँ पर १८ फुट उत्तुग भ० शान्तिनाथ की सर्वोत्तम प्रतिमा तथा विशाल सग्रहालय है।

[मध्यप्रदेश बुन्देलखण्ड]

सोनागिरि—ग्वालियर झाँसी लाइन पर सोनागिरि स्टेशन से २ मोल श्रमणाचल पवत है। पहाड पर ७७ दि० जैन मन्दिर हैं। यहाँ से नगानगकुमार आदि साढे पाँच सौ करोड मुनि मोक्ष गए हैं।

पपौरा—ललितपुर से ३६ मील और टीकमगढ से ३ मील हैं। चारो ओर कोट बना है। यहाँ लगभग ९० मन्दिर है। कार्तिक सुदी १४ को मेला भरता है।

चन्देरी—ललितपुर से २४ मील। वहाँ से मोटर जाती है। यहाँ की चौबीसी भारतवर्ष मे प्रसिद्ध है।

पचराई—चन्देरी से २४ मील खनियाधाना स्थान है वहाँ से ८ मील पर पचराई गाँव है। यहा पर २८ जिन मन्दिर हैं।

थूबोन—चन्देरी से आठ मील। यहा २५ मन्दिर हैं। भ० शान्तिनाथ की २० फुट उत्तुग मूर्ति अपनी विशालता के लिए प्रसिद्ध है।

अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ—सैन्ट्रल रेलवे के अकोला (बरार) स्टेशन से लगभग ४० मील पर शिवपुर नाम का गाँव है। गाँव के मध्य-धर्मशालाओ के बीच मे एक बहुत बडा प्राचीन विशाल दुमजिला जैन मन्दिर है। नीचे की मजिल मे एक श्यामवर्ण २॥ फुट ऊँची पार्श्वनाथ जी की प्राचीन प्रतिमा है। जो वेदी के ऊपर अधर मे विराजमान है।

खजराहा—मध्यप्रदेश मे छतरपुर से ७ मील। यह एक छोटा-सा गाँव है। ३१ दि० जैन मन्दिर है यहाँ के प्राचीन मन्दिरो की निर्माणकला दर्शनीय है।

द्रोणगिरि—मध्यप्रदेश मे सेधपा नामक गाँव है। निकटवर्ती स्टेशन गणेशगज, सागर तथा लिधौरा है। यहाँ से गुरुदत्तादि मुनि मोक्ष गये हैं।

नैनागिरि—सैंट्रल रेलवे के सागर स्टेशन से ३० मील। सागर से मोटर दलपतपुर जाती है वहाँ से ७ मील है। यहाँ से वरदत्तादि मुनि मोक्ष गए हैं।

कुण्डलपुर—सैंट्रल रेलवे की कटनी-बीना लाइन पर दमोह स्टेशन से २४ मील। भ० महावीर स्वामी की मनोज्ञ मूर्ति के माहात्म्य के सम्बन्ध मे अनेक किंवदन्तियाँ हैं। कुल ५६ मन्दिर हैं।

मुक्तागिरि—मध्यप्रान्त के एलचपुर स्टेशन से १२ मील पहाडी जगल मे है। यहाँ से साढे तीन कराड मुनि मोक्ष गए हैं।

मक्सी पार्श्वनाथ—सैंट्रल रेलवे की भोपाल उज्जन शाखा मे इस नाम का स्टेशन है। यहाँ से १ मील पर एक प्राचीन जैन मन्दिर है। उसमे पार्श्वनाथ की बड़ी मनोज्ञ प्रतिमा है।

सिद्धवरकूट—इन्दौर से खडवा लाइन पर मोरटक्का नामक

स्टेशन से ओंकारेश्वर होते हुए अथवा सनावद से ६ मील पर है। यहाँ से दो चक्रवर्ती, १० कामदेव एव साढे तीन करोड मुनि मोक्ष गए हैं।

बड़वानी—बड़वानी स्टेशन से ५ मील पहाड पर यह क्षेत्र है। यहाँ के चूलगिरि पर्वत से इन्द्रजीत और कुम्भकर्ण मुनि मोक्ष गए हैं।

रामटेक—यह स्थान नागपुर से २४ मील पर है। यहा दि० जैनो के आठ मन्दिर हैं, जिनमे से एक प्राचीन मन्दिर में सोलहवें तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ स्वामी की १५ फीट ऊँची मनोज्ञ प्रतिमा है।

[राजस्थान]

श्री महावीर जी—पश्चिम रेलवे के नागदा मथुरा लाइन पर श्रीमहावीर जी स्टेशन है यहाँ से ४ मील पर क्षेत्र है। भ० महावीर की अतिमनोज्ञ प्रतिमा पास के ही एक टीले के अन्दर से निकली थी।

चांदखेड़ी—कोटा के निकट खानपुर नाम का एक प्राचीन नगर है। खानपुर से २ फर्लांग की दूरी पर चांदखेड़ी नाम की पुरानी बस्ती है। यहां भूगर्भ मे एक अति विशाल जैन मन्दिर है एव अनेक विशाल जैन प्रतिमाए हैं।

पद्मपुरी—स्टेशन श्योदासपुर। भ० पद्मप्रभु की अतिशय-पूर्ण भव्य और मनोज्ञ प्रतिमा के अतिशय के कारण इस क्षेत्र का पद्मपुरी नाम पड़ा है।

केशरियानाथ—उदयपुर स्टेशन से ४० मील पर। यहा ऋषभ-देव स्वामी का विशाल मन्दिर है। यहाँ भारत के सभी तीर्थों से अधिक केशर भगवान को चढ़ती है। इसीसे इसका नाम केशरिया-नाथ है।

[गुजरात तथा दक्षिण प्रान्त]

तारगा—गुजरात मे स्टेशन तारगाहिल से ३ मील दूर पहाड पर यह क्षेत्र है। यहाँ से वरदत्तादि साढ़े तीन करोड मुनि मोक्ष गए है।

गिरिनार—काठियावाड मे जूनागढ स्टेशन से ४-५ मील की दूरी पर गिरिनार पर्वत की तलहटी है। पहाड पर ७००० सीढियो का चढाव है। यहाँ से नेमिनाथ स्वामी तथा ७२ करोड सात सौ मुनि मोक्ष गए है।

शत्रु जय—पालीताना स्टेशन से २ मील पर। यहाँ से युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन तथा ८ करोड मुनि मोक्ष गए है।

पावागढ—बडौदा से २८ मील की दूरी पर यह क्षेत्र है। यहाँ से लव, कुश आदि पाँच करोड मुनि मोक्ष गए हैं।

मागीतुगी—मनमाड स्टेशन से ७० मील पर घने जगल मे पहाड पर यह क्षेत्र है। यहाँ से रामचन्द्र, सुग्रीव, गवय, गवाक्ष, नील आदि ९९ करोड मुनि मोक्ष गए हैं।

गजपन्था—नासिकरोड स्टेशन से ६ मील नसरूल ग्राम के पास। यहाँ से बलभद्र आदि आठ करोड मुनि मोक्ष गए हैं।

कुथलगिरि—बार्सी टाउन रेलवे स्टेशन से २१ मील दूर पर। यहाँ से देशभूषण, कुलभूषण मुनि मोक्ष गये है।

मूडबिद्री—कारकल से दस मील पर यह एक अच्छा कसबा है। यहाँ १८ मन्दिर है। यहाँ के मन्दिरो मे, हीरा, पन्ना, पुखराज, मूंगा, नीलम की मूर्तियाँ है।

श्रवणबेलगोला—हासन जिले के अन्तर्गत यह क्षेत्र है। हासन से मोटर जाती है। श्रवणबेलगोला मे चन्द्रगिरि और विन्ध्यगिरि नाम की दो पहाडियाँ पास-पास है। पहाड पर ५७ फीट ऊँची बाहुबलि की प्रतिमा विराजमान है। १२ वर्ष बाद महामस्तकाभिषेक होता है। (कल्याणमन्दिर से)

———

प्रमुख जैन पर्व

	कार्तिक
महावीर निर्वाणोत्सव	कार्तिक कृष्ण १५ को प्रात ।
अष्टाह्निका	कार्तिक शुक्ला ८ से १५ तक ।
	पौष
षोडशकारणव्रत	पौष शुक्ला १५ से फागुन कृष्णा १ तक ।
	माघ
दशलक्षण (पर्यूषण)	माघ शुक्ल ५ से १४ तक ।
पुष्पांजलि	माघ शुक्ला ५ से ६ तक ।
रत्नत्रय	माघशुक्ला १३ से १५ तक ।
ऋषभ निर्वाणोत्सव	माघ कृष्ण १४ ।
	फागुन
अष्टाह्निका	फागुन शुक्ला ८ से १५ तक ।
	चैत्र
षोडशकारण	चैत्र कृष्ण १ से वैशाख कृष्ण १ तक ।
दशलक्षण	चैत्र शुक्ला ५ से १४ तक ।
पुष्पाञ्जलि	चैत्र शुक्ला ५ से ६ तक ।
रत्नत्रय	चैत्रशुक्ल १३ से १५ तक ।
महावीर जयन्ती	चैत्र सुदी १३ ।

वैशाख

अक्षयतृतीया	वैशाख शुक्ला ३ ।

ज्येष्ठ

श्रुतपचमी	ज्येष्ठ शुक्ला ५ ।

आषाढ़

अष्टाह्निकाव्रत	आपाढ शु० ८ से १५ तक ।

श्रावण

वीर-शासन जयन्ती	श्रावण कृष्णा १ ।
रक्षावन्धन	श्रावण शुक्ला १५ ।

भाद्रपद

षोडशकरण	भाद्रपद कृष्ण १ से आसौज कृष्णा १ ।
दशलक्षण	भाद्रपद शुक्ला ५ से १४ तक ।
पुष्पाजलि	भाद्रपद शु० ५ से ९ तक ।
रत्नत्रय	भाद्रपद शु० १३ से १५ तक ।
लब्धिविधान	भाद्रपद शुक्ला १ ।
रोटतीज	भाद्रपद शु० ३ ।
शील-सप्तमी	भाद्रपद शु० ७ ।
सुगधदशमी	भाद्रपद शु० १० ।
अनन्तव्रत	भाद्रपद शु० ११ ।
अनन्तचौदस	भाद्रपद शु० १४ ।

आश्विन

क्षमावणी	आसौज कृष्णा १ ।

"श्री चौबीस तीर्थङ्कर के पंच कल्याणक"

हर एक श्रावक नीचे लिखे दिनों में जरूर पूजन और स्वाध्याय करे क्योंकि ऐसा करने से पुण्य और लाभ की प्राप्ति होती है।

नं०	नाम तीर्थङ्कर	गर्भ	जन्म	तप	ज्ञान कल्याण	मोक्ष
१	श्री आदिनाथ जी (श्री ऋषभदेव)	आषाढ कृष्ण २	चैत वदी ६	चैत वदी ६	फागुन वदी ११	माघ वदी १४
२	,, अजितनाथ जी	जेठ वदी १५	माघ सुदी १०	माघ सुदी १०	पौष सुदी ४	चैत सुदी ५
३	,, शंभवनाथ जी	फागुन सुदी ८	कातिक सुदी १५	मगसिर सुदी १५	कातिक वदी ४	चैत सुदी ६
४	,, अभिनन्दननाथ जी	वैसाख सुदी ६	माघ वदी १२	माघ सुदी १२	पौष सुदी १४	वैसाख सुदी ६
५	,, सुमतिनाथ जी	सावन सुदी २	चैत्र सुदी ११	चैत सुदी ११	चैत सुदी ११	चैत सुदी ११
६	,, पद्म प्रभ जी	माघ वदी ६	कार्तिक सुदी १३	कार्तिक सुदी १३	चैत सुदी १५	फागुन वदी ४
७	,, सुपार्श्वनाथ जी	भादों सुदी ६	जेठ सुदी १२	जेठ सुदी १२	फागुन वदी ६	फागुन वदी [illegible]
८	,, चन्द्रप्रभ जी	चैत वदी ५	पौष वदी ११	पौष वदी ११	फागुन वदी ७	फागुन सुदी ७
९	,, पुष्पदत जी	फागुन वदी ६	मगसिर सुदी १	मगसिर सुदी १	कातिक सुदी २	आसोज सुदी ८
१०	,, शीतलनाथ जी	चैत वदी ८	माघ वदी १२	माघ वदी १२	पौष वदी १४	आसोज सुदी ८

नं०	नाम तीर्थङ्कर	गर्भ	जन्म	तप	ज्ञान कल्याण	मोक्ष
११	,, श्री श्रेयासनाथ जी	जेठ वदी ८	फागुन वदी ११	फागुन वदी ११	माघ वदी १	सावन सुदी १५
१२	,, वासुपूज्य जी	असाढ वदी ६	फागुन वदी ११	फागुन वदी १४	भादो वदी २	भादो सुदी १५
१३	,, विमलनाथ जी	जेठ वदी १०	माघ सुदी १४	माघ सुदी १४	माघ सुदी ६	असाढ वदी ६
१४	,, अनन्तनाथ जी	कार्तिक वदी १	जेठ वदी १२	जेठ वदी १२	चैत वदी १५	चैत वदी ४
१५	,, धर्मनाथजी	वैसाख सुदी ८	माघ सुदी १३	माघ सुदी १३	पोप सुदी १५	जेठ सुदी १४
१६	,, शान्तिनाथ जी	भादों वदी ७	जेठ वदी ४	जेठ वदी १४	पोप सुदी १०	जेठ वदी १४
१७	,, कुंथुनाथ जी	सावन वदी १०	वैसाख सुदी १	वैसाख सुदी १	चैत सुदी ३	वैसाख सुदी १
१८	,, अरनाथ जी	फागुन सुदी ३	मगसिरसुदी १४	मगसिर सु० १४	कातिक सुदी १२	चैत सुदी ११
१९	,, मल्लिनाथ जी	चैत सुदी १	मगसिर सुदी ११	मगसिर सु० ११	पोप वदी २	फागुन सुदी ५
२०	,, मुनिसुव्रतनाथ जी	सावन वदी २	वैसाख व० १०	वैसाख वदी १०	वैसाख वदी ६	फागुन वदी १२
२१	,, नमिनाथ जी	असोज वदी २	असाढ वदी १०	असाढ वदी १०	मगसिर सु० ११	वैशाख वदी १४
२२	,, नेमिनाथ जी	कार्तिक सुदी ६	सावन सुदी ६	सावन सुदी ६	असोज सुदी १	असाढ सुदी ८
२३	,, पार्श्वनाथ जी	वैसाख वदी २	पौप वदी ११	पौप वदी ११	चैत वदी ४	सावन सुदी १
२४	,, श्री महावीर जी	असाढ सुदी ६	चैतसुदी १३	मगसिर व १०	वैसाख सुदी १०	कार्तिक वदी १५

श्री दि० जैन अतिशय क्षेत्र पद्मपुरा (वाडा) स्थित

श्री पद्मप्रभ–पूजा

❋ दोहा ❋

श्रीधर नन्दन पद्म प्रभ वीतराग जिन नाथ।
विघ्न हरण मंगल करन, नमो जोरि जुग हाथ॥
जन्म महोत्सव के लिए, मिल कर सब सुर राज।
आये कौशाम्बी नगर, पद पूजा के काज॥
पद्मपुरी में पद्मप्रभ, प्रगटे प्रतिमा रूप।
परम दिगम्बर शान्तिमय, छवि साकार अनूप॥
हम सब मिल करके यहां, प्रभु पूजा के काज।
आह्वानन करते सुखद, कृपा करो महाराज॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर २, संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ २ ठ ठ स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट्।

(अष्टक)

क्षीरोदधि उज्ज्वल नीर, प्रासुक गन्ध भरा।
कञ्चन झारी में लेय, दीनो धार धरा॥
वाडा के पद्म जिनेश, मंगल रूप सही।
काटो सब क्लेश महेश, मेरी अर्ज यही॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्रायजन्ममृत्यु विनाशनाय जलं०।

चन्दन केशर कर्पूर, मिश्रित गन्ध धरो।
शीतलता के हित देव, भव आताप हरो ।। बाडा० ।।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दन० ।

ले तन्दुल अमल अखण्ड, थाली पूर्ण भरो।
अक्षय पद पावन हेतु, हे प्रभु पाप हरो ।। बाडा०
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षत०

ले कमल केतकी वेल, पुष्प धरू आगे।
प्रभु सुनिये हमरी टेर, काम कला भागे ।। बाडा०
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय काम-वाण-विध्वंशनाय पुष्प० ।

नैवेद्य तुरत बनवाय, सुन्दर थाल सजा।
मम क्षुधा रोग नश जायँ, गाऊ वाद्य बजा ।। बाडा०
ॐ ह्रीं पद्मप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्य ।

हो जगमग-जगमग ज्योति, सुन्दर अनियारी।
ले दीपक श्री जिनचन्द्र, मोह नशे भारी ।। बाडा०
ॐ ह्रीं पद्मप्रभ जिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दी० ।

ले अगर कपूर सुगन्ध, चन्दन गन्ध महा।
खेवत हो प्रभु ढिग आज, आठो कर्म दहा ।। बाडा०
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप ।

श्रीफल बादाम मुलेय, केला आदि हरे।
फल पाऊ शिवपद नाथ, अरपू मोद भरे ।। बाडा०
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फल ।

जल चन्दन अक्षत पुष्प, नेवज आदि मिला।
मैं अष्ट द्रव्य से पूज, पाऊ सिद्ध शिला ।। बाडा०
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं० ।

दोहा—(अर्घ चरणों का)

चरण युगल श्री पद्म के, बन्दों मन वच काय।
अर्घ्य चढ़ाऊं भाव से, कर्म नष्ट हो जाय ॥ बाड़ा० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(भूमि के अन्दर विराजमान समय का अर्घ)

पृथ्वी में श्री पद्म की, पद्मासन आकार।
परम दिगम्बर शान्तिमय प्रतिमा भव्य अपार ॥
सौम्य शान्त अति कान्तिमय, निर्विकार साकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्यं ले पूजूं विविध प्रकार ॥ बाड़ा ॥
ॐ ह्रीं भूमि स्थित श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(पञ्च कल्याणक)

पद्मप्रभ जिनराज जी मोंहि राखो हो शरना।

दोहा—माघ कृष्ण छठ में प्रभो, आये गर्भ मझार।
मात सुसीमा का जनम, किया सफल करतार ॥ श्रीपद्म०
ॐ ह्रीं माघ कृष्णा ६ गर्भ मङ्गलप्राप्ताय श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यंम्०।

कार्तिक सुदी तेरह तिथी, प्रभू लियो अवतार।
देवों ने पूजा करी, हुआ मङ्गलाचार ॥ श्री पद्मप्रभ० ॥
ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ला १३ जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं०।

कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी, तृणवत् बन्धन तोड।
तप धारो भगवान ने मोह कर्म को मोड ॥ श्रीपद्म० ॥

ॐ ह्री कार्तिक शुक्ला १३ तपकल्याणकप्राप्ताय श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि०

चैत्र शुक्ल की पूर्णिमा उपज्यो केवलज्ञान ।
भव सागर से पार हो, दियो भव्य जन ज्ञान ।। श्रीपद्म० ।।

ॐ ह्री चैत्र शुक्ला १५ केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यम् नि० ।

फागुन बदी सुचौथ को, मोक्ष गये भगवान ।
इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजों धर ध्यान ।। श्री पद्म० ।।

ॐ ह्री फाल्गुन कृष्णा ४ मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि० ।

(जयमाला)

दोहा—चौतीसो अतिशय सहित, बाडा के भगवान ।
जयमाला श्रीपद्म की, गाऊं सुखद महान ।।

(पद्धरि छन्द)

जय पद्मनाथ परमात्मदेव । जिनकी करते सुर चरन सेव ।।
जय पद्म २ प्रभु तन रसाल । जय २ करते मुनि मन विशाल ।।
कौशाम्बी मे तुम जन्म लीन । बाडा मे बहु अतिशय करीन ।।
इक जाट पुत्र ने जमी खोद । पाया तुमको होकर समोद ।।
सुनकर हर्षित हो भविक वृन्द । पूजा आकर की दुख निकन्द ।।
करते दुखियो का दु.ख दूर । हो नष्ट प्रेत बाधा जरूर ।।
डाकिन शाकिन सब होय चूर्ण । अन्धे हो जाते नेत्र पूर्ण ।।
श्रीपाल सेठ अंजन सुचोर । तारे तुमने उनको विभोर ।।
अरु नकुल सर्प सीता समेव । तारे तुमने निज भक्त हेत ।।
हे सङ्कट मोचन भक्तपाल । हमको भी तारो गुण विशाल ।।

विनती करना है बार-बार । हार मेरा दुख अपार-आर ॥
मैना पूजन नद आठ दैन । भावत पूजे कर तृप्त नैन ॥
मन वच तन से पूजे जो कोय । पावे वे नर शिव सुख जु सोय ॥
ऐसी महिमा तेरी दयाल । अब हम पर भी होवो कृपाल ॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं० ।

मेटी मे श्री पद्म की पूजा रची विशाल ।
कृपा नाग रच नन्द मन, बिना छोटेलाल ॥
पूजा विधि जानूं नहीं, नहिं जानूं आह्वानन ।
भूल चूक सब माफ कर, दया करो भगवान ॥

इत्याशीर्वाद ।

बाहुबलि स्वामी की पूजा ।

दोहा ।

कर्म अरिगण जीतिके, दरशायो शिव पंथ ।
प्रथम सिद्ध पद जिन लयो भोग भूमिके अंत ॥ १
समर दृष्टि जल जीत लहि, मल्लयुद्ध जय पाय ।
वीर अग्रणी बाहुबलि, वंदो मन वच काय ॥२॥

ओं ह्रीं श्रीमन गोमटस्वर अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथ अष्टक चाल जोगीरासा ।

जन्म जरा मरनादि तृषा कर, जगत जीव दुख पावें
तिहि दुख दूर करन जिनपद को पूजन जल ले आवें ।

परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबलि बलधारी।
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥१॥

ओं ह्रीं वर्तमानावसर्पिण्यां समये प्रथम मुक्ति स्थान प्राप्ताय कर्मारि विजयी वीराधिवीर वीराग्रणी श्री बाहुबलि परम योगीन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जल ॥ १ ॥

यह ससार मरुस्थल अटवी तृष्णा दाह भरी है,
तिहि दुख वारन चदन लेकैं जिन पद पूज करी है।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबलि बलधारी,
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी॥२॥

॥ चदनं० ॥

स्वक्ष सालि शुचि नीरज रजसम गध अखड प्रचारी,
अक्षय पदके पावन कारन पूजें भवि जगतारी।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबलि बलधारी,
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी॥३॥

॥ अक्षत० ॥

हरिहर चक्रपति सुर दानव मानव पशु बस याकें,
तिहि मकरध्वज नाशक जिनको पूजों पुष्प चढाकें।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबलि बलधारी,
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी॥४॥

॥ पुष्प० ॥

दुखद त्रिजग जीवनको अति ही दोष क्षुधा अनिवारी,
तिहि दुख दूर करनको चरु वर ले जिन पूज प्रचारी।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहूबलि बलधारी,
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥५॥
॥ नैवेद्य० ॥
मोह महातम मे जग जीवन शिव मग नाहिं लखावै,
तिहि निरवारन दीपक करले जिनपद पूजन आवै।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहूबलि बलधारी।
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥६॥
॥ दीप० ॥
उत्तम धूप सुगंध बनाकर दश दिशमें महकावै,
दश विधि बंध निवारन कारण जिनवर पूज रचावै।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहूबलि बलधारी,
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥७॥
॥ धूप० ॥
सरस सुवरण सुगंध अनूपम स्वच्छ महाशुचि लावै,
शिव फल कारण जिनवर पदकी फलसों पूज रचावै।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहूबलि बलधारी,
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥८॥
॥ फल० ॥

वसु विधिके वश वसुधा सब ही परवश अति दुख पावै,
तिहि दुख दूर करनको भविजन अर्घ जिनाग्र चढावै।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबलि बलधारी,
जिनके चरण कमलको नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥९॥
॥ अर्घं० ॥

जयमाला दोहा।

आठ कर्म हनि आठगुण प्रगट करे जिन रूप।
सो जयवंतो भुजबली प्रथम भये शिव भूप ॥

कुसुमलता छंद।

जै जै जै जगतार शिरोमणि क्षत्रिय वंश अशंस महान,
जै जै जै जग जन हितकारी दीनो जिन उपदेश प्रमाण।
जै जै चक्रपति सुत जिनके शतसुत जेष्ठ भरत पहिचान,
जै जै जै श्री ऋषभदेव जिनसो जयवंत सदा जग जान॥१॥
जिनके द्वितीय महादेवी सुचि नाम सुनंदा गुण की खान,
रूप शील सम्पन्न मनोहर तिनके सुत भुजबली महान।
सवापंच शत धनु उन्नत तनु हरितवरण सोभा असमान,
वैडूर्यजमणि पर्वत मानो नील कुलाचल सम थिर जान॥२॥
तेजवंत परमाणु जगतमे तिन करि रचो शरीर प्रमाण,
सत वीरत्व गुणाकर जाको निरखत हरि हरषे उर आन।

धीरज अतुल वज्र सम नीरज सम वीराग्रणि अति बलवान,
जिन छवि लखि मनु शशि रवि लाजै कुसुमायुध लीनों सुषमान
बालसमैं जिन बाल चन्द्रमा शशि से अधिक धरे दुतिसार,
जो गुरुदेव पढ़ाई विद्या शस्त्र शास्त्र सब पढ़ी अपार।
ऋषभदेव ने पोदन पुरके नृप कीने भुजबली कुमार,
दई अयोध्या भरतेश्वरको आप बने प्रभुजी अनगार ॥४॥
राजकाज षटखंड महीपति सब दल लै चढ़ि आये आप,
बाहुबलि भी सन्मुख आये मंत्रिन तीन युद्ध दिये थाप।
दृष्टि नीर अरु मल्ल युद्धमें दोनों नृप कीजो बलथाप,
वृथा हानि रुक जाय सैन्यकी यातैं लहिये आपो आप ॥५॥
भरत भुजबली भूपति भाई उतरे समर भूमिमें जाय,
दृष्टि नीर रण थके चक्रपति मल्लयुद्ध तब करो अघाय।
पगतल चलत चलत अचला तब कंपत अचल शिखर ठहराय,
निषध नील अचलाधर मानों भये चलाचल क्रोध वशाय ॥६॥
भुज विक्रमबल बाहुबलीने लये चक्रपति अधर उठाय,
चक्र चलायो चक्रपति तब सो भी विफल भयो तिहि ठाय।
अति प्रचंड भुजदंड सुंड सम नृप शार्दूल बाहुबलि राय,
सिंहासन मगवाय जासपै अग्रजको दोनों पधराय ॥७॥
राजरमा रामासुर धनुमें जोबन दमक दामिनी जान,
भोग भुजंग जग सम जगको जान त्याग कीनो तिहि थान।

श्री चांदन गांव महावीर स्वामी पूजा ।

छन्द ।

श्री वीर सन्मति गांव चांदनमें प्रगट भये आय कर ।
जिनको वचन मन कायसे मैं पूजहूं शिर नाय कर ॥
हुये दयामय नार नर लखि, शांतिरूपी भेषको ।
तुम ज्ञानरूपी भानसे कीना सुशोभित देशको ॥
सुर इन्द्र विद्याधर मुनी नरपति नवावें शीसको ।
हम नवत हैं नित चावसों महावीर प्रभु जगदीशको ॥

ओं ह्रीं श्री चांदनगांव महावीर स्वामिन अत्र अवतर संवौषट् आह्वाननं । ओं ह्रीं श्री चांदन गांव महावीर स्वामिन अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ. स्थापनं । ओं ह्रीं श्री चांदन गांव महावीर स्वामिन अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अथाष्टक ।

क्षीरोदधिसे भरि नीर कंचन के कलशा ।
तुम चरणनि देत चढ़ाय आवागमन नशा ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री चांदनपुर महावीर स्वामिने जल नि०

मलयागिर और कपूर केशर ले हरषौं ।
प्रभु भव आताप मिटाय तुम चरननि परसौं ॥

चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥ धूप० ॥
पिस्ता किसमिस बादाम श्रीफल लौंग सजा ।
श्री वर्द्धमान पद राख पाऊं मोक्ष पदा ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥ फलं० ॥
जल गंध सु अक्षत पुष्प चरुवर जोर करों ।
ले दीप धूप फल मेलि आगे अर्घ करों ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥ अर्घं० ॥

टोंकमें चरणोंका अर्घ

जहाँ कामधेनु नित आय दुग्ध जु बरसावै ।
तुम चरननि दरशन होत आकुलता जावै ॥
जहां छतरी बनी विशाल तहां अतिशय भारी ।
हम पूजत मन वच काय तजि संशय सारी ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥
ओं ह्रीं टोंकमें स्थापित श्री महावीर चरणेभ्यो अर्घं ।

टीलेके अन्दर विराजमान समयका अर्घ

टीलेके अन्दर आप सोहैं पद्मासन ।

जहां चतुर निकाई देव आवें जिन शासन ॥
नित पूजन करत तुम्हारा कर्मे ले झारी।
हम हूं वसु द्रव्य बनाय पजें भरि थारी ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥
ओं ह्रीं श्री चांदनपुर महावीर जिनेंद्राय टीलेके अंदर विराजमान नमयका अर्घं।

पंचकल्याणक

कुंडलपुर नगर मझार त्रिशला उर आयो।
सुदि छठि असाढ़ सुर आई रतनजु बरसायो ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥
ओं ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय असाढ सुदि छठि गर्भ मंगल प्राप्ताय अर्घं।
जनमत अनहद भई घोर आये चतुर निकाई।
तेरस शुक्लाकी चैत्र सुर गिरि ले जाई ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥
ओं ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय चैत सुदि तेरस जन्म मंगल प्राप्ताय अर्घं।
कृष्णा मगसिर दश जान लौकांतिक आये।
करि केश लौंच ततकाल झट वनको धाये ॥

चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥
ओं ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय मगसिर वदी दशमी तपमंगल प्राप्ताय अर्घं ।

वैसाख सुदी दशमांहि घाती क्षय करना ।
पायो तुम केवल ज्ञान इन्द्रनिकी रचना ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥
ओं ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय वैसाख सुदी दशमी केवलज्ञान प्राप्ताय अर्घं ।

कार्तिक जु अमावस कृष्ण पावापुर ठाहीं ।
भयो तीनलोकमें हर्ष पहुंचे शिव माहीं ॥
चांदनपुरके महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥
ओं ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय कार्तिक वदी अमावस मोक्षमंगल प्राप्ताय अर्घं ।

जयमाला दोहा ।

मंगलमय तुम हो सदा श्रीसन्मति सुखदाय ।
चांदनपुर महावीरकी कहूं आरती गाय ॥

पद्धड़ी छन्द ।

जय जय चांदनपुर महावीर, तुम भक्तजनों की हरत पीर ।
जड़ चेतन जगके लखत आप, दई द्वादशांग वानी अलाप ॥१॥

अब पंचम काल मंझार आय, चांदनपुर अतिशय दई दिखाय।
टीलेके अंदर बैठि वीर, नित हरा गायका तुमने क्षीर ॥२॥
ग्वालाको फिर आगाह कीन, जब दरशन अपना तुमने दीन।
मूरति देखी अति ही अनूप, है नग्न दिगंबर शांति रूप ॥३॥
तहां श्रावक जन बहु गये आय, किये दरशन करि मनवचनकाय।
है चिह्न शेरका ठीक जान, निश्चय है ये श्रीवर्द्धमान ॥४॥
सब देशनके श्रावक जु आय, जिन भवन अनूपम दियो बनाय।
फिर शुद्ध दई वेदी कराय, तुरतहि गजरथ फिर लयो सजाय ॥५
ये देख ग्वाल मनमें अधीर, मम ग्रह को त्यागो नहीं वीर।
तेरे दरशन बिन तजूं प्राण, सुनि टेर मेरी किरपा निधान ॥६॥
कीने रथमें प्रभु विराजमान, रथ हुआ अचल गिरिके समान।
तब तरह तरहके किये जोर, बहुतक रथ गाड़ी दिये तोड़ ॥७॥
निशिमाहिं स्वप्न सचिवहिं दिखात, रथ चलैं ग्वालका लगत हाथ
भोरहिं झट चरण दियो बनाय, संतोष दियो ग्वालहिं कराय ॥८
करि जय जय प्रभु से करी टेर, रथ चल्यो फेर लागी न देर।
बहु निरत करत बाजे बजाई, स्थापन कीने तहँ भवन जाइ ॥९॥
इक दिन मंत्रीको लगा दोष, धरि तोप कही नृप खाइ रोष।
तुमको जब ध्याया वहां वीर, गोलासे झट बच गया वजीर ॥१०
मंत्री नृप चांदन गांव आय, दरशन करि पूजा की बनाय।
करि तीन शिखर मंदिर रचाय, कंचन कलशा दीने धराय ॥११

यह हुक्म कियो जयपुर नरेश, मालाना मेला हो हमेश ।
अब जुडन लगे बहु नर उ नार. तिथि चैत सुदी पूनों मझार १२
मीना गूजर आवें विचित्र, सब वरण जुटे करि मन पवित्र ।
बहु निरत करत गावें सुहाय, कोई २ घृत दीपक रह्यो चढ़ाय १३
कोइ जय जय शब्द करें गंभीर, जय जय जय हे श्री महावीर ।
जैनी जन पूजा रचत आन, कोई छत्र चमरके करत दान ॥ १४
जिसकी जो मन इच्छा करंत, मन वांछित फल पावें तुरत ।
जो करें वंदना एकबार, सुख पुत्र संपदा हो अपार ॥१५॥
जो तुम चरणोंमें रखें प्रीत, ताको जगमें को सके जीत ।
है शुद्ध यहांका पवन नीर, जहा अति विचित्र सरिता गंभीर १६
पूरनमल पूजा रची सार, हो भूल लेउ सज्जन सुधार ।
मेरा है शमशाबाद ग्राम, त्रय काल करूं प्रभुको प्रणाम ॥१७॥

घत्ता ।

श्री वर्द्धमान तुम गुण निधान उपमा न बनी तुम चरनन की ।
है चाह यही नित बनी रहै अभिलाष तुम्हारे दरशन की ॥
ओं ह्रीं श्री चांदन गाव महावीर जिनेन्द्राय अर्घं ।

दोहा

अष्टकर्मके दहनको पूजा रची विशाल ।
पढ़े सुनें जो भावसे छूटे जग जंजाल ॥१॥

संवत जिन चौवीस सौ है वासठकी साल।
एकादश कार्तिक वदी पूजा रची सम्हाल ॥२॥

इत्याशीर्वाद ।

महावीर स्वामी का भजन ।

चाल—रसिया ।

चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ टेर ॥
जयपुर राज्य गाव चांदनपुर, तहां बनो उन्नत जिन मंदिर।
तट नदी गम्भीर, हमारी पीर हरो॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ १ ॥
पूरव बात चली यो आवे, एक गाय चरने को जावे।
झर जाय उसका क्षीर, हमारी पीर हरो॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ २ ॥
एक दिवस मालिक सग आयो, देख गाय टीलो खुदवायो।
खोदत भयो अधीर, हमारी पीर हरो॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ ३ ॥
रैन माहि तब सुपनो दीनों, धीरे धीरे खोद जमीनो।
है इसमें तस्वीर, हमारी पीर हरो॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ ४ ॥
प्रात होत फिर भूमि खुदाई, वीर जिनेश्वर प्रतिमा पाई।

भई इकट्ठी भीड़, हमारी पीर हरो ॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ ५ ॥
तब ही से हुआ मेला जारी, होय भीड़ हरसाल करारी ।
चैत मास आखीर, हमारी पीर हरो ॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ ६ ॥
लाखों मीना गूजर आवें, नाचें गावें गीत सुनावें ।
जय बोलें महावीर, हमारी पीर हरो ॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ ७ ॥
जुटें हजारों जैनी भाई, पूजन पाठ करें सुखदाई ।
मनवचतन धरि धीर, हमारी पीर हरो ॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ ८ ॥
छत्र चमर सिंहासन लावें, भरि भरि घृतके दीप जलावें ।
बोलें जै गम्भीर, हमारी पीर हरो ॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ ९ ॥
जो कोई सुमरे नाम तुम्हारा, धन सतान बढ़े व्योपारा ।
होय निरोग शरीर, हमारी पीर हरो ॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ १० ॥
मक्खन शरण तुम्हारी आयो, पुण्य योगसे दर्शन पायो ।
खुली आज तकदीर, हमारी पीर हरो ॥
चांदनपुरके महावीर हमारी पीर हरो ॥ ११ ॥

नवदेवता पूजन

गीताछन्द

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य हैं।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वरमूर्ति जिनगृह वंद्य हैं ॥
नव देवता ये मान्य जगमें, हम सदा अर्चा करें।
आह्वान कर थापें यहाँ मन में अतुल श्रद्धा धरें ॥

ॐ ह्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयसमूह । अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानन ।

ॐ ह्री अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन ।

ॐ ह्री अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरण ।

अथाष्टक

गंगानदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा।
अंतर मलों के क्षालने को नीर से पूजूं मुदा ॥
नवदेवताओंकी सदा जो भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥१॥

ॐ ह्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन, देह ताप निवारता ।
तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहिं वारता ।।
नवदेवताओंकी सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ।। २।।

ॐ ह्री चन्दन ।

क्षीरोदधी के फेन सम सित तदुलों को लायके ।
उत्तम अखडित सौख्य हेतु, पुज नव सुखदायके ।।नव०।।३।।

ॐ ह्री अक्षत ।

चपा चमेली केवड़ा, नाना सुगंधित ले लिये ।
भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये ।।नव०।।४।।

ॐ ह्री पुष्प ।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में ।
निज आत्म अमृत सौख्य हेतु पूजहूँ नत भाल मैं ।।नव०।।५।।

ॐ ह्री नैवेद्य ।

कर्पूर ज्योति जगमगे दीपक लिया निज हाथ में ।
तुम आरती तम वारती, पाऊं सुज्ञान प्रकाश में ।।नव०।।६।।

ॐ ह्री दीप ।

दशगंधधूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊं सदा ।
निज आत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा ।।नव०।।७।।

ॐ ह्री धूप ।

अगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊं थाल में ।
उत्तम अनूपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूं आज मैं ।।नव०।।८।।

ॐ ह्री फलं ।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक सुधूप फलार्घ्य ले ।
वर रत्नत्रय निधि लाभ यह वस अर्घ्य से पूजत मिले ।।नव०।।९।।

ॐ ह्री अर्घ्यं ।

दोहा—जलधारा से नित्य मै, जगकी शांति हेत ।
नवदेवो को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत ।।१०।।

शातये शातिधारा ।

नाना विध के सुमन ले, मन में बहु हरषाय ।
मैं पूजू नव देवता, पुष्पांजली चढाय ।।११।।

दिव्य पुष्पाजलि ।

जाप्य

ह्री अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नम ।

(९, २७ या १०८ बार)

जयमाला

सोरठा–चिच्चिंतामणिरत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हो ।
गाऊ गुणमणिमाल, जयवते वर्तो सदा ।।१।।

चाल—हे दीनबधु श्रीपति

जय जय श्री अरिहत देवदेव हमारे ।
जय घातिया को घात सकल जतु उबारे ।।

जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वदना करूं ।
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूं ।।२।।

आचार्य देव गुण छत्तीम धार रहे हैं ।
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं ।।
जैवत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी ।
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें घनी ।।३।।

जय साधु अठाईस गुणों को धरें सदा ।
निज आतमा की साधना से च्युत न हों कदा ।।
ये पचपरमदेव मदा वद्य हमारे ।
संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें ।।४।।

जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा ।
जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा ।।
जिन की ध्वनि पियूष का जो पान करेंगे ।
भव रोग दूर कर वे मुक्ति कांत बनेंगे ।।५।।

जिन चैत्य की जो वदना त्रिकाल करे हैं ।
वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं ।।
कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें ।
वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा वसें ।।६।।

नव देवताओं की जो नित आराधना करें।
वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें॥
मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूं।
संपूर्ण "ज्ञानमती" सिद्धि हेतु ही भजूं॥७॥

दोहा—नवदेवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम।
भक्ती का फल मैं चहूँ, निजपद में विश्राम॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-
चैत्यालयेभ्यो जयमाला अर्घ्यं।
शांतिधारा, पुष्पांजलि।

गीताछंद—जो भव्य श्रद्धाभक्ति से नव देवता पूजा करें।
वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें।
नवनिधि अतुल भंडार लें, फिर मोक्ष सुख भी पावते।
सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहाँ पर कभी न आवते॥९॥

इत्याशीर्वादः।

शान्ति-पाठ

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी । शील-गुणव्रत-संयमधारी ॥
लखन एक सौ आठ विराजें । निरखत नयन कमलदल लाजैं ॥
पंचम चक्रवर्तिपद धारी । सोलम तीर्थंकर सुखकारी ॥
इंद्र नरेंद्र पूज्य जिन नायक । नमो शांतिहित शांति विधायक ॥
दिव्य विटप पहुपनकी वरषा । दुंदुभि आसन वाणी सरसा ॥
छत्र चमर भामंडल भारी । ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ॥
शांति जिनेश शांति सुखदाई । जगत्पूज्य पूजौं शिर नाई ॥
परम शांति दीजे हम सबको । पढ़ें तिन्हें पुनि चार संघको ॥

वसंततिलका

पूजैं जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके ।
इंद्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ॥
सो शांतिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप ।
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ॥६॥

इन्द्रवज्रा

संपूजकोंको प्रतिपालकोंको यतीनको औ यतिनायकोंको ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले कीजै सुखी हे जिन शांतिको दे ॥

स्रग्धरा छन्द

होवै सारी प्रजाको सुख बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवै वर्षा समै पै तिलभर न रहै व्याधियोंका अँदेशा॥
होवै चोरी न जारी सुसमय वरतै हो न दुष्काल मारी।
सारे ही देश धारैं जिनवरवृषको जो सदा सौख्यकारी॥

दोहा

घातिकर्म जिन नाश करि पायो केवलराज।
शांति करो सब जगतमें वृषभादिक जिनराज॥

मन्दाक्रान्ता

शास्त्रोंका हो पठन सुखदा लाभ सत्संगतीका।
सद्वृत्तोंका सुजस कहके दोष ढाकूँ सभीका॥
बोलूँ प्यारे वचन हितके आपका रूप ध्याऊँ।
तौ लौं सेऊँ चरण जिनके मोक्ष जौ लौं न पाऊँ॥

आर्या

तव पद मेरे हियमें मम हिय तेरे पुनीत चरणोंमें।
तब लौं लीन रहौ प्रभु जब लौं पाया न मुक्ति पद मैंने॥
अक्षर पद मात्रासे दूषित जो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सब करुणा करि पुनि छुडाहु भवदुखसे॥
हे जगबन्धु जिनेश्वर! पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ कर्मोंका क्षय सुबोध सुखकारी॥

विन जाने वा जानके रही टूट जो कोय।
तुम प्रसादतैं परम गुरु सो सब पूरन होय ॥१॥
पूजनविधि जानूं नहीं नहिं जानूं आह्वान।
और विसर्जन हू नहीं क्षमा करहु भगवान ॥२॥
मन्त्रहीन धनहीन हूं क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे देहु चरणकी सेव ॥३॥
[आये जो जो देवगण पूजे भक्तिप्रमान।
ते अब जावहु कृपाकर अपने अपने थान ॥]

श्री अनन्तनाथ जिनपूजा

छन्द कवित्त

पुष्पोत्तर तजि नगर अजुध्या जनम लियो सूर्याउर आय,
सिंघसेन नृपके नन्दन, आनन्द अशेष भरे जगराय।
गुन अनंत भगवंत धरे, भवदंद हरे तुम हे जिनराय,
थापतु हौं त्रय बार उचरिकैं,कृपासिन्धु तिष्टहु इत आय ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठ ठ । अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट्।

अष्टक

छन्द गीता तथा हरिगीता

शुचि नीर निरमल गंगको लै, कनकभृंग भराइया,

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपम् ।

रसथक्व पक्व सुभक्व चक्व, सुहावनें मृदु पावनें ।
फलसार वृन्द अमंद ऐसो, ल्याय पूज रचावनें ॥ज०॥८॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलम् ।

शुचि नीर चन्दन शालिशंदन, सुमन चरु दीवा धरों ।
अरु धूप जुत मैं अरघ करि, करजोरजुग विनति करों ॥ज०॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घम् ।

पंचकल्याणक

छंद सुन्दरी तथा द्रुतविलंबित

असित कातिक एकम भावनों, गरभको दिन सो गिन पावनों ।
किय सची तित चर्चन चावसों, हम जजें इत आनंदभावसों ॥१॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णप्रतिपदि गर्भमंगलमंडिताय श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घम् ।

जनम जेठवदी तिथि द्वादशी, सकल मङ्गल लोकविषैं लशी ।
हरि जजे गिरिराज समाजतैं, हम जजैं इत आतम काजतैं ॥२॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्या जन्ममंगलमंडिताय श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घम् ।

भवशरीर विनस्वर भाइयो, असित जेठदुवादशि गाइयो ।
सकल इंद्र जजे तित आइकैं, हम जजैं इत मंगल गाइकैं ॥३॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्या तपोमंगलमंडिताय श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घम् ।

जयमाला

छन्द दोहा

तुम गुण वरनन येम जिम, खंविहाय करमान ।
तथा मेदिनी पदनिकरि, कीनो चहत प्रमान ॥१।
जय अनन्त रवि भव्यमन, जलज वृन्द विहसाय ।
सुमति कोकतियथोक सुख, वृद्ध कियो जिनराय ॥२॥

छन्द नयमालनी, चडी तथा तामरस

ॐ अनन्त गुनवंत नमस्ते, शुद्ध ध्येय नित सन्त नमस्ते ।
लोकालोक विलोक नमस्ते, चिन्मूरत गुनथोक नमस्ते ॥३॥
रत्नत्रयधर धीर नमस्ते, करमशत्रुकरि कीर नमस्ते ।
चार अनंत महन्त नमस्ते, जय जय शिवतियकंत नमस्ते ॥४॥
पंचाचार विचार नमस्ते, पंच करण मदहार नमस्ते ।

पंच परावृत्त-चूर नमस्ते, पंचमगति सुखपूर नमस्ते ॥५॥
पंचलब्धि-धरनेश नमस्ते, पंच-भाव सिद्धेश नमस्ते ।
छहों दरब गुनजान नमस्ते, छहों कालपहिचान नमस्ते ॥६॥
छहों काय रच्छेश नमस्ते, छह सम्यक उपदेश नमस्ते ।
सप्तविसनवनवह्नि नमस्ते, जय केवलअपरन्हि नमस्ते ॥७॥
सप्ततत्त्व गुनभनन नमस्ते, सप्त श्वभ्रगत हनन नमस्ते ।
सप्तभंगके ईश नमस्ते, सातों नय कथनीश नमस्ते ॥८॥
अष्टकरममलदल्ल नमस्ते, अष्टजोगनिरशल्ल नमस्ते ।
अष्टमधराधिराज नमस्ते, अष्टगुननिसिरताज नमस्ते ॥९॥
जय नवकेवल प्राप्त-नमस्ते, नव पदार्थथिति आप्त नमस्ते ।
दशों धरमधरतार नमस्ते, दशों बंधपरिहार नमस्ते ॥१०॥
विघ्न महीधर विज्जु नमस्ते, जय ऊरधगतिरिज्जु नमस्ते ।
तन कनकंदुति पूर नमस्ते, इक्ष्वाकज गनसूर नमस्ते ॥११॥
धनु पचासतन उच्च नमस्ते, कृपासिंधु गुन शुच्च नमस्ते ।
सेही अङ्क निशंक नमस्ते, चितचकोरमृगअङ्क नमस्ते ॥१२॥
राग दोषमदटार नमस्ते, निजविचार दुखहार नमस्ते ।
सुर सुरेश-गन-वृन्द नमस्ते, 'वृन्द' करो सुखकंद नमस्ते ॥१३॥

छन्द घत्तानन्द

जय जय जिनदेवं सुरकृतसेवं, नितकृतचित्तहुल्लासधरं ।
आपदउद्धारं समतागारं, वीतराग विज्ञानभरं ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय महार्घम् ।

छन्द महालिप्तकपोल तथा रोडक

जो जन मनवचकाय लाय, जिन जजै नेह धर,
या अनुमोदन करै करावै पढै पाठ वर।
ताके नित नव होय, सुमंगल आनन्ददाई,
अनुक्रमतै निरवारन, लहै सामग्री पाई ॥१४॥

परिपुष्पांजलिम् क्षिपेत्, इत्याशीर्वाद

प्रभाती दौलत कृत

प्रात काल मन्त्र जपो णमोकार भाई।
अक्षर पैंतीस शुद्ध हृदय मे धराई ॥टेक॥

नर भव तेरो सुफल होत पातक टर जाई।
विघन जासो दूर होत संकट मे सहाई ॥१॥

कल्पवृक्ष कामधेनु चिन्तामणि जाई।
ऋद्धि सिद्धि पारस तेरो प्रकटाई ॥२॥

मन्त्र जन्त्र तन्त्र सब जाही से बनाई।
सम्पति भण्डार भरे अक्षय निधि आई ॥३॥

तीन लोक माँहि सार वेदन मे गाई।
जगत मे प्रसिद्ध धन्य मंगलीक भाई ॥४॥

११. सामायिक पाठ भाषा

१ प्रतिक्रमण कर्म

काल अनंत भ्रम्यो जग मे सहिये दुख भारी।
जन्म मरण नित किये पाप को व्है अधिकारी॥
कोटि भवांतर माहि मिलन दुर्लभ सामायिक।
धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुख दायक॥१॥
हे सर्वज्ञ जिनेश! किये जे पाप जु मैं अब।
ते सब मन-वच-काय-योग की गुप्ति बिना लभ॥
आप समीप हजूर माहि मै खड़ो खडो सब।
दोष कहूँ सो सुनो करो नठ दुख देहि जब॥२॥
क्रोधमानमदलोभ मोह मायावशि प्रानी।
दुःख सहित जे किये दया तिनकी नहि आनी॥
बिना प्रयोजन एकेंद्रिय वि ति चउ पचेंद्रिय।
आप प्रसादहि मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय॥३॥
आपस मे इकठौर थापकरि जे दुख दीने।
पेलि दिये पगतलै दाबिकरि प्रान हरीने॥
आप जगत के जीव जिते तिन सब के नायक।
अरज करूँ मैं सुनो दोष मेटो दुखदायक॥४॥

अजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय ।
तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय ॥
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहु दयानिधि ।
यह पडिकोणो कियो आदि षट्कर्म माहिं विधि ॥५॥

२ द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म

इसके आदि व अन्त में आलोचना पाठ बोलकर फिर तीसरे सामायिक कर्म का पाठ करना चाहिए।

जो प्रमादवशि होय विराधे जीव घनेरे ।
तिन को जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ॥
सो सब झूठो होउ जगतपति के परसादै ।
जा प्रमादतैं मिलै सर्व सुख दु:ख न लाधै ॥६॥
मै पापी निर्लज्ज दया करि हीन महाशठ ।
किये पाप अघ ढेर पाप मति होय चित्त दुठ ॥
निंदूं हूँ मै बार बार निज जिय को गरहूं ।
सबविधि धर्म उपाय पाय फिर पापहि करहूं ॥७॥
दुर्लभ है नर जन्म तथा श्रावक कुल भारी ।
सत सगति सजोग धर्म जिन श्रद्धाधारी ॥
जिन वचनामृत धार समावर्तै जिनवानी ।
तोहू जीव सघारे धिक धिक धिक हम जानी ॥८॥
इन्द्रिय लपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब ।
अज्ञानी जिमि करै तिसि विधि हिंसक ह्वै अब ॥
गमनागमन करतो जीव विराधे भोले ।

ते सब दोष किये निंदू अब मन वच तोले ॥ ९ ॥
आलोचन विधि थकी दयो लागे जु घनेरे ।
ते सब दोष विनाश होउ तुम तें जिन मेरे ॥
बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता ।
ईर्षादिक तें भये निंदि ये जे भयभीता ॥१०॥

३ तृतीय सामायिक भाव कर्म

सब जीवन मे मेरे समता भाव जग्यो है ।
सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है ॥
आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छांड़ि करिहूँ सामायिक ।
संजम मो कब शुद्ध होय भाव बधायक ॥ ११ ॥
पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति ।
पंचहि थावर माहि तथा त्रस जीव बसै जित ॥
बेइंद्रिय तिय चउ पचेंद्रियमांहि जीव सब ।
तिन तें क्षमा कराऊँ मुझ पर क्षमा करो अब ॥१२॥
इस अवसर मे मेरे सब सम कंचन अरु तृण ।
महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहिं समगण ॥
जामन मरण समान जानि हम समता कीनो ।
सामायिकका काल जितै यह भाव नवीनो ॥ १३ ॥
मेरो है इक आतम तामे ममत जु कीनो ।
और सबै मम भिन्न जानि समता रसभीनो ॥
मात पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सबै यह ।
मोतें न्यारे जानि जथारथ रूप करयो गह ॥१४॥

मैं अनादि जग जाल मांहि फंसि रूप न जाण्यो ।
एकेंद्रिय दे आदि जंतु को प्राण हराण्यो ।।
ते सब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी ।
भव-भव को अपराध छिमा कीज्यो कर मरजी ।। १५।।

४ चतुर्थ स्तवन कर्म

नमों ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्म को ।
सम्भव भव दुख हरण करण अभिनन्द शर्म को ।।
सुमति सुमति दातार तार भव सिंधु पार कर ।
पद्म प्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीति धर ।।१६।।
श्रीसुपार्श्व कृत पास नाश भव जास शुद्ध कर ।
श्री चन्द्रप्रभ चन्द्रकान्तिसम देह कांतिधर ।।
पुष्पदन्त दमि दोष कोष भविपोष रोषहर ।
शीतल शीतल करण हरण भवताप दोष कर ।।१७।।
श्रेयरूप जिनश्रेय ध्येय नित सेय भव्यजन ।
वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिक भवभयहन ।।
विमल विमलमति देन अन्तगत है अनन्त जिन ।
धर्मशर्मशिवकरण शान्तिजिन शान्ति विधायिन ।।१८।।
कुंथु कुंथुमुख जीवपाल अरनाथ जाल हर ।
मल्लिमल्लसम मोहमल्लमारन प्रचार धर ।
मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुरसघंहि नमिजिन ।
नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ माहि ज्ञानधन ।।१९।।
पार्श्व नाथ जिनपार्श्व उपलसम मोक्ष रमापति ।
वर्द्धमान जिन नमूं वमूं भवदुःख कर्मकृत ।।

या विधि मैं जिन सप्तरूप चउवीस संख्यधर।
स्तव नमूं हूँ वारम्बार वन्दूं शिव सुखकर ॥२०॥

५ पञ्चम वंदना कर्म

वन्दू मैं जिनवीर धीर महावीर सु सनमति।
वर्द्धमान अतिवीर वन्दि हूँ मनवचतनकृत ॥
त्रिशलातनुज महेश धीश विद्यापति वन्दू।
वंदौं नित प्रति कनक रूप तनु पापनिकंदूं ॥२१॥
सिद्धारथ नृपनंद द्वंद दुख दोष मिटावन।
दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन ॥
कुण्डल पुर करि जन्म जगत जिय आनंद कारन।
वर्ष बहत्तर आयु पाय सब ही दुख टारन ॥२२॥
सप्तहस्त तनु तुङ्गभंगकृत जन्ममरण भय।
बालब्रह्म मय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय।
दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन।
आप बसे शिवमाहि ताहि वंदौं मन वच तन ॥२३॥
जाके वंदनथकी दोष दुख दूरहि जावै।
जाके वंदनथकी मुक्तितिय सन्मुख आवै।
जाके वंदनथकी वंद्य होवें सुरगन के।
ऐसे वीर जिनेश वन्दि हूँ क्रम युग तिनके ॥२४॥
सामायिक षट्कर्ममांहि वंदन यह पंचम।
वंदौं वीर जिनेंद्र इंद्रशतवंद्य वंद्य मम ॥
जन्म मरण भय हरो करो अघ शान्ति शान्तिमय।
मैं अघ कोष सुपोष दोष को दोष विनाशय ॥२५॥

६. छठा कायोत्सर्ग कर्म

कायोत्सर्ग विधान करूँ अंतिम सुखदाई।
कायत्यजनमय होय काय सबको दुखदाई॥
पूरब दक्षिण नमूँ दिशा पश्चिम उत्तर मे।
जिनगृह वदन करूँ हरूँ भवपापतिमिर मैं ॥२६॥
शिरोनति मैं करूँ नमू मस्तक कर धरिकैं।
आवर्तादिक क्रिया करूँ मन वच मद हरिकैं॥
तीनलोक जिन भवनमाहि जिन है जुअकृत्रिम।
कृत्रिम हैं द्वय अर्द्धद्वीप माही वदो जिम ॥२७॥
आठ कोडि परि छप्पन लाख जु सहस सत्याणू ।
च्यारि शतक-पर असी एक जिनमदिरजाणू ॥
व्यंतर ज्योतिष माहि मध्यरहिते जिन मदिर ।
ते सब वदन करूँ हरहु मम पाप सघकर ॥२८॥
सामायिकसम नाहि और कोउ वैर मिटायक ।
सामायिकसम नाहि और कोउ मैत्री दायक ॥
श्रावक अणुव्रत आदि अन्त सप्तम गुणथानक ।
यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥२९॥
जे भवि आतम-काज-करण उद्यम के धारी।
ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी॥
राग रोष मदमोह क्रोध लोभादिक जे सब।
बुध महाचन्द्र विलाय जाय तातैं कीज्यो अब ॥३०॥

आरती श्री चाँदनपुर महावीर स्वामी

जय महावीर प्रभो, स्वामी जय महावीर प्रभो ।
कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानन्द विभो ॥
ओम जय महावीर प्रभो ॥

सिद्धारथ घर जन्मे, वैभव था भारी, स्वामी वैभव था भारी ।
बाल ब्रह्मचारी व्रत पाल्यौ तपधारी ॥१ ओम जय म० प्रभो ॥

आतम ज्ञान विरागी, सम दृष्टि धारी ।
माया मोह विनाशक, ज्ञान ज्योति जारी ॥२ ओम जय म० प्रभो ॥

जग में पाठ अहिंसा, आपहि विस्तार्यो ।
हिंसा पाप मिटाकर, सुधर्म परिचार्यो ॥३ ओम जय म० प्रभो ॥

इह विधि चांदनपुर में अतिशय दरशायौ ।
ग्वाल मनोरथ पूर्यो दूध गाय पायौ ॥४ ओम जय म० प्रभो ॥

प्राणदान मन्त्री को तुमने प्रभु दीना ।
मन्दिर तीन शिखर का, निर्मित है कीना ॥५ ओम जय म० प्रभो ॥

जयपुर नृप भी तेरे, अतिशय के सेवी ।
एक ग्राम तिन दीनो, सेवा हित यह भी ॥६ ओम जय म० प्रभो ॥

जो कोई तेरे दर पर, इच्छा कर आवै ।
होय मनोरथ पूरण, संकट मिट जावै ॥७ ओम जय म० प्रभो ॥

निशि दिन प्रभु मन्दिर में, जगमग ज्योति जरै ।
हरि प्रसाद चरणों में, आनन्द मोद भरै ॥८ ओम जय म० प्रभो ॥



श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रम्

[भगवज्जिनसेनाचार्य कृत]

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूतवृत्तयेऽचिन्त्यवृत्तये ॥ १ ॥
नमस्ते जगतां पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे नमोऽस्तु ते ।
विदांवर नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ॥ २ ॥
कर्मशत्रुहणं देवमामनन्ति मनीषिणः ।
त्वामानमत्सुरेण्मौलि-भा-मालाभ्यर्चित-क्रमम् ॥ ३ ॥
ध्यान-दुर्घण-निर्भिन्न-घन-घाति-महातरुः ।
अनन्त-भव-सन्तान-जयादासीरनन्तजित् ॥ ४ ॥
त्रैलोक्य-निर्जयावाप्त-दुर्दर्पमतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्जिन मृत्युजयो भवान् ॥ ५ ॥
विधूताशेष-संसार-बन्धनो भव्य-बान्धवः ।
त्रिपुरारिस्त्वमीशोऽसि जन्म-मृत्युजरान्तकृत् ॥ ६ ॥
त्रिकाल-विजयाशेष-तत्त्वभेदात् त्रिधोत्थितम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोऽसि त्वमीशिता ॥ ७ ॥
त्वामन्धकान्तकं प्राहुर्मोहान्धासुर-मर्दनात् ।
अर्द्धं ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोऽस्यतः ॥ ८ ॥

शिवः शिव-पदाभ्यासाद्‌ दुरितारि-हरो हरः ।
शङ्करः कृतशं लोके शम्भवस्त्वं भवन्सुखे ॥ ९ ॥
वृषभोऽसि जगज्ज्येष्ठः पुरुः पुरु-गुणोदयैः ।
नाभेयो नाभि-सम्भूतेरिक्ष्वाकु-कुल-नन्दनः ॥ १० ॥
त्वमेकः पुरुषस्कंधस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने ।
त्वं त्रिधा बुद्ध-सन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञान-धारकः ॥ ११ ॥
चतुःशरण-माङ्गल्यमूर्तिस्त्वं चतुरस्रधीः ।
पञ्च-ब्रह्ममयो देव पावनस्त्वं पुनीहि माम्‌ ॥ १२ ॥
स्वर्गावतारिणे तुभ्यं सद्योजातात्मने नमः ।
जन्माभिषेक-वामाय वामदेव नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥
सन्निष्क्रान्तावघोराय परं प्रशममीयुषे ।
केवलज्ञान संसिद्धावीशानाय नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥
पुरस्तत्पुरुषत्वेन विमुक्त-पद-भाजिने ।
नमस्तत्पुरुषावस्थां भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ॥ १५ ॥
ज्ञानावरणनिर्ह्रासान्नमस्तेऽनन्तचक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदृश्वने ॥ १६ ॥
नमो दर्शनमोहघ्ने क्षायिकामलदृष्टये ।
नमश्चारित्रमोहघ्ने विरागाय महौजसे ॥ १७ ॥

नमस्तेऽनन्त-वीर्याय नमोऽनन्त-सुखात्मने ।
नमस्तेऽनन्त-लोकाय लोकालोकावलोकिने ॥ १८ ॥

नमस्तेऽनन्त-दानाय नमस्तेऽनन्त-लब्धये ।
नमस्तेऽनन्त-भोगाय नमोऽनन्तोपभोगिने ॥ १९ ॥

नमः परम-योगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।
नमः परम-पूताय नमस्ते परमर्षये ॥ २० ॥

नमः परम-विद्याय नमः पर-मत-च्छिदे ।
नमः परम-तत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ॥ २१ ॥

नमः परमरूपाय नमः परम-तेजसे ।
नमः परम-मार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥ २२ ॥

परमर्द्धिजुषे धाम्ने परम-ज्योतिषे नमः ।
नमः पारेतमःप्राप्तधाम्ने परतरात्मने ॥ २३ ॥

नमः क्षीण-कलङ्काय क्षीण-बन्ध नमोऽस्तु ते ।
नमस्ते क्षीण-मोहाय क्षीण-दोषाय ते नमः ॥ २४ ॥

नमः सुगतये तुभ्यं शोभना गतिमीयुषे ।
नमस्तेऽतीन्द्रिय-ज्ञान-सुखायानिन्द्रियात्मने ॥ २५ ॥

काय-बन्धननिर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते ।
नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ॥ २६ ॥

अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
नमः परम-योगीन्द्र-वन्दितांघ्रि-द्वयाय ते ॥२७॥
नमः परम-विज्ञान नमः परम-संयम ।
नमः परमदृग्दृष्ट-परमार्थाय तायिने ॥२८॥
नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ललेश्यांशक-स्पृशे ।
नमो भव्येतरावस्थाव्यतीताय विमोक्षिणे ॥२९॥
संज्ञ्यसंज्ञिद्वयावस्थाव्यतिरिक्तामलात्मने ।
नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायिकदृष्टये ॥३०॥
अनाहाराय तृप्ताय नमः परमभाजुषे ।
व्यतीताशेषदोषाय भवाब्धेः पारमीयुषे ॥३१॥
अजराय नमस्तुभ्यं नमस्ते स्तादजन्मिने ।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने ॥ ३२॥
अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावका गुणाः ।
त्वां नामस्मृतिमात्रेण पर्युपासिसिषामहे ॥३३॥
एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः ।
पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्रं पाप-शान्तये ॥३४॥

इति प्रस्तावना

प्रसिद्धाष्ट-सहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरां पतिम् ।
नाम्नामष्टसहस्रेण तोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ॥१॥

श्रीमान्स्वयम्भूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः।
स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥२॥
विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः।
विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनश्वरः ॥३॥
विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः।
विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥४॥
विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः।
विश्वदृग् विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥५॥
जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः।
अनन्तजिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥६॥
युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः।
परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥७॥
स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः।
मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥८॥
प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥९॥
शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः।
सिद्धः सिद्धान्तविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥१०॥

सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥११॥

विभावसुरसम्भूष्णुः स्वयम्भूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥१२॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

[प्रत्येक शतकके अन्तमे 'उदकचंदनतंदुल' आदि श्लोक पढकर अर्घ्य चढाना चाहिए ।]

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।
पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥ १ ॥

श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥

अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयम्बुद्धः प्रजापतिः ।
मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥

निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिरनामयः ।
अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ४ ॥

अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।
शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥ ५ ॥

वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः ।
वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥ ६ ॥

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः ।
निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥ १ ॥

सिद्धिदः सिद्धसङ्कल्पः सिद्धात्मा सिद्धसाधनः ।
बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ॥ २ ॥

वेदाङ्गो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांवरः ।
वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥ ३ ॥

अनादिनिधनोऽव्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः ।
युगादिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥ ४ ॥

अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक् ।
अनिन्द्रियोऽहमिन्द्रार्च्यो महेन्द्रमहितो महान् ॥ ५ ॥

उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः ।
अग्राह्यो गहनं गुह्यं परार्घ्यः परमेश्वरः ॥ ६ ॥

अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः ।
प्राग्र्यः प्राग्रहरोऽभ्यग्रः प्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रजः ॥ ७ ॥

महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः ।
महायशा महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥ ८ ॥

महाधैर्यो महावीर्यो महासम्पन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥ ९ ॥

महामतिर्महानीतिर्महाक्षान्तिर्महादयः ।
महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकविः ॥ १० ॥
महामहा महाकीर्तिर्महाकान्तिर्महावपुः ।
महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ॥ ११ ॥
महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकः ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥ ५ ॥ अर्घ्यम् ।

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः ।
महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥ १ ॥
महाव्रतपतिर्मह्यो महाकान्तिधरोऽधिपः ।
महामैत्री महामेयो महोपायो महोमयः ॥ २ ॥
महाकारुणिको मन्ता महोमन्त्रो महायतिः ।
महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ॥ ३ ॥
महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् ।
महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥ ४ ॥
महाक्लेशाङ्कुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥ ५ ॥
महाभवाब्धिसन्तारिर्महामोहाद्रिसूदनः ।
महागुणाकरः क्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ॥ ६ ॥

महाध्यानपतिर्ध्यातमहाधर्मा महाव्रतः ।
महाकर्मारिहाऽऽत्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥७॥
सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः ।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥८॥
सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः ।
दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥
प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः ।
प्रक्षीणबन्धः कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥१०॥
प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः ।
प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥११॥
आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः ।
कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिञ्जयः ॥१२॥

इति महामुन्यादिशतम ॥ ६ ॥ अर्घ्यम् ।

असंस्कृतसुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतान्तकृत् ।
अन्तकृत्कान्तगुः कान्तश्चिन्तामणिरभीष्टदः ॥ १ ॥
अजितो जितकामारिरमितोऽमितशासनः ।
जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः ॥२॥
जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः ।
महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ॥३॥

नाभेयो नाभिजोऽजातः सुव्रतो मनुरुत्तमः ।
अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः ॥४॥
सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः ।
विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥५॥
क्षेमी क्षेमङ्करोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी ।
अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥६॥
सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥ ७ ॥
सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।
सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः सत्यपरायणः ॥८॥
स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान् दूरदर्शनः ।
अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९॥
सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥१०॥
सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् ।
सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥११॥

इति असस्कृतादिशतम् ॥७॥ अर्घ्यम् ।

बृहद्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।
मनीषी धिषणो धीमांञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ॥१॥

नैकरूपो नयोत्तुङ्गो नैकात्मा नैकधर्मकृत् ।
अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥ २ ॥
ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः ।
पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥ ३ ॥
लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता ।
मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीरशासनः ॥ ४ ॥
धर्मयूपो दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः ।
धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥ ५ ॥
अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः ।
सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥ ६ ॥
सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः ।
अलेपो निष्कलङ्कात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥
वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः ।
प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मङ्गलं मलहानघः ॥ ८ ॥
अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः ।
अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ॥ ९ ॥
अध्यात्मगम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः ।
सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥ १० ॥

शङ्करः शंवदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥ ११ ॥
त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मङ्गलोदयः ।
त्रिजगत्पतिपूज्यांघ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥ १२ ॥

इति बृहन्नादिशतम् ॥ ८ ॥ अर्घ्यम् ।

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः ।
सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥ १ ॥
पुराणः पुरुषः पूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः ।
आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥ २ ॥
युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः ।
कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥ ३ ॥
कल्याणप्रकृतिर्दीप्रकल्याणात्मा विकल्मषः ।
विकलङ्कः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥ ४ ॥
देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥ ५ ॥
चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥ ६ ॥
आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥ ७ ॥

तपनीयनिभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनलप्रभः ।
सन्ध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥ ८ ॥
निष्टप्तकनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः
हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ॥ ९ ॥
द्युम्नाभो जातरूपाभस्तप्तजाम्बूनदद्युतिः ।
सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ॥१०॥
शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः ।
शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥११॥
शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः ।
शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्तिमान्कामितप्रदः ॥१२॥
श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
सुस्थिरः स्थावर स्थाणुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ॥१३॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥ ९ ॥ अर्घ्यम् ।

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः ।
निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥
तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।
तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिमूर्तिस्तमोपहः ॥ २ ॥
जगच्चूडामणिर्दीप्तः शंवान्विघ्नविनायकः ।
कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ॥ ३ ॥

समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः ।
सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥१३॥
शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।
धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ॥१०॥ अर्घ्यम् ।

धाम्नां पते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥
गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।
स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं भजेत् ॥२॥
त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक् ।
त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥३॥
त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् ।
त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यङ्गः स्वोत्थानन्तचतुष्टयः ॥४॥
त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः ।
षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ॥५॥
दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः ।
दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥६॥
युष्मन्नामावलीदृब्धविलसत्स्तोत्रमालया ।
भवन्तं परिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥७॥

इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः ।
यः सपाठं पठत्येन स स्यात्कल्याणभाजनम् ॥८॥

ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधीः ।
पारुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥९॥

स्तुत्वेति मघवा देवं चराचरजगद्गुरुम् ।
ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥१०॥

स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः ।
निष्ठितार्थो भवास्तुत्यः फलं नैश्रेयसं सुखम् ॥११॥

यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित् ।
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित् ॥
यो नेतृन् नयते नमस्कृतिमलं नन्तव्यपक्षेक्षणः
स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च गुरुर्देवः पुरुः पावनः ॥१२॥

तं देवं त्रिदशाधिपार्चितपदं घातिक्षयानन्तर-
प्रोत्थानन्तचतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जिनीनामिनम् ।
मानस्तम्भविलोकनानतजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं
प्राप्ताचिन्त्यबहिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवन्दामहे ॥१३॥

[पुष्पाजलिं क्षिपामि ।]

०

श्री पंच परमेष्ठी पूजन

[राजमल पवैया भोपाल]

अर्हंत सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन।
जय पंच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारण हार नमन॥
मन वच काया पूर्वक करता, हूँ शुद्ध हृदय से आवाहन।
मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन।
निज आतम तत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन।
तव चरणों के पूजन से प्रभु निज सिद्ध रूप का हो दर्शन॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हन्त—सिद्ध—आचार्य—उपाध्याय—सर्वसाधु पंच परमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री अर्हन्त—सिद्ध—आचार्य—उपाध्याय—सर्वसाधु पंच परमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।

ॐ ह्रीं श्री अर्हन्त—सिद्ध—आचार्य—उपाध्याय—सर्वसाधु पंच परमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ।
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भरकर लाया हूँ॥
मैं जन्म जरा मृत नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री पंच परमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलम्०

संसार ताप मे जल जल कर, मैंने अगणित दुख पाए हैं।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाए हैं॥
शीतल चंदन है भेंट तुम्हे, संसार ताप नाशो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री ·····पंच परमेष्ठिभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदन०

दुख मय अथाह भव सागर मे, मेरी यह नौका भटक रही।
शुभ अशुभ भाव की भँवरों में, चैतन्य शक्ति निज अटक रही॥

तदुल है धवल तुम्हे अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अतर्यामी ॥
ॐ ह्री श्री पच परमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्०
मै काम व्यथा से घायल हूं, सुख की न मिली किंचित् छाया।
चरणो मे पुष्प चढाता हूं, तुमको पाकर मन हर्षाया॥
मै काम भाव विध्वंस करू, ऐसा दो शील हृदय स्वामी।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अतर्यामी॥
ॐ ह्री श्री पच मेष्ठिभ्यो कामवाणविध्वसनाय पुष्प०।
मै क्षुधा रोग से व्याकुल हूं चारो गति मे भरमाया हूं।
जगके सारे पदार्थ पाकर भी तृप्त नही हो पाया हू॥
नैवेद्य समर्पित करता हूं, यह क्षुधा रोग मेटो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अतर्यामी॥
ॐ ह्री श्री ·· पच परमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य०।
मोहान्ध महाअज्ञानी मै, निज को पर का कर्त्ता माना।
मिथ्यातम के कारण मैने, निज आत्म स्वरूप न पहचाना॥
मै दीप समर्पण करता हूं, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अंतर्यामी॥
ॐ ह्री श्री · पच परमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप०।
कर्मों की ज्वाला धधक रही ससार बढ रहा है प्रतिपल।
सवर से आश्रव को रोकूं, निर्जरा सुरभि महके पल पल॥
मै धूप चढ़ा कर अब आठो, कर्मों का हनन करू स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अतर्यामी॥
ॐ ह्री श्री· ·· ·पच परमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूप०।

निज आत्म तत्त्व का मनन करूं, चिंतवन करूं निज चेतन का।
दो श्रद्धा ज्ञान चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का।।
उत्तम फल चरण चढ़ाता हूं, निर्वाण महाफल हो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अंतर्यामी।।

ॐ ह्री श्री……पच परमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल०।

जल चंदन अक्षत पुष्प दीप नैवेद्य धूप फल लाया हूं।
अब तक के संचित कर्मों का मैं पुंज जलाने आया हूं।।
यह अर्घ समर्पित करता हूं अविचल अनर्घपद दो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अतर्यामी।।

ॐ ह्री श्री……पच परमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं।

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अर्हंत देव को नमस्कार।।
अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरंजन निराकार।
जय अजर अमर हे मुक्तिकंत भगवत सिद्ध को नमस्कार।।
छत्तीस सुगुण से तुम मडित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार।
हे मुक्ति वधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार।।
एकादश अंग पूर्व चौदह के पाठी गुण पच्चीस धार।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान् श्री उपाध्याय को नमस्कार।।
व्रत समिति गुप्ति चारित्र प्रबल वैराग्य भावना हृदय धार।
हे द्रव्य भाव सयम मय मुनि वर सर्व साधु को नमस्कार।।
बहु पुण्य सयोग मिला नरतन जिनश्रुत जिन देव चरण दर्शन।
हो सम्यक दर्शन प्राप्त मुझे तो सफल बने मानव जीवन।।
निज पर का भेद जानकर मैं निज को ही निज मे लीन करू।
अब भेद ज्ञान के द्वारा मैं निज आत्म स्वय स्वाधीन करूं।।

निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परणति को ही पहचानूं।
पर परणति से हो विमुख सदा निजज्ञान तत्त्व को ही जानूं॥
जब ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प तज, शुक्ल ध्यान मैं ध्याऊंगा।
तब चार घातिया क्षय करके अर्हंत महापद पाऊंगा॥
है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा हे प्रभु कब इसको पाऊंगा।
सम्यक् पूजा फल पाने को अब निज स्वभाव में आऊंगा॥
अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु हे प्रभु मैंने की है पूजन।
तब तक चरणों में ध्यान रहे जब तक न प्राप्त हो मुक्ति सदन

ॐ ह्रीं श्री अर्हंत—सिद्ध—आचार्य—उपाध्याय—सर्वसाधु पंच परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूं।
मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल, नवकार मंत्र का ध्यान करूं॥

[पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

समाधि भावना

भक्ष अभक्ष्य

जो पदार्थ भक्षण करने—खाने योग्य नही होते है उन्हे अभक्ष्य कहते हैं। इसके पाँच भेद हैं—त्रस हिंसाकारक, वहुस्थावर हिंसाकारक, प्रमादकारक, अनिष्ट और अनुपसेव्य।

(१) जिस पदार्थ के खाने से त्रस जीवो का घात होता हैं उसे त्रस हिंसाकारक अभक्ष्य कहते हैं। जैसे—पच उदम्बर फल, घुना अन्न, अमर्यादित वस्तु जिनमे वरसात मे फफूदी लग जाती है ऐसी कोई भी खाने की चीजें, चौवीस घन्टे के बाद का मुरब्बा, अचार, वडी, पापड और द्विदल आदि के खाने से त्रस जीवो का घात होता है। कच्चे दूध मे या कच्चे दूध से वने हुए दही मे दो दाल वाले मूग, उडद, चना आदि अन्न की वनी चीज मिलाने से द्विदल वनता है।

(२) जिस पदार्थ के खाने से अनत स्थावर जीवो का घात होता है उसे स्थावर हिंसाकारक अभक्ष्य कहते हैं। जैसे—प्याज, लहसन, आलू, मूली आदि कदमूल तथा तुच्छ फल खाने से अनतो स्थावर जीवो का घात हो जाता है।

एक निगोदिया जीव के शरीर मे अनतानत सिद्धो से भी अनतगुणे जीव रहते हैं और एक आलू आदि मे अनत निगोदिया जीव हैं। इसलिए इन कदमूल आदि का त्याग कर देना चाहिए।

(३) जिसके खाने से प्रमाद या काम विकार वढता है वे प्रमादकारक अभक्ष्य हैं। जैसे—शराव, भग, तम्बाकू, गाजा; और अफीम आदि नशीली चीजें। ये स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक हैं।

(४) जो पदार्थ भक्ष्य होने पर भी अपने लिए हितकर न हो वे अनिष्ट हैं। जैसे—बुखार वाले को हलुआ एव जुकाम वाले को ठण्डी चीजें हितकर नही है।

(अनुपसेव्य) जो पदार्थ सेवन करने योग्य न हो वे अनुपसेव्य हैं। जैसे—
[illegible], मूत्र आदि पदार्थ।

अभक्ष्य बाईस भी माने गये हैं—

ओला घोर बड़ा निशि भोजन, बहुबीजा बैंगन सधान ।
बड़ पीपर ऊमर कठऊमर, पाकर फल या होय अजान ॥
कन्दमूल माटी विष आमिष, मधु माखन अरु मदिरापान ।
फल अतितुच्छतुषार चलित रस, ये बाईस अभक्ष्य बखान ॥

ओला, दहीवडा (कच्चे दूध से जमाये दही का वडा), रात्रि भोजन बहुबीजा, बैंगन अचार (चौबीस घण्टे बाद का), बड, पीपल, ऊमर, कठूमर, पाकर, अजानफल (जिसको हम पहचानते नहीं ऐसे कोई फल पत्ते आदि), कन्दमूल (मूली, गाजर आदि जमीन के भीतर लगने वाले), मिट्टी, विष (सखिया, धतूरा आदि), आमिष-मांस, शहद, मक्खन, मदिरा, अतितुच्छ फल (जिनमें बीज नहीं पड़े हो ऐसे बिलकुल कच्चे छोटे-छोटे फल), तुषार-बर्फ और चलित रस (जिनका स्वाद-बिगड जावे ऐसे फटे हुए दूध आदि) ये सब अभक्ष्य हैं।

दही बिलोने के बाद मक्खन को निकाल कर ४८ मिनट के अदर ही गर्म कर लेना चाहिए अन्यथा वह अभक्ष्य हो जाता है। अथवा कच्चे दूध से भी जो यत्र से मक्खन निकाला जाता है उसमे भी कच्चे दूध की मर्यादा ४८ मिनट की है। उसी मर्यादा के अन्दर मक्खन निकाल कर जल्दी से गर्म करके घी बना लेना चाहिए ।

बाजार की बनी हुई चीजो में मर्यादा आदि का विवेक न रहने से, अनछने जल आदि से बनाई होने से सब अभक्ष्य हैं। अर्क, आसव, शर्बत आदि तो अभक्ष्य हैं। चमड़े में रखे घी, हींग, पानी आदि भी अभक्ष्य हैं। इसलिए इन अभक्ष्यो का त्याग कर देना चाहिए ।

मै तुम चरण कमल गुणगाय, बहु-विधि भक्ति करी मनलाय।
जनम-जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवाफल दीजै मोहि ।४२।

दोघकांत बेसरी छद—षट्पद ।

इहविधि श्री भगवत, सुजस जे भविजन भाषहिं।
ते जिन पुण्यभडार, संचि चिर-पाप प्रणासहिं ॥
रोम-रोम हुलसति, अग प्रभु-गुण मन ध्यावहिं।
स्वर्ग संपदा भुंज वेग पचमगति पावहिं ॥४३॥

यह कल्याणमंदिर कियो, कुमुदचंद्रकी वुद्धि।
भाषा कहत 'बनारसी' कारण समकित-शुद्धि ॥४४॥

इस प्रकार कल्याणमन्दिर का कविवर बनारसीदास जी कृत भाषानुवाद समाप्त हुआ।

आचार्य वादिराज

आपकी गणना महान् आचार्यों मे की जाती है। आप महान् वादी विजेता और कवि थे। आपकी पार्श्वनाथ चरित्र, यशोधर चरित्र, एकीभाव स्तोत्र, न्याय विनिश्चय विवरण, प्रमाण निर्णय ये पाच कृतियाँ प्रसिद्ध है। आपका समय विक्रम की ११वी शताब्दी माना जाता है। आपका चौलुक्य नरेश जयसिंह (प्रथम) की सभा मे बडा सम्मान था। 'वादिराज' यह नाम नही वरन् पदवी है। प्रख्यात वादियो मे उनकी गणना होने से वे वादिराज के नाम से प्रसिद्ध हुए।

निस्पृही आचार्य श्री वादिराज ध्यान मे लीन थे। कुछ द्वेषी व्यक्तियो ने उन्हे कुष्ट-ग्रस्त देखकर राजसभा मे जैनमुनियो का उपहास किया जिसे जैनधर्म प्रेमी राजश्रेष्ठी सहन न कर सके और भावावेश मे कह उठे कि हमारे मुनिराज की काया तो स्वर्ण जैसी सुन्दर होती है। राजा ने अगले दिन महाराज के दर्शन करने का

विचार रखा। सेठ ने महाराज से सारा विवरण स्पष्ट कह कर धर्मरक्षा की प्रार्थना की। महाराज ने धर्म रक्षा और प्रभावना हेतु एकीभाव स्तोत्र की रचना की जिससे उनका शरीर वास्तव में स्वर्ण सदृश हो गया। राजा ने मुनिराज के दर्शन करके और उनके रूप को देखकर चुगल-खोरों को दण्ड दिया। परन्तु उत्तम क्षमाधारक मुनिराज ने राजा को सब बात समझा कर तथा सबका भ्रम दूर कर सबको क्षमा करा दिया। इस स्तोत्र का श्रद्धा एवं पूर्ण मनोयोग पूर्वक पाठ करने से समस्त व्याधियां दूर होती हैं तथा सारी मना-कामनाएं पूर्ण होती हैं।

एकीभावस्तोत्र भाषा

कविवर भूधरदास जी कृत भाषानुवाद

दोहा—वादिराज मुनिराजके, चरणकमल चित लाय।
भाषा एकीभावकी, करूँ स्वपर सुखदाय ॥१॥

रोला छन्द अथवा "अहो जगत गुरुदेव०" विनती की चालमें।

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी।
सो मुझ कर्मप्रबंध करत भव भव दुख भारी ॥
ताहि तिहारी भक्ति जगतरवि जो निरवारै।
तो अब और कलेश कौन सो नाहिं विदारै ॥१॥
तुम जिन जोतिस्वरूप दुरित अँधियारि निवारी।
सो गणेश गुरु कहैं तत्त्व-विद्याधन-धारी ॥
मेरे चित घर माहिं बसौ तेजोमय यावत।
पापतिमिर अवकाश तहां सो क्योंकरि पावत ॥२॥
आनद-आंसू-वदन धोय तुमसों चित आने।
गदगद सुरसों सुयश मन्त्र पढ़ि पूजा ठाने ॥

